काली कवि और उनका काव्य

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी

पी० एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

—शोध प्रबन्ध—
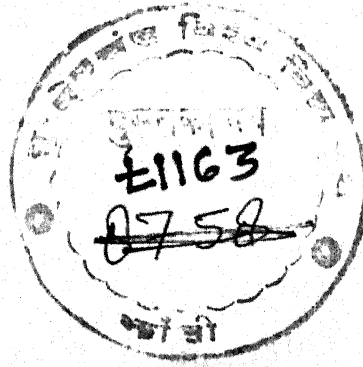
निदेशक—

डॉ० रामस्वरुप खरे

एम० ए०, पी-एच० डी०

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर

महाविद्यालय, उरई (उ० प्र०)

अनुसंधित्सु—

ओम प्रकाश खरे

एम० ए०
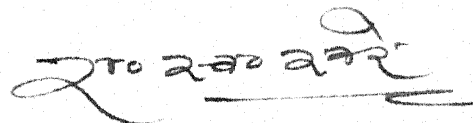
-: प्रमाण - पत्र :-

प्रमाणित किया जाता है कि श्री ओम प्रकाश खरे ने मेरे निर्देशन में हिन्दी विषयान्तर्गत "काली कवि और उनका काव्य" शोध प्रबन्ध पूर्ण कर लिया है। इसमें उन्होंने एक विलुप्त काव्य-प्रतिभा के मस्तक पर सारस्वत मुकुट रखने का प्रयास किया है। वे अपने इस प्रयास में पूर्ण रूपेण मौलिक हैं।

काली कवि बुन्देलखण्ड के पद्माकर हैं। अनुसंधित्सु ने यह भली प्रकार सिद्ध कर दिया है। उसके परिश्रम के प्रति मैं आश्वस्त हूँ।

नियमान्तर्गत शोधार्थी ने दो सौ दिन उपस्थित रहकर यह सफलता प्राप्त की है। अतएव मैं पी-एच0डी0 की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की संस्तुति करता हूँ।

डा0 रा0 स्व0 खरे

श्री गुरु पूर्णिमा,
11-7-87

[डॉ0 राम स्वरूप खरे]
एम0ए0, पी-एच0डी0
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
उरई [उ0प्र0].

स म र्प ण

ब्रह्मलीन महात्मा श्री श्री भवानी शंकर जी

महाराज की पावन स्मृति में

सश्रद्धा भेंट ।

भक्त - पद - रजाभिलाषी -

ओम प्रकाश
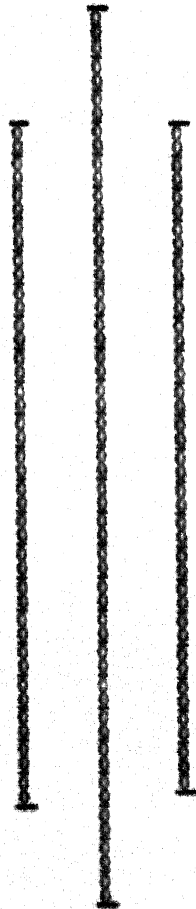
प्राक्कथन

मेरा जन्म स्थान बुन्देलखण्ड है । अस्तु, बुन्देलखण्ड की धरती से अपनत्व होना स्वाभाविक है । यही कारण है कि यहाँ के नद-नदी, पर्वत शिखिर, सरोवर, ताल-तलैयाँ, करौंदी के कुंज, महुवा के मधुवन, हाट-बाट, प्राचीन स्मारक, सती-चौरा, मन्दिर, तीज-त्योहार,पर्व-उत्सव, देवी-देवता, लोक साहित्य, ऐतिहासिक दुर्ग आदि इन सभी के प्रति मेरा मस्तक श्रद्धा से नत हो उठता है ।

सन् 1900 ई0 में संस्थापित हिन्दी की सुप्रसिद्ध पत्रिका सरस्वती पढ़ रहा था । उसमें प्रोफेसर सा0 का लेख "बुन्देलखण्ड के अल्पज्ञात कवि" पढ़ा । बार-बार उनसे मिलने के लिये मन छटपटाने लगा । एम0ए0 करने के उपरान्त अन्तर के कोने में एक क्षीण रेखा-सी चमक रही थी । काश, मैं भी शोध कार्य कर सकता । अतएव उरई पहुँचकर अपनी व्यथा-कथा सुनाई । यह सन् 1980 की बात है । प्रोफेसर सा0 के यहाँ काव्य गोष्ठी चल रही थी । उस गोष्ठी में ब्रजभाषा के प्राचीन अर्वाचीन कवियों की घनाक्षरियाँ एवं दोहे भी बाद में सुनाये गये । यहीं मैंने कालीकवि द्वारा प्रणीत "हनुमत्पताका" "गंगा गुण मंजरी" के कवित्त तथा "छविरत्नम"के दोहे सुने । बड़ा आनन्द आया । गोष्ठी के पश्चात् मैंने अपना मन्तव्य कह सुनाया कि बुन्देलखण्ड के कवियों पर शोध कार्य करने की मेरी इच्छा है । क्या इस विषय से सम्बन्धित कोई विषय आप द्वारा नहीं दिया जा सकता है?

"मधुरयन्दी" मासिक में भी बुन्देलखण्ड के वर्तमान कवियों पर कुछ न कुछ प्रकाशित होता रहता था । सागर विश्वविद्यालय से भी कतिपय पुस्तकें बुन्देली भाषा और काव्य पर पढ़ने को प्रोफेसर

साहब ने मुझे "काली कवि और उनका काव्य" विषय शोध हेतु निर्देशित किया । बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय ने उसे स्वीकार भी कर लिया ।

अनेकानेक संघर्षों के झूला में झूलने के पश्चात् कार्य करने को कटिबद्ध हो गया । सम्पूर्ण शोध प्रबन्ध की सामग्री को एकादश अध्यायों में विभक्त किया गया है । प्रथम अध्याय में जनपद जालौन का संक्षिप्त परिचय"प्रस्तुत किया गया है । द्वितीय अध्याय में "तत्कालीन युगीन परिस्थितियों का विश्लेषण"प्रस्तुत किया गया है। तृतीय अध्याय"कवि के पूर्वजों के जन्म स्थान"आदि से सम्बन्ध रखता है । चतुर्थ अध्याय"कवि काली के शैशव, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, दाम्पत्य-जीवन, शिक्षा-दीक्षा, कवि की वेश-भूषा, स्वभाव, रूचियाँ, काव्य के प्रेरक, कवि जीवन के प्रमुख कार्य, सन्तान एवं मरण से संबंधित" है । पंचम अध्याय में काव्य के स्वरूप को स्पष्टतया समझाने के लिए महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक, काव्य आदि काव्य-रूपों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है । षष्ठ अध्याय में कवि की प्रथम प्रकाशित कृति "हनुमत्पताका" का सांगोपांग विवेचन है । सप्तम अध्याय में उनकी द्वितीय प्रकाशित कृति "गंगा गुण मंजरी" का शोधात्मक एवं कलात्मक विवेचन किया गया है । अष्टम् अध्याय में उनकी तृतीय प्रकाशित कृति "छवि रत्नम्" का भाव एवं कला पक्ष का उद्घाटन किया गया है । नवम् अध्याय"कवि की अप्रकाशित कृतियों"से सम्बन्धित है । दसम् अध्याय में "हिन्दी काव्य को कवि की देन" पर प्रकाश डाला गया है । उपसंहार के रूप में अन्तिम अध्याय एकादश अध्याय है । इसमें हिन्दी काव्य साहित्य में नागर जी का स्थान निर्धारित किया गया है ।

अन्त में तीन परिशिष्ट हैं जिनमें क्रमशः कवि की वंशावली, हस्तलिखित काव्य रचनायें, कवि का चित्र संकलित है । द्वितीय परिशिष्ट में कवि की प्रकाशित तीनों कृतियों का शुद्ध एवं प्रामाणिक संकलन है ।

तृतीय परिशिष्ट में सन्दर्भित ग्रन्थों की अनुक्रमणिका अंकित की गई है । पत्र-पत्रिकाओं की सूची भी इसी में सम्मिलित है ।

इस प्रकार समूचे शोध प्रबन्ध को अधिकारिक प्रामाणिक, मौलिक एवं उपादेय बनाने की प्रयास किया गया है ।

किन्तु यह सच है कि यदि मुझे डॉ० रामस्वरूप खरे का स्नेह और शुभाशीष न मिलता तो इतने गुरुतम कार्य को इस प्रकार सहज रूप में प्रस्तुत न कर पाता । उनका विद्वता पूर्ण दिशा-निर्देश मेरी शोध का मील का पत्थर सिद्ध हुआ । उनकी इस महती कृपा के समक्ष नत मस्तक हूँ ।

मेरी अर्धांगिनी श्रीमती सरोज ने जो मौन साधन की, उसके लिये क्या कहूँ । नारी तो क्षमाशील और अत्यन्त सहनशीलता होती ही है । उन्होंने अपने स्वाभाविक गुणों के द्वारा मेरा समय-समय पर उत्साह वर्धन करते हुए जो कान्ता सम्मत उपदेश दिया, वह पदे-पदे परिलक्षित है । चिरंजीव अशोक का चांचल्य तो क्षम्य है ही ।

डॉ० ब्रजवासीलाल श्रीवास्तव पूर्व उपकुलपति बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय,झाँसी, डॉ० गनेशी लाल बुधौलिया, डॉ० श्याम सुन्दर बादल{राठ} एवं डॉ०नर्मदा प्रसाद गुप्त सभी महानुभावों का हृदय से कृतज्ञ हूँ ।

कविवर योगेश्वरी प्रसाद "अलि" अरुण कुमार नागर"अरुण" महानिदेशक महाकवि कालो कला शोध केन्द्र उरई, आर्या "प्रहरी", असीम मधुपुरी का किस रूप में अभिनन्दन करूँ । निःसन्देह ये सब अत्यन्त सहृदय, परोपकारी एवं मार्गदर्शक रहे है । इन सबको सादर नमन ।

चिरंजीव आशोन्द्र ने टंकण कार्य करके जो सहयोग प्रदान किया, उसे कभी भुलाया न जा सकेगा ।

पुनश्च वे सभी महानुभाव भी मेरी धृष्टता क्षमा करेंगे जिनके प्रत्यक्ष-परोक्ष सहयोग एवं महती कृपा से यह शोध-कार्य पूरा हो सका ।

अपने सहकर्मी साथियों और अन्यान्य स्वजन-वृन्द सी गई, उनके प्रति भी अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ ।
किमधिकम् ।

श्री गुरु पूर्णिमा
11 जौलाई 1987

विनयावनत

ओम प्रकाश खरे

जनपद जालौन का परिचय

1.1 ऐतिहासिक

1.2 भौगोलिक

1.3 राजनीतिक

1.4 सांस्कृतिक एवं साहित्यिक

1.1 भिन्न-भिन्न प्रदेशों की भाँति बुन्देलखण्ड कोई प्रशासनिक प्रदेश नहीं है वरन् भाषा एवं संस्कृति की दृष्टि से यहाँ के मनुष्यों ने स्वीकार किया है। प्रसिद्ध इतिहासकार वी0ए0 स्मिथ की धारणा है कि आधुनिक बुन्देलखण्ड से उस सम्पूर्ण क्षेत्र का बोध होता है जिसमें चन्देल शासकों ने राज्य किया था ।[1] बुन्देलखण्ड का अस्तित्व चन्देल शासकों के पश्चात् लगभग सन् 1335 ईस्वी में प्रारम्भ हुआ जब इस प्रदेश पर बुन्देल राजपूतों का आगमन हुआ । बुन्देलखण्ड नाम से पूर्व इस भू-भाग के कई नाम ज्ञात हुए है । महाभारत काल में यह दशार्ण नाम से विख्यात था । भविष्यपुराण में इसके मध्यवर्ती भाग का नाम पद्मावती मिलता ह । पुराणों में इसका नाम मध्यदेश भी प्राप्त होता है । मध्य प्रदेश में यमुना का सम्पूर्ण दक्षिणी भाग शामिल था ।[2] महाराज मनु ने अपनी सुप्रसिद्ध कृति[3] में कहा है "सरस्वती नदी से पूर्व और प्रयाग से पश्चिम हिमालय और विंध्य का मध्यदेश "मध्यदेश" के नाम से अभिहित था । इस क्षेत्र का नाम पुरा ग्रन्थों में "जैजाक भुक्तिक" भी मिलता है।"[4] स्कन्दपुराण के कुमारखण्ड अध्याय 39 में भारत वर्ष के एक प्रदेश का नाम "जैहाहुति" है । उसके आस-पास कान्तिपुर, चेदि और मालव बतलाये गये हैं । संभवतः प्राचीन "जहाहुति" ही आधुनिक बुन्देलखण्ड है ।[5]

---

1. इंडियन एन्टीक्वेरी, 1908 भाग 37 पृष्ठ 130.
2. बुन्देली लोक साहित्य, डॉ0 रामस्वरूप श्रीवास्तव "स्नेही" प्र0सं0 1976 पृष्ठ 1.
3. हिमवद्विन्ध्य योर्मध्ये यत्प्राग्विनशनादपि ।
   प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः ।। मनु0 2/21
4. ई0आई0 भा 1, पृष्ठ 35.
5. मध्ययुगीन भारत, भाग - 3, पृष्ठ - 49.

इस सन्दर्भ में कतिपय किम्बदन्तियाँ भी प्रचलित है । गोरेलाल तिवारी के मतानुसार "अलबत्ता ऐसा हो सकता ह कि इनके पूर्व पुरुषों ने विंध्यवासिनी देवी की उपासना की है । इसी से "बुन्देलों" नाम प्रचलित होगया है जो विंध्य से बहुत कुछ सम्बन्ध रखता है ।[6] एक दन्तकथा के अनुसार बुन्देलों की उत्पत्ति काशी के गहरवार वंश से मानी गई है जो भगवान राम के पुत्र कुश के वंशात्मज माने जाते हैं । कहा जाता है कि लव के वंशज करिराज ने पंडितों की सलाह से अशुभ ग्रहों की शान्ति करवाई जिससे यह ग्रहनिवार अथवा गहरवार कहलाये । एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में भी बुन्देलों को गहरवार अथवा चन्देल वंशिय माना गया है ।[7] जब महाराज हेमकरन ‖या वीर पंचम‖ छीने हुये राज्य प्राप्ति के लिये विंध्यवासिनी देवी को प्रसन्न करने के लिए आत्मोत्सर्ग हेतु तलवार उठाई तो मस्तक में खरोंच लगने के कारण रक्त का एक सजल बिन्दु पृथ्वी पर आ गिरा । फलस्वरूप वीर पंचम की संतति "बुन्देला" क्षत्रिय के नाम से प्रसिद्ध हुई ।[8] इससे स्पष्ट है कि गहरवार विंध्यवासी हो जाने के कारण विन्ध्येले विन्देले बुन्देले क्योंकि विन्दु से बूँद और बुन्द होना कोई अस्वाभाविक नहीं ‖कहलाये । उदाहरणार्थ पहाड़ पर रहने वाले पहाड़ी मारवाड़ निवासी मारवाड़ी तथा रोह पर्वत के निवासी "रुहेले" ।" बुन्देल राजपूतों का शासन इस भू-भाग पर अधिक समय तक रहा इससे इसका नाम बुन्देलखण्ड पड़ना स्वाभाविक ही है । यह प्रवृत्ति अन्य क्षेत्रों के नामकरण में देखी जा सकती है । जैसे बघेलों से बघेलखण्ड और रुहेलों से रुहेलखण्ड ही नहीं जाति के आधार पर जटवारी, भदावर, सिकरवार, तवरघार आदि नाम भी पड़ गए ।[9]

---

6. बुन्देलखण्ड का इतिहास, गोरेलाल तिवारी, पृष्ठ 114.
7. एनसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटानिका, खण्ड 4, पृष्ठ 382.
8. बुन्देली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन, डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल,पृ० 2.
9. बुन्देली लोक साहित्य, डॉ० रामस्वरूप श्रीवास्तव "स्नेही" पृष्ठ:3.

महाराजा छत्रसाल के राजकवि की भी यही धारणा है ।[10] इस भू-भाग में बुन्देल राज्य के संस्थापक वीर पंचम की चौथी पीढ़ी में राजा अर्जुन पाल महौनी आए और उनके पुत्र सोहनलाल ने संवत् 1313 में खँगारों से झाँसी के आस-पास का राज्य छीन लिया । गढ़कुंडार से राजधानी ओरछा में संवत् 1596 विक्रम में आई । संवत् 1822 में लिधौरा और फिर टीकमगढ़ पहुँची । बुन्देले लोग सर्वप्रथम यमुना के दायें किनारे पर बसे । आगे चलकर इन्होंने ओरछा पर अधिकार कर लिया था । ओरछा स्टेट गजेटियर से पता चलता है कि शेरशाह ने कालिंजर पर आक्रमण करने के समय ओरछा के राजा भारतीचन्द्र ने अपने भाई मधुकर शाह को उसका सामना करने भेजा था । इस प्रकार यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि "बुन्देलों का राज्य बारहवीं शताब्दी से प्रारम्भ होकर अठारहवीं शताब्दी तक विशृंखलित रूप में चलता रहा और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व छोटे-छोटे जागीरदार बने हुए इस क्षेत्र पर शासन करते रहे हैं । अतः बुन्देलों के साथ बुन्देलखण्ड का नाम जुड़ना समुचित जान पड़ता है ।[11अ] पुनश्च जजाहुती की स्मृति में "आज भी बुन्देलखण्ड के ब्राह्मणों" और वैश्यों की एक जाति जजाहुतिया या जुझौतिया नाम से पुकारी जाती है । महोबा के पीर मुहम्मदशाह की दरगाह में लगे पत्थर पर खुदे हुए लेख की पंक्ति 6 से भी यह नाम स्पष्ट होता है । अतएव इन सब प्रमाणों से सिद्ध हो जाता है कि समय-समय पर इस भू-भाग का नाम दशार्ण, वज्र, जैजाक, पुलिंद, जुझौती, जुझारखण्ड तथा विंध्येलखण्ड भी रहे हैं । ऐसी भी प्रतीत होता है कि विंध्यवासिनी देवी अथवा विंध्याचल शृंखला में स्थित होने के कारण इस प्रदेश का नाम

---

10. प्रथमहिं राज आपनो पायो, परभव भोगनहार कहायो ।
    यह कह हाथ माथ पर राखे, पुहिमी प्रगट बुन्देला भाखे।।
    -छत्रप्रकाश, सम्पादक-श्याम सुन्दर दास[ना0प्र0स0काशी] पृष्ठ 7.

11[अ]. लोक साहित्य, डॉ0 रामस्वरूप श्रीवास्तव "स्नेही" पृष्ठ 3.

विंध्येलखण्ड पड़ा जो बाद में बुन्देलखण्ड हो गया है । बुन्देलों का कई वर्षों तक शक्तिशाली राज्य होने के कारण बुन्देलखण्ड नामकरण तो निश्चित ही है । इसी ऐतिहासिकता को अपनी गोद में समेटे जिला जालौन आज भी लोक विश्रुत है । यहाँ के ऐतिहासिक एवं दर्शनीय स्थलों में उरई, कोटरा, सैदनगर, एट, अकोढ़ी, जालौन, कंजौसा, जगम्मनपुर, बोमई, कुठौंद, शेखपुर बुजुर्ग, कौंच, गोपालपुरा, पिरौना, मऊ, कालपी, बबीना, कदौरा, इटौरा, परासन तथा चाँदनी आदि प्रसिद्ध हैं ।

1.2 जैजाक भुक्ति की स्थिति इस प्रकार मानचित्र पर 22^0 और 27^0 उत्तरीय अक्षांश तथा 75^0 और 84^0 पूर्वीय भूरेखा उंशों के मध्य में है । इस क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग 51000 वर्ग मील है ।[11ब] जनरल कनिंघम के अनुसार जैजाक भुक्ति साम्राज्य की सीमायें वह समस्त क्षेत्र आ जाता है जो गंगा और यमुना के दक्षिण मेंनर्मदा महानद तक फैला है । आधुनिक सागर और बेलारी जिला भी उसमें आ जाते हैं ।[12] वी०ए० स्मिथ ने भी इस भौगोलिक सीमा को स्वीकार किया है ।[13] पौराणिक मान्यताओं के अनुसार इस सम्बन्ध में प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध होती है । यथा- वैवस्वत मनु की वंश परम्परा में यदु को राज्य विभाजन में चर्मण्यवती, वेत्रवती तथा शुक्तिमती नदियों से अभिसिंचित प्रदेश प्राप्त हुआ । इन्हीं के वंश में महाराजा चिदि हुए जिससे इस वंश का नाम चेदि पड़ा । इस प्रकार चेदि नाम प्रारम्भ में चम्बल और केन के बीच यमुना के दक्षिणी प्रदेश अर्थात् केवल उत्तरी बुन्देलखण्ड का था । आधुनिक बुन्देलखण्ड का दक्षिणी भाग उसमें कब से सम्मिलित हुआ, उसका कोई स्पष्ट ऐतिहासिक निर्देश नहीं मिलता ।[14] स्कन्दपुराण में जाहुति

11(ब). चन्देल और उनका राजत्वकाल, केशवचन्द्र मिश्र, पृष्ठ-6.

12. आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया भाग-2, पृष्ठ-413.

13. एपिग्रेफिया इण्डिका, भाग-30, पृष्ठ-130.

14. इतिहास प्रवेश, जयचन्द विद्यालंकार, पृष्ठ - 95.

क्षेत्र का परिचय इस प्रकार किया गया है —— इस देश की ग्राम संख्या 42 हजार थी । इसके आस-पास कान्तिपुर, कुठवार, चेदि और मालव बतलाये गये हैं । इनकी ग्राम संख्या क्रमानुसार 9 लाख, 9लाख और 1,18,092 बतलाई गई हैं । संभवतः प्राचीन जहाहुति ही आधुनिक बुन्देलखण्ड है ।[15] दीवान प्रतिपाल सिंह ने "बुन्देलखण्ड का इतिहास" में राजा छत्रसाल के समय के बुन्देलखण्ड की सीमा भी इसी प्रकार निर्धारित की है ।[16] बेतवा और केन काठों तथा नर्मदा के उपरले काठे वाला प्रदेश बुन्देलखण्ड है । वस्तुतः यह भौगोलिक सीमा आधुनिक बुन्देलखण्ड की यथार्थ सीमा है ।[17] राजनीतिक विभाजन के अनुसार इस भू-भाग के अन्तर्गत निम्नांकित जिला लिये जा सकते हैं:-

उत्तर प्रदेश :- §1§ जालौन §2§ झाँसी
§3§ हमीरपुर §4§ बाँदा
§5§ ललितपुर ।

मध्यप्रदेश :- §6§ टीकमगढ़ §7§ छतरपुर
§8§ पन्ना §9§ दमोह
§10§सागर §11§नरसिंहपुर
§12§भिण्ड §13§दतिया
§14§ग्वालियर §15§शिवपुरी
§16§मुरेना §17§विदिशा
§18§गुना §19§राजगढ़
§20§रायसेन §21§होशंगाबाद ।

15. मध्ययुगीन भारत, भाग-3, पृष्ठ-49.

16. इत जमुना उत नर्मदा, इत चम्बल उत टौंस ।
छत्रसाल सों लरन की रही न काहू हौंस ।।
उत्तर समथल भूमि गंग,जमुना सुबहति है ।
प्राची दिसि कैमूर सोन,कासी सुलसति है।।
दक्खिनेरण विंध्याचल तन शीतल करनी ।
पच्छिम में चम्बल चंचल सोहत मनहरनी ।।
तिन मधि राचे गिरि वन सरिता सहित मनोहर ।
कीर्ति बुन्देलन की, बुन्देलखण्ड वर ।।

17. भारतभूमि और उसके निवासी, जयचन्द विद्यालंकार, पृष्ठ-65.

इस प्रकार बुन्देलखण्ड के उत्तर में यमुना दक्षिण में नर्मदा, पूर्व में टौंस(तमसा)और पश्चिम में चम्बल नदियाँ स्थित हैं । यह प्रदेश जो इन चार नदियों के बीच -बीच में आया ह, बुन्देलखण्ड माना जाता है ।

सांस्कृतिक एवं भाषा की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए आज का यह बुन्देलखण्ड निश्चित ही अपने प्राचीनतम अवशेषों को सुरक्षित किये हुए गर्वोन्नित है ।

इसी सांस्कृतिक बुन्देलखण्ड प्रदेश का एक जिला है जालौन । आज बुन्देलखण्ड(झाँसी)संभाग के अन्तर्गत केवल पाँच जिला अर्थात् झाँसी,हमीरपुर, बाँदा, ललितपुर और जालौन ही प्रशासनिक इकाई के रूप में स्वीकार किये जाते हैं । जिला के रूप में यह सन् 1940 ईस्वी में निर्मित हुआ । इसके पूर्व यह भाग मराठों के आधीन था । सन् 1981 की जनगणना के अनुसार इस जिला की जनसंख्या नौ लाख सतासी हजार चार सौ सतीस थी । इसका क्षेत्रफल 4,55,690 हैक्टर है । इस जिला में जालौन सहित कोंच, उरई तथा कालपी चार तहसीलें है । जालौन, माधौगढ़, रामपुरा, कुठौंद, महेबा, कदौरा, डकोर, एट तथा नद गाँव नौ विकास खण्ड हैं । यहाँ 638 ग्राम पंचायतें तथा 81 न्याय पंचायतें हैं । इस समय इस जिला के कुल ~~आबाद~~ ग्रामों की संख्या 1156 है ।

<u>जनपद की सीमा इस प्रकार है</u> :-

उत्तर में :-	इटावा तथा कानपुर जिला, यमुना नदी,
दक्षिण में :-	झाँसी जिला एवं बेतवा नदी,
पूर्व में :-	हमीरपुर जिला,
पश्चिम में:-	मध्य प्रदेश एवं पहूज नदी,

इसकी लम्बाई पूर्व से पश्चिम में 90 कि0मी0 चौड़ाई उत्तर से दक्षिण पर्यन्त 75 कि0मी0 है । इस जनपद में कोई विशाल,नदी एवं पर्वत नहीं है ।

हाँ, यमुना बेतवा तथा पहुज अवश्य ही इस जनपद में प्रवाहित होती है । सिनवई, चिरावली, गुमावली, सला और पहाड़ गांव के पास छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं । इसी प्रकार मंलगा, रावर तथा चरखाई छोटे-छोटे बरसाती नाले हैं ।

यहाँ ग्रीष्म काल में अधिक गर्मी तथा शीतकाल में अधिक ठंड पड़ती है । जाड़ा, गर्मी और बरसात तीनों मौसम होते हैं ।

इस जनपद की मिट्टी मार, काबर, पडुवा और राकड़, है जिसमें गेहूँ, चना, जौ अलसी, सरसों तथा मटूर आदि फसलें होती है ।

सिंचाई के साधनों में कुआँ, तालाब और नहरें प्रमुख हैं ।

मध्यरेलवे की शाखा झाँसी, एट, उरई, कालपी होती हुई कानपुर तक जाती है ।

1.3 समाज और राजनीति के क्षेत्रों में भी आधुनिक युग में जो प्रगति हुई है, उसका आधारभूत कारण मनुष्य की भौतिक उन्नति ही है । व्यावसायिक क्रान्ति ह के कारण मनुष्य बड़े पैमाने पर आर्थिक उन्नति करने में समर्थ हुआ । यांत्रिक शक्ति से चलने वाले विशालकाय कारखानों में कार्य करने के लिए हजारों मनुष्य बड़े नगरों में एकत्र होने लगे । इस नयी परिस्थिति के कारण व्यावसायिक जीवन का स्वरूप ही एकदम परिवर्तित हो गया......इस दशा में विचारशील मनुष्यों, ने सोचना शुरू किया कि विविध मनुष्यों में परस्पर किस प्रकार का सम्बन्ध होना चाहिए । इसी कारण "समाज वाद" आदि नई विचारधाराओं का विकास हुआ, जो मानव समाज के स्वरूप को ही परिवर्तित कर देने के लिये प्रयत्नशील है । छापेखाने, कागज आदि के आविष्कार के कारण विद्या व ज्ञान केवल कतिपय व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं रह गए और सर्व साधारण जनता को भी शिक्षित होने व नये विचारों से परिचित होने का अवसर मिला । राजाओं के एकतंत्र शासन व कुलीन

वर्ग के विशेषाधिकारों के विरुद्ध भावना उसमें उत्पन्न हुई और लोकतंत्र-वाद का विकास हुआ ।[18]

जिस प्रकार लार्डकर्जन के भारत के सप्तवर्षीय शासन को उसके दैनन्दिन जीवन और कार्य का इतिहास माना जाता है उसी प्रकार हम भारतीय स्वतन्त्रता के इतिहास को महात्मा गांधी के जीवन का इतिहास मान सकते हैं ।[19] गांधी जी का व्यक्तित्व कभी प्रत्यक्ष और कभी अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय आन्दोलन में छाया हुआ था । सर्वप्रथम असन्तोष की लहर मजदूर, कृषक एवं छोटे-छोटे गृह उद्योग के कार्यकर्ताओं में व्याप्त हुई ।[20] इस स्थिति में राष्ट्रीय आन्दोलन सामूहिक रूप नहीं ले सका फलतः जो आदर्श इन मध्यम वर्ग के समाज के सम्मुख रखे गये, उनका भरपूर पालन हुआ । इन लोगों को पता था कि उनकी शक्ति ब्रिटिश शासन को चुनौती देने लायक नहीं बनी ।[21]

सन् 1907 में कांग्रेस के दो दल बन गये । उदारदल का नेतृत्व गोखले और अनुदार दल का नेतृत्व तिलक ने किया । भारत में प्रतिनिधित्व के आधार पर शासन चलाने की मांग होने लगी । सन् 1919 में सामूहिक असन्तोष के फलस्वरूप अनेकानेक हड़तालें प्रारम्भ हो गईं । सन् 1920 में दोनों दल एक हो गये और उन्होंने महात्मा गांधी का नेतृत्व स्वीकार कर लिया । इसके अनुसार शान्तिपूर्ण ढंग से स्वराज्य प्राप्ति का कार्य सम्पादित होने लगा ।

योरोप में हो रहे युद्धों ने सामान्य लोगों में राजनीतिक चेतना का संचार किया । आर्थिक दृष्टि से भारत की जनता अशान्ति और विद्रोह की अवस्था में पहुँच गई थी । युद्ध के पूर्व तक केवल मध्य वर्ग के लोग ही सरकार के विरोधी थे । जमींदार बड़े-बड़े व्यवसायी प्रायः

---

18. भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, हि0सं01956, सत्यकेतु विद्यालंकार पृ056
19. सर जार्ज उनवर्ट बी, इण्डिया एण्ड दि पासिंग आफ एम्पायर, पृ0 178.
20. जनपद जालौन के वर्तमान कवि, श्रीमती स्नेहलता श्रीवास्तव, हस्तलिखितशोध प्रबन्ध से साभार.
21. इण्डिया टुडे एण्ड टुमारो, रजनी पामदा, पृष्ठ 121.

राज्य भक्त बने थे । सामान्य जनता को अधिकारों का ज्ञान न था।[22] सन् 1921 के विजयवाड़ा कॉंग्रेस अधिवेशन में विदेशी माल के बहिष्कार की योजना बनी तथा साइमन कमीशन का विरोध किया गया । [23]सन् 1928 में बारदोली की घटना में सत्याग्रह हुआ । सन् 1930 में नमक सत्याग्रह दबाने का प्रयास किया गया किन्तु जनता की शक्ति, साहस और सहनशक्ति के आगे सरकार को झुकना पड़ा । सन् 1933 ई० में गांधी जी ने उपवास प्रारम्भ किया जिसके परिणाम स्वरूप उन्होंनें ऊँच-नीच का भेद-भाव दूर करने का प्रयत्न किया । यद्यपि गांधी जी न तो दयानन्द और अरविन्द के समान मेधावी पण्डित थे न उनमें विवेकानन्द के समान तेजस्विता थी । अपने समग्र जीवन में उन्होंनें कोई ऐसी बात नहीं कहीं जो उनके पूर्ववर्ती लोगों ने न कही हो । किन्तु साधन पूर्वक उन्होंनें सभी प्राचीन सत्यों को अपने जीवन में उतारकर - संसार के सामने यह उदाहरण उपस्थित किया कि जो उपदेश अनन्त काल से दिये जा रहे हैं, वे सचमुच ही जीवन में उतारने योग्य है ।[24] सन् 1936 में लखनऊ अधिवेशन में सरकार की नीति की कड़ी निन्दा की गई । लगभग 21000 लोग नजरबन्द किये गए । इसी समय नई साम्यवादी पार्टी का गठन हुआ। श्री सुभाषचन्द्र बोस को नजरबन्द बनाने से सुलगती अग्नि और अधिक रूप में भभक उठी । "इसी समय द्वितीय महायुद्ध चालू हो गया । कांग्रेस सरकार ने इस्तीफा दे दिया । इसके पूर्व पहली नवम्बर को वायसराय ने गांधी जी और राजेन्द्र बाबू को समझौता के लिये बुलाया जिसमें सांप्रदायिकता के आधार पर फूट डालने की बात उठायी ।[25]

---

22. राष्ट्रीयता और समाजवाद आचार्य नरेन्द्र देव पृ0-38.
23. बुन्देली काव्य परम्परा, डॉ0 बलभद्र तिवारी, पृ0-17.
24. संस्कृति के चार अध्याय, रामधारी सिंह दिनकर,पृ0-531.
25. कांग्रेस का इतिहास, डॉ0 पट्टाभिसीतारमैया. पृ0-149-150.

इन सब बातों के कारण जनता यह समझने लगी कि ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत भारतीयों का हित नहीं हो सकता । इसलिये भिन्न-भिन्न दलों का गठन हुआ और फिर शासन का विरोध प्रारम्भ हो गया ।

1.4 भारतीय संस्कृति के मूलतः दो स्वरूप सर्वत्र विद्यमान हैं । एक रूप जन संस्कृति का है और दूसरा अभिजन संस्कृति का । जन संस्कृति की अविरल अविच्छिन्न धारा से शक्ति लेकर तथाकथित जिस संस्कृति का निर्माण किया जाता है, वह अभिजन संस्कृति होती है । लोक संस्कृति का सीधा सम्बन्ध व्यापक जन समाज से होता है । अतः लोक संस्कृति की सतत ही परम्परा मिलती है ।.......व्यापक भारतीय संस्कृति के घटक के रूप में जाने कितनी ब्रज, बुन्देली, अवधी, मालवी, निमाड़ी, छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी आदि आदि स्थानिक संस्कृतियाँ विद्यमान हैं। उत्तर-दक्षिण, पूर्व-पश्चिम की सभी भाषाओं और बोलियों के अनुसार संस्कृति के स्वरूप में व्यापकता आती गई है । लोक संस्कृति की पहचान लोक में प्रचलित विभिन्न, कलाओं, साहित्य, धर्म, आचार-विचार, रीति-रिवाज, भाषा के विभिन्न प्रयोग आदि में होती है । बुन्देलखण्ड के निर्माण काल में से ही लोक ने जिस संस्कृति को अपनाया, वह इस प्रदेश की संस्कृति के नाम से पहचानी गई । प्रश्न यह है कि बुन्देलखण्ड की मूल संस्कृति तो सामन्तवाद की देन है । मूल से हमारा तात्पर्य उस आधार भूत तत्व से है, जिसके कारण बुन्देलखण्ड बना । काशी की सूर्यवंशी गहिरवार शाखा का एक शासक यदि राज्य में हिस्सा पाने से वंचित न किया जाता तो कदाचित् बुन्देलखण्ड का निर्माण न होकर कुछ और हुआ होता । इसलिये मूलरूप में सामन्तवाद से सामन्ती व्यवस्था का जन्म ही यहाँ बुन्देलखण्ड के अस्तित्व का आधार है ।

हेमकरन ने अपना खोया राज्य पाने के लिये विंध्यवासिनी देवी का आश्रय लिया और उपासना के बल पर श्रम के सहारे एक नये राज्य की कल्पना को साकार किया । यही तो मुख्य ऋद्ध रहस्य है कि बुन्देला जाति एक छोटे प्रदेश की शासक बनी और अपनी नीतियों और शौर्य के बल पर

उसे व्यापक बुन्देलखण्ड के रूप में परिणत कर दिया । अभिजन गौण हो गया लोक व्यापार की दृष्टि से, परन्तु उन संस्कृति के अपने मानदण्ड बने । ये मानदण्ड ही बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का स्वरूप स्पष्ट करते है ।[26]

बीसवीं शताब्दी के इस दशक में अब यह कहने में कोई कठिनाई नहीं कि संसार का समस्त ज्ञान दो शाखाओं में कहीं न कहीं बँट जाता है । एक शाखा भौतिकवादी है और दूसरी भाववादी विचार-सरणि का ज्ञापन कराती है । इन्हीं के अन्तर्गत व्यक्ति समाज और देश विशेष के सारे राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्य-कलाप, विकसन और सम्बन्धों की व्याख्या दी जाती है । भौतिकवादी भौतिक प्रगति के आधार पर यह दावा करते हैं कि वे संस्कृति आर्थिक क्षेत्र और राजनीति में अपनी क्रियाशीलता के कारण अग्रसर हो रहे है । आस्थावान होकर वे अपने परिवेश का आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक क्षेत्र में उन्नयनशील होने का दम भरते हैं और संस्कृति को सृजनशील और जन कल्याणी घोषित करते हैं । इनके व्यवस्थित क्रिया कलाप, समाज के निष्क्रिय जीवन और अवरुद्ध सृजन शीलता में संस्कृति के विकास के माध्यम से प्राण शक्ति भरते है । संस्कृति इनकी दृष्टि में मनुष्य मात्र को आनन्द और तृप्ति देने वाली साधिका है।

सहज ही एक प्रश्न उठता हैं कि क्या भौतिकता या भौतिकवादी व्यवस्था मनुष्य को मशीन का एक ऐसा पुरजा बना देती है कि उसे किसी भी अन्य पुरजे से बदला जा सकता है ।[27] यदि ऐसा है तो निश्चय ही आज के जीवन में व्याप्त नैराश्य, भय, संकल्पहीनता, अकेलापन भौतिकवाद की देन है । यहाँ सांस्कृतिक संकट[28] की दशा उत्पन्न होती है । प्रश्न ही नहीं होता पर यहाँ है कि भौतिक वादी की नींव क्या है? वस्तुतः भौतिकवादी व्यवस्था में वैज्ञानिकता का आग्रह अधिक है किसी अन्य व्यवस्था की तुलना में । संस्कृति में संस्कार की क्रिया[29] की सम्पन्नता किसी

26. बुन्देली लोक काव्य, डॉ0 बलभद्र तिवारी, भाग-3, पृ0-271-272.
27. मैन इन दी गार्डन एव, कार्ल पास्पर्स, पृ0-42-43.
28. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, डॉ0 देवराज, पृ0-1-2.
29. दि प्लेस आफ दि थ्योरी आफ सिविलिजेशन इन दि सोसियोलॉजी आफ कल्चर, डॉन मार्टिण्डेल, पृ0-37.

निश्चित विधान का संकेत देता है । जिसमें एक लक्ष्य होता है, एक मूल्य रहता है जो जीवन को जीने योग्य बनाता है ।[30] अर्थात् जड़ जीवन या निष्क्रिय जीवन में प्रगति का पथ संस्कार ही प्रशस्त करता है ।

संस्कृति और सभ्यता का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है इसीलिए यह भी कहा जाता है कि संस्कृतिहीन सभ्यताहो सकती है पर सभ्यता हीन संस्कृति नहीं । जड़ सभ्यता और जड़ संस्कृति दोनों में प्रगति में बाधक होती है । इसीलिए सभ्यता {जिसे हम आधुनिकीकरण का परिणाम मानते हैं} के लिये संस्कृति का होना आवश्यक है । स्पष्ट है कि सभ्यता की रीढ़ संस्कृति है अतः यह कहना गलत है कि आधुनिकीकरण और सभ्यता जन विरोधी हैं । दोनों की संस्कृति के विकास में अमूल्य भूमिका होती है ।

संस्कृति में लोक पक्ष ही प्रधान होता है । जिन देशों की संस्कृति में "जन" सामान्य जन को नकार कर विशिष्ट वर्ग{इलाइट} महत्वपूर्ण हुआ है, वह एक ऐसी संस्कृति प्रस्तुत करता है जिसे अभिजन अर्थात् खास वर्ग की संस्कृति कहा जाता है । अभिजन संस्कृति की जनक शासन व्यवस्था, पूँजीवादी व्यवस्था या धर्मतंत्री व्यवस्था होती है । इसमें "फोक"{जन} का पूर्णनिषेध होता है । वह "फोक सोसा टी"[31] और "फोक कल्चर" को प्रस्तुत नहीं करती है ।

संस्कृति के नियामक तत्वों में भाषा, साहित्य, कलायें, संस्कार, रीति-रिवाज और जीवन दर्शन को परिगणित किया जाता है । "इतिहास से हमें संस्कृतियों की विविधता मिलती है जिसका निरूपण विभिन्न जातीय तथास्थान सम्बन्धी मानव समुदायों में हुआ है और जिन पर किसी कौम के इतिहास की तथा एक निश्चित भौगोलिक तथा सामाजिक

---

30. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन, डॉ० देवराज, पृ०-148.
31. फोक कल्चर एण्ड ओरल ट्रडीशन, श्री एस०एन०श्रीवास्तव,पृ०-10.

वातावरण में उसके जीवन की छाप होती है।"[32]

जालौन जनपद के सांस्कृतिक विवेचन के पूर्व में उसके भाषा-साहित्य सम्बन्धी प्रकरण पर विचार करना होगा । सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड में पश्चिमी हिन्दी से प्रादुर्भूत बुन्देली का व्यवहार दृष्टि गोचर होता है । इसके विकास का क्रम इस प्रकार है :-

जालौन जनपद झाँसी जनपद के उत्तर में स्थित है । इसकी पूर्वी सीमा पर निभट्टा एवं लोधन्ती बोलियाँ प्रचलित हैं । शेष भाग में प्रामाणिक बुन्देली का प्रभाव है । मध्य जालौन "ऐ", "औ" की अपेक्षा "ए" एवं "ओ" का प्रयोग होता है ।[34] पश्चिमी जालौन में मुख्य अन्तर उच्चारण के विवृत्त होने में है । "ए" तथा "ओ" का "ऐ" एवं "औ" "कौ" संप्रदान के चिन्ह स्वरूप "कौं", कों, कौं है । चल्यो, गयउ, बैठो, करो तथा बड़ो का प्रयोग होता है । अन्यन्त्र डॉ० ग्रियर्सन ने प्राचीन एवं सांस्कृतिक बुन्देलखण्ड की दक्षिणी सीमा नर्मदा नदी तक मानी है ।[35] वास्तव में "बुन्देली बुन्देलखण्ड
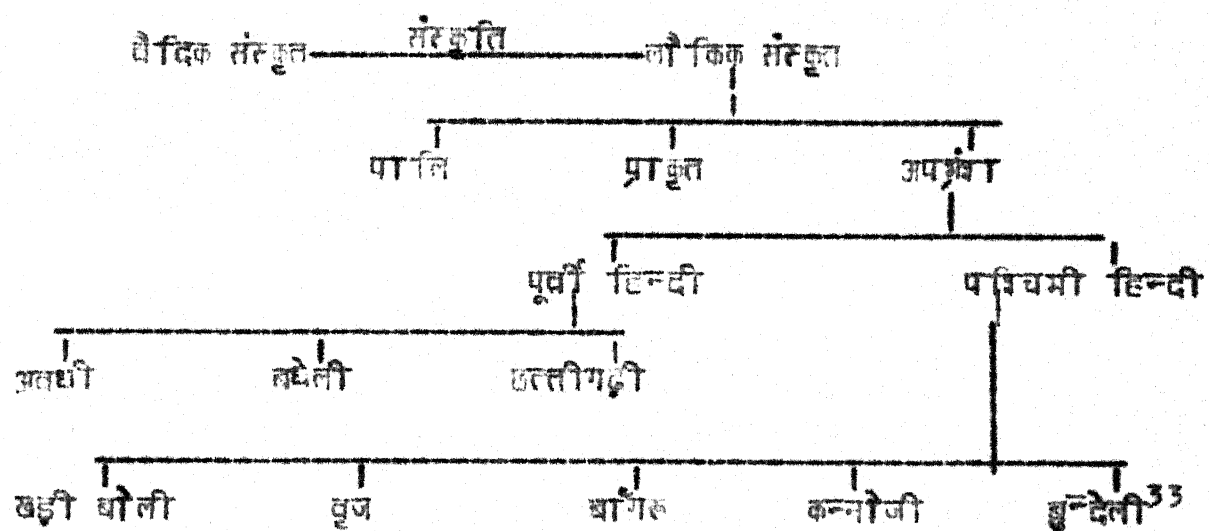
32. ऐतिहासिक भौतिकवाद, ब० केल्ले और म० कोवाल सोन, पृष्ठ-158-159.
33. भाषा विज्ञान, डॉ० रामस्वरूप खरे, सरस्वती प्रकाशन कानपुर प्र०सं० 1985 पृष्ठ 125.
34. भारत का भाषा सर्वेक्षण, डॉ० ग्रियर्सन, खण्ड नौ, पृ०- 227.
35. उपरिवत् .. .. .. पृ०- 86.

की बोली है । शुद्ध रूप में यह झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, ओरछा, सागर, भोपाल, नरसिंहपुर, सेवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है । इसके कई मिश्रित रूप दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट, तथा छिन्दवाड़ा के कुछ भागों में पाये जाते हैं ।"[36] इसके बोलने वालों की संख्या लगभग 80 लाख है । यह ओकार बहुला है । मूल बुन्देलखण्डी में अब काव्य-सर्जना की जा रही है । इसका लोक साहित्य यत्र-तत्र विपुल राशि के रूप में अपने उद्धार की प्रतीक्षा कर रहा है । गद्य का एक उदाहरण द्रष्टव्य है – "एक गांव में माते की छोर के ढिगां एक गरीब किसान की खेती ठाँड़ी हती । ऊ खाँ लख कें माते बोलो कि भायरे, हमाई खेती अपने ढोरन से चरा लई, तोखों देख नई" परन्तु के हम रखवारी कर रये ।"[37] केशवकृत "रामचन्द्रिका" एवं लाल कृत "छत्रप्रकाश" में ब्रज के साथ साथ बुन्देली के शब्द प्रचुर परिमाण में प्रयुक्त हुए हैं । संप्रति शोधार्थी इसके स्वरूप, उद्‌भव और विकास के विश्लेषण एवं भाषा वैज्ञानिक अध्ययन में संलग्न हैं । बुन्देली का फाग साहित्य, लोक कथायें, लोकोक्तियाँ आदि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं । ईसुरी का नाम बुन्देली कवियों में मूर्धन्य है ।[38]

बुन्देली साहित्य की कुछ झलक निम्नांकित है :-

"व्यास कहैं जिन बम्बई, सूरत आध लई बिन आंध करे की ।
हाँसी नहीं वर साँची कहों, यह झाँसी भई उन्हें फाँसी गरे की ।।"

——घासीराम व्यास

"धन सपरत बेला ताल, मछरिया माथे की बिंदियाँ लै गई ।
सोय निकसत आवै लाज, चुनरिया वारी ननदिया लै गई ।।"

—— अवधेश

---

36. हिन्दी भाषा का इतिहास डाँ0 धीरेन्द्र वर्मा, पृ0 – 66.
37. भाषा विज्ञान, डाँ0 रामस्वरूप खरे, पृ0 – 128.
38. हिन्दी भाषा का परिचयात्मक ज्ञान, डाँ0 रामस्वरूप खरे, पृ0–29.

"ओजू हमें लगत है प्यारौ, कंचन आंग तुमारौ ।
तिन सिंगारे दमकत ऐसो, चिलकत जैसे पारौ ।।"

——गुनसागर सत्यार्थी

"करकें नेह टोर जिन दइयौ,
दिन–दिन और बढ़इयौ ।
जैसे मिलै दूद में पानी,
उसई मनें मिलइयौ ।।"

—— लोककवि ईसुरी

———o———

युगीन परिस्थितियाँ

2.1 राजनैतिक परिस्थितियाँ :-

औरंगजेब के बाद मुगल साम्राज्य पूर्णतया खण्ड-खण्ड हो गया था उस समय भारत में कोई भी ऐसी प्रबल राज शक्ति नहीं रह गयी थी जो विदेशी लोगों से भारत की रक्षा करने में समर्थ हो सकती, परिणाम स्वरूप 18वीं शती के अन्त और 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अंग्रेजों ने इस देश पर अपना अधिपत्य स्थापित किया । सन् 1845 ई0 एवं 1848 ई0 में अंग्रेजों का सिक्खों से युद्ध हुआ जिसमें सिक्खों की पराजय हुई । अत 1849 ई0 में लार्ड डलहौजी ने पंजाब को भी अपने अंग्रेजी शासन में लेकर वहाँ के राजा दलीप सिंह को राजगद्दी से उतार दिया तथा इसी प्रकार सिन्ध, उत्तर पश्चिमी प्रदेश आदि अन्य प्रदेशों पर अंग्रेजी शासन स्थापित हुआ ।

19वीं0 शताब्दी के प्रारम्भ में ही अंग्रेजी शासन द्वारा यहाँ धार्मिक स्वतन्त्रता भी घोषित हो गयी थी, लेकिन भारतीय पराधीनता का अनुभव करने लगे और राजनैतिक अधिकारों की ओर से सजग होने लगे थे । लार्ड मैकाले और राजाराम मोहन राय के प्रयास से भारत में भी अंग्रेजी शिक्षण की स्वीकृत हो गयी थी । जिसके कारण भारतीय अपनी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को समझने लगे थे । सन् 1890 के लगभग बहुत सी ऐसी घटनाएँ हुई जिन्होंनें भारतीयों को असन्तुष्ट किया । इस समय यातायात के साधनों का प्रयास हो जाने के कारण मनुष्यों के विचारों

में प्रसार हुआ । रेलें, सड़कें, तार, नहरें इत्यादि विचारों के प्रसार में बहुत ही सहायक हुए ।

सन् 1957 में सिपाही विद्रोह जो सफल नहीं हुआ । सन् 1858 ई0 में महारानी विक्टोरिया की घोषणा पत्र निकला जिससे भारतियों को बहुत कुछ विश्वास हुआ, जिसमें उदारता, धार्मिक-सहिष्णुता के भाव आदि विशेष थे । इसके कारण देश में कई वर्षों तक राजनैतिक आन्दोलन शान्त रहे । ह्यूम आदि कुछ सहृदयों ने अंग्रेजी शासन के दोष भी समय-समय पर बतलाये तथा उन्हीं की प्रेरणा से यहाँ कांग्रेस की स्थापना हुई ।

19वीं शताब्दी के अन्त में लार्ड लिटन वाइसराय होकर भारत आए । इनके समय में ही टेलीग्राम का प्रसार हुआ । इन्होंने दिल्ली दरबार का आयोजन करके विक्टोरिया को भारत की सम्राज्ञी घोषित करके भारत को इंग्लैण्ड का एक उपनिवेश माना, जिससे भारत की शिक्षित जनता संशक हुई । इसके साथ ही साथ दिल्ली दरबार बड़ी ही शान से किया गया जिसमें बहुत ही खर्चा हुआ और दूसरी ओर देश में दुर्भिक्ष फैला था ।अतः इसका भी प्रभाव भारतियों पर अच्छा नहीं पड़ा । भारतीयों पर अनेक प्रकार के उत्तर दायित्व भी लाद दिए । अतः उनकी भावनाएँ विद्रोह पूर्ण हो उठीं । ह्यूम ने इन्हें शान्त करने का प्रयत्न भी किया, जिसका तत्कालीन पत्रों में साम्राज्यवादी नीति तथा भारत पर लादे गए युद्ध सम्बन्धी ऋण पर आक्षेप हुए । तथा मिश्र, दास एवं प्रेमधन आदि की रचनाओं से उस समय की परिस्थिति का आभास मिलता है । इसी समय वर्नाक्यूलर ऐक्ट भी पास हुआ जिसका जनता ने विरोध किया लेकिन शासन ने भारतियों के प्रति उपेक्षा का भाव प्रकट किया । इस समय साहित्य राज भक्ति तथा देश भक्ति दोनों को पृथक-पृथक समझाते थे । परन्तु देश भक्ति और राज भक्ति दोनों ही

में हरिश्चन्द ने देशी राजाओं और जमींदारों के ऊपर आक्षेप किया और उन्हें देश भक्ति की ओर प्रेरित किया ।

लार्ड लिटन के बाद लार्ड रिपन भारत आए । यह बहुत ही सरस स्वभाव के थे एवं उदार प्रवृत्ति के भी थे । अतः यह लार्ड लिटन की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय हुए । इन्होंने अपने शासन काल में स्थानीय स्वायत्त शासन स्थापित करने का प्रयत्न किया । इल्बर्ट के विरोध में भारतियों की कुछ मांगे थी लेकिन सफलता नहीं मिली । अतः भारतियों के मन स्वतन्त्रता की भावना जाग्रत हुई । रिपन का युग गवर्नरों में स्वर्ण-युग माना गया है फिर भी 1884 ई0 में कांग्रेस की स्थापना हुई । इसके पहिले भी कुछ स्थानों में राष्ट्रीय समाजों की स्थापना हो गयीं थीं । जिनके द्वारा देश के बड़े-बड़े विद्वान तथा कार्य कर्त्ता ही अपने विचारों को व्यक्त करते रहे । 1976 में बंगाल में इंडिया एसोसियेशन की स्थापना हुई । सुरेन्द्र नाथ बनर्जी सम्पूर्ण भारत में एक संगठित संस्था स्थापित करने का विचार किया तथा अनेक आन्दोलनों की प्रेरणा भी दी ।

1884-85 में इंडियन नेशनल कांग्रेस के अधिवेशन का आयोजन किया गया जो ह्यूम महोदय के प्रयत्न द्वारा ही हुआ । इस प्रकार देश की राजनैतिक परिस्थिति का प्रभाव तत्कालीन साहित्य एवं विचारधारा पर भी पड़ा । अतः पं0 कालीदत्त नागर भी तत्कालीन राजनैतिक परिस्थिति से प्रभावित थे ।

इस प्रकार देश की राजनैतिक परिस्थितिके फलस्वरूप राष्ट्रीय कार्यक्रम का सूत्र पात हुआ । अंग्रेजी की प्रतिवादी नीति तथा विरोधी कानून के कारण इस आंतरिक चेतना का विकास हुआ और सभा-संस्थाओं के रूप में इस भावना की अभिव्यक्ति हुई । भारतेन्दु युग तथा द्विवेदी युग के कवियों में भी इस प्रकार की सम्पूर्ण अ राजनैतिक परिस्थितियाँ

की झलक स्पष्टता के साथ मिलती है । देश भक्ति और राज भक्ति दोनों का प्रवाह समानान्तर चलता दिखाई पड़ता है । युग की सर्वतोमुखी उन्नति वैज्ञानिक आविष्कार इत्यादि की प्रेरणा से साहित्यिक राजभक्ति के भाव से काव्य रचते थे । परन्तु परिस्थितियाँ तथा पराधीनता के प्रभाव से उनमें देश भक्ति की भावना जागृत होती थी । जिसके फलस्वरूप वह देश भक्ति का राग गाते दिखाई पड़ते थे ।........। देश की सारी विचार धारा राजनीति के साथ मिलकर चल रही थी और इस युग में निर्मित साहित्य उससे पूर्णतया प्रभावित है ।"[1]

2.2 आर्थिक परिस्थिति :-

वैदिक काल से ही धर्म, अर्थ एवं मोक्ष मनुष्य के जीवन से संबंधित माने गए हैं जिनमें मोक्ष की प्राप्ति के साथ-साथ अर्थ पर बहुत ही महत्त्व दिया गया है । संसार में मनुष्य बिना अर्थ के अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षुधा का समाहार नहीं कर सकता है । अतः जीवन को सुखमय बनाने के लिए अर्थोपार्जन बहुत ही आवश्यक है । मनुष्य के समृद्धशाली होने पर देश भी समृद्धशाली हो सकेगा और जो देश समृद्धशाली होगा तो उस देश में संस्कृति और कला का पूर्ण विकास होगा । अतः समृद्धशाली वातावरण में ही श्रेष्ठ काव्यों की रचना हुई है । रीतिकाल इसके लिए कला का युग ही कहा गया है जिसमें श्रृंगार आदि पर सम्यक् ग्रन्थों की रचना हुई है । आज की आर्थिक विषमताओं ने ही काव्य और कला की ओर से मनुष्य को विमुख कर दिया है । अतः देश की साहित्यिक तथा कलात्मक समृद्धि के लिए अर्थ प्रधान ही है ।

"अंग्रेजी राज्य वस्तुतः व्यापारिक वर्ग का राज्य था और इसके फलस्वरूप इस युग में देशव्यापी और वैश्य वर्ग का प्रभुत्व स्थापित हो गया,

1. रत्नाकर और उनका काव्य - उषा जायसवाल पृ0-32.

जिससे नवीन साहित्य में एक नवीन युग का आरम्भ हुआ ।"[2]

19वीं शताब्दी के अन्त में अंग्रेजों का व्यापारिक प्रभुत्व स्थापित हो गया था । इंगलैण्ड के शासकों के हाथ में शासन आया उन्होंने भारतवर्ष को युद्ध में फंसाकर धन किसी न किसी रूप में वसूल करना प्रारम्भ कर दिया । सन् 1849 एवं 52 में जो वर्मा आदि से युद्ध हुए उसका भारत पर प्रतिकूल आर्थिक प्रभाव पड़ा । उसी समय यातायात के साधनों की उन्नति हुई जिसके फलस्वरूप छोटे-छोटे व्यापारियों का व्यवसाय समाप्त सा ही हो गया और बड़े-बड़े व्यापारी वर्ग समुन्नत होने से लगे । सन् 1857 के विद्रोह से आर्थिक स्थिति खराब हो गयी । सैनिकों की जीविका भी समाप्त हो गयी । अतः देश में बेकारी फैल गयी । सन् 1958 में एक एक्ट पास किया गया कि भारत का धन उसकी सीमाओं से बाहर नहीं जायेगा लेकिन यह सम्भव भ न हो सका क्योंकि युद्धों में इसका ध्यान नहीं रखा गया । इसके बाद कृषि सुधार आदि कार्य किए जिससे कुछ राहत मिली । 1966 में दुर्भिक्ष पड़ा जिसने जनता पीड़ित एवं भयभीत कर दिया तथा 1867 में युद्ध एवं महामारी का प्रकोप दोनों एक साथ हुए । 1869 में पुनः दुर्भिक्ष पड़ा ।

इस प्रकार जनता को बहुत ही कठिनाईयों का सामना करना पड़ा । अर्थ की कमी होने के कारण प्रान्तों पर नए कर लगाए गए तथा कृषकों से उनकी पैदावार का आधे से अधिक हिस्सा लिया जाने लगा । इससे इन लोगों की आर्थिक दशा बहुत ही खराब हो गयी और योरोप का व्यापार बढ़ने लगा । इसी समय शिक्षा आदि पर भी नए कर लगाए। गए । कृषकों से लगान की धनराशि पहिले से अधिक कर दी गयी । 1874 में बंगाल में दुर्भिक्ष पड़ा । अतः आर्थिक व्यवस्था दिन पर दिन खराब होती गयी । इसके बाद अंग्रेजों की साम्राज्यवादिता स्पष्ट रूप से मालूम

2. आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास डा० श्रीकृष्ण लाल.

होने लगी थी । 1877 में पुनः दुर्भिक्ष पड़ा तथा इसी समय युद्ध भी हुआ जिसका व्यय-भार भारत को ही उठाना पड़ा । लार्ड रिपन ने कृषि सुधार तथा युद्धों की शान्ति की व्यवस्था की जिसके कारण देश में कुछ शान्ति पैदा हुई ।

अंग्रेजों की इसप्रकार की आर्थिक नीति के कारण भारत की कृषि और उद्योग धन्धे नष्ट हो गए थे तथा युद्ध और दुर्भिक्षों के बार-बार आने से आर्थिक दशा बहुत ही सोचनीय थी । इन सबके साथ ही अंग्रेजों की आर्थिक नीति का परिणाम दुर्भिक्षों से कहीं अधिक दुखदायी थी । अतः जन समुदाय ऐन-केन प्रकारेण आपने को जीवित रख सका था । यह समय आर्थिक दृष्टि से विपत्तियों का सामने करने वाला युग था। अंग्रेजों की नीति शोषण की थी व्यवसायों में सभी प्रकार का स्वार्थ निनिहित था । कृषि की उन्नति में बाधक रहे जिससे कृषक वर्ग सदैव ही पीड़ितार्थ ऋण ग्रस्त रहा । अतः भारतवर्ष की उस समय आर्थिक दशा बहुत ही खराब थी मनुष्य जन्म से मरण तक इसी प्रकार की आर्थिक परिस्थितियों की सामना करता रहता था ।

"अंग्रेजों की शोषण नीति का शिकार भारतवर्ष उस समय चारों ओर निराशा के ही दर्शन कर रहा था । जनता दुखी थी और सामन्तवादी वर्ग के लोग जो अंग्रेजों की शोषण नीति के माध्यम थे, उसी जनता के उपार्जित धन पर आनन्द मना रहे थे ।"[3]

भारतेन्दु जी ने दुर्भिक्ष का चित्रण इस प्रकार किया है —

"तीन बुलावें तेरह आवें, निज निज विपदा रोय सुनावें ।
आँखी फूटी भरा न पेट, क्यों सखि साजन नहि अंग्रेज ।।"

---

3. रत्नाकर और उनका काव्य - उषा जायसवाल पृ० - 34.

संक्षेपतः अंग्रेजों की साम्राज्यवादी एवं स्वार्थमयी नीति के फलस्वरूप भारत की आर्थिक दशा बहुत ही सोचनीय थी । कृषि एवं उद्योग-धन्धे भी समाप्त ही थे या नाम मात्र को ही थे जिसके कारण जन समुदाय बहुत ही पीड़ित था ।

2.3 सामाजिक परिस्थिति :-

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हिन्दू समाज अस्त-व्यस्त था जिसका कारण स्पष्ट ही है क्योंकि पहिले मुसलमानों का शासन था अतः उन्होंने हिन्दुओं पर अत्याचार किए जिससे उनका जीवन दुखदायी था । इसके बाद अंग्रेजों ने अपनी शोषण नीति द्वारा उन्हें और भी दुखदायी तथा असहाय बना दिया । उस समय अंधविश्वास, रूढ़ियाँ तथा कुरीतियाँ सर्वत्र फैली हुई थी अतः उनका नैतिक पतन भी होता जा रहा था । शासकों के सिद्धान्तों एवं उपदेशों को विवश होकर मानना पड़ता था । इस प्रकार उनकी विचारों की स्वतन्त्रता भी समाप्त होती सी मालूम पड़ने लगी थी ।

अंग्रेजी शासन हो जाने पर अंग्रेजी की शिक्षा का प्रसार हुआ । लार्ड मैकाले जो एक बहुत बड़ा शिक्षा विद था उसने भारतियों का अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा मन, रहन-सहन एवं वेश-भूषा आदि को परिवर्तित कर दिया परिणाम स्वरूप अंग्रेजी का शिक्षा का बहुत ही प्रसार हुआ क्योंकि इसके द्वारा उनका समाज में आदर होता था तथा आर्थिक स्थिति में सुधार होना भी सम्भव हुआ । इससे अपनी संस्कृति एवं सभ्यता का त्याग करना पड़ा । अतः समाज में उच्छृंखलता का प्रभाव बढ़ा । राजा राम मोहन राय के प्रयत्न से सती प्रथा का उच्छेद तथा विधवा-विवाह का कानून बने लेकिन इससे हित की अपेक्षा अहित अधिक हुआ । डा० वार्ष्णेय

ने उचित ही लिखा है — "यह ठीक है कि उस समय सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में न पश्चिम से प्रभावित अति कवियों का अभाव था और न ऐसे व्यक्तियों का अभाव था जो भारतीयता के अनुकूल पश्चिम की अच्छी-अच्छी बातें अपना लेने के पक्ष में थे। किन्तु समाज में मध्य कालीन रूढ़ियों की श्रृंखला में जकड़े हुए व्यक्ति की ही प्रधानता बनी रही।"[4]

अंग्रेजी शासन ने अपनी ओर से सम्पन्न व्यक्तियों को आर्थिक सहायता देकर अपने वश में कर लिया। बड़े-बड़े राजा लोग भी इनके आश्रित हो गए। इन्हीं ने ही जमींदारी प्रथा को जन्म दिया। जमींदारों के माध्यम से अंग्रेजों ने कृषकों पर अत्याचार कराए जिससे उनकी पहिले से और भी अधिक आर्थिक एवं सामाजिक दशा खराब हो गयी। यातायात के साधनों के प्रसार से भारतियों को अपनी दशा का ज्ञान हुआ। अतः उनमें समानता का भाव तथा रूढ़ियों के प्रति विद्रोह उत्पन्न हुआ।

समाज निर्माण में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस युग में अरबी, फारसी, तथा उर्दू शिक्षा ही प्रधान रूप से प्रचलित थी। संस्कृत को तो भूल ही गए थे। अंग्रेजों ने अंग्रेजी शिक्षा को अनिवार्य कर दिया था। अतः इनके धर्म का भी प्रचार हुआ। इसका बाद में प्रभाव उल्टा ही हुआ।

"वास्तव में इस युग में समाज एक नवीन रूप ग्रहण करने का उपक्रम कर रहा था, जिसमें पर्याप्त अशांति और अव्यवस्था थी। वह वह संक्रान्ति का युग था और ऐसे युग में अव्यवस्था का होना स्वाभाविक ही है। फिर भी देश में नव जागरण के लक्षण प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगे थे।"[5]

---

4. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास डा० वार्ष्णेय पृ०-64.
5. रत्नाकर और उनका काव्य - उषा जायसवाल पृ० - 39.

समाज में वर्ण व्यवस्था रूढ़िगत थी । उस समय ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य और शूद्र चार वर्ग थे । अछूत वर्ग घृणा की दृष्टि से देखा जाता था । आर्थिक दशा भी दयनीय थी । समाज में ब्राह्मणों का सम्मान था । समाज के नियमों के विपरीत चलने पर वह समाज से च्युत कर दिया जाता था जो सबसे बड़ा दण्ड होता था । अतः मनुष्य भयभीत रहा करते थे ।

उस समय समाज में अशिक्षा एवं बाल विवाह बहु विवाह आदि सामाजिक कुरीतियाँ थी । शिक्षा केवल ऊँचे वर्ग वालों को ही प्राप्त थी। विवाह अपनी जाति में ही होते थे प्रायः सभी वर्गों में बाल्यकाल में ही विवाह हो जाया करते थे । निम्न वर्गों में बहु विवाह की प्रथा थी ।

समाज में दण्ड की व्यवस्था थी । हत्या आदि बुरे कर्म करने पर प्रायश्चित एवं गंगा स्नान का विधान था । विधवाओं की समाज में विषम परिस्थिति थी लेकिन स्त्रियों का बड़ा सम्मान होता था । वह घर की लक्ष्मी होती थी । परिवार का पूर्ण दायित्व उस पर होता था। अभिजात वर्ग की स्त्रियाँ पर्दा किया करती थी । धार्मिक स्थानों में तथा धार्मिक विधानों में स्त्रियों को पुरुषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे। अधिकांशतः संयुक्त परिवार हुआ करते थे जो मुखिया की कुशलता से चला करते थे ।

संक्षेप में उस समय बुन्देलखण्ड की सामाजिक परिस्थितियाँ बहुत ही विचित्र थीं । क्षत्रियों को शिकार का शौक था, ब्राह्मणों को पठन-पाठन एवं यज्ञ आदि किया करते थे, वैश्य कृषि वाणिज्य अवश्य ही जुआ का प्रचलन था । न्याय निष्पक्षता पूर्ण होता था । सभी उस न्याय की प्रशंसा किया करते थे । शासक वर्ग की अत्याचार अधिक था । निम्न वर्ग का

शोषण किया जाता था । जन साधारण का जीवन सुखमय नहीं था ।

2.4 धार्मिक परिस्थितियाँ :-

19वीं शताब्दी में हिन्दू-समाज में धर्म की प्रधानता थी यद्यपि परम्परागत ब्राह्मण धर्म केवल रूढ़िवादी होकर ही रह गया था । धर्म में बाह्याडम्बर बढ़ गया था, मन्दिरों में वैभव प्रदर्शन की ओर जन साधारण का जितना ध्यान आकर्षित था उतना वास्तविक उपासना आदि में नहीं था । पुजारी विलासी हो गए थे साथ ही वैभव के पास । यथार्थता से अलग होकर सामाजिक दृष्टि से धर्म छुआछूत, वर्ण व्यवस्था, एवं खान-पान आदि के व्यर्थ सिद्धान्तों में ही रह गया था । मुसलमानों के प्रभाव के कारण हिन्दू धर्म पालन करने में अनेक प्रकार के व्यवधान उपस्थित हुए जिसके कारण वे येन-केन-प्रकारेण अपने धर्म को सुरक्षित रख सके । अतः उस समय का धर्म बहुत कुछ रूढ़िवादी तथा संकीर्ण बन गया था।

अंग्रेजों के आने के साथ ही साथ भारतीयों में राष्ट्रीय, सामाजिक, तथा नैतिक जागृति उत्पन्न हुई और धर्म के वास्तविकता की ओर भी उनकी दृष्टि गई । सन् 1827 में ब्रह्म समाज की स्थापना हुई । सन् 1875 ई0 में ईसाई धर्म को न अपना सकें अतः आर्य समाज की स्थापना हुई । इससे समाज सुधार भी हुआ । इसके अनुसार मूर्ति पूजा एवं अवतार पर विश्वास नहीं करते थे तथा बहु विवाह को भी बन्द करने का प्रयत्न भी किया । ब्रह्म समाज एवं आर्य समाज के प्रति-क्रियास्वरूप सन् 1888 में ब्राह्मण धर्म को सुगठित करने के लिए पं0 दीन दयाल जी ने धर्म मण्डल की स्थापना की ।

हिन्दुओं में त्रिमूर्ति; सर्व देववाद, भाग्यवाद, मूर्तिपूजा, तीर्थ यात्रा तथापुनर्जन्म आदि विविध भावनाएँ प्रचलित थीं । धर्म

के अन्तर्गत अनेक रीतियाँ और प्रथाएँ कुत्सित थी । शिक्षा का अधिक प्रचार न होने के कारण लोग धर्म शास्त्रों से परिचित ही नहीं थे क्योंकि वे ग्रन्थ संस्कृत में थे । अतः इस प्रकार का ज्ञान रखने वाले कुछ ही शिक्षित व्यक्तियों तक सीमित था ।

सम्पूर्ण भारत में अंग्रेजी शासन था और सभी उनकी आधीनता स्वीकार कर चुके थे । सभी धर्मावलम्बी अपने-अपने धर्म मानने के लिए पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र थे । सभी लोग शैव, राम, कृष्ण आदि को समान रूप से उपासना करते थे एवं सभी के प्रति विश्वास रखते थे । धर्म सम्बन्धी किसी प्रकार की वैमनस्यता नहीं थी । इस प्रकार हम देखते है कि उस समय धर्म के नाम पर रूढ़ि विद्यामान थी । धर्म का कंकाल मात्र ही रह गया था । सभी जनता जादू टोना एवं मूर्ति पूजा में विश्वास करती थी । उरई क्षेत्र में इसका प्रभाव पूर्णरूपेण था ।

2.5 साहित्यिक परिस्थिति :-

सन् 1867 के पूर्व ऐसा युग रहा जो कि अपनी प्राचीनता का पोषक था । विषय, शैली एवं भाषा में नवीनता का प्रादुर्भाव नहीं हुआ वरन साहित्य-क्षेत्र में वही प्राचीनता विदयमान थी । उस समय काव्य का ही महत्व था अतः रचनाएँ काव्य में ही हुआ करती थी । गद्य की ओर किसी का ध्यान ही नहीं था । रीतिकालीन कवियों की भाँति ही काव्य के विषयों को लेकर रचना करते थे लेकिन उनमें वह काव्य-सौन्दर्य न आ सका था । कला की दृष्टि से रीति-कालीन पद-शैली में कवित्त, सवैया, घनाक्षरी, दोहा, चौपाई आदि का प्रयोग किया गया हैं तथा संस्कृत के वृत्तों का भी प्रयोग यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है ।

के अन्तर्गत अनेक रीतियाँ और प्रथाएँ प्रचलित थीं । शिक्षा का अधिक प्रचार न होने के कारण लोग धर्म शास्त्रों से परिचित ही नहीं थे क्योंकि वे ग्रन्थ संस्कृत में थे । अतः इस प्रकार का ज्ञान रखने वाले कुछ ही शिक्षित व्यक्तियों तक सीमित था ।

सम्पूर्ण भारत में अंग्रेजी शासन था और सभी उनकी आधीनता स्वीकार कर चुके थे । सभी धर्मावलम्बी अपने-अपने धर्म मानने के लिए पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र थे । सभी लोग शैव, राम, कृष्ण आदि को समान रूप से उपासना करते थे एवं सभी के प्रति विश्वास रखते थे । धर्म सम्बन्धी किसी प्रकार की वैमनस्यता नहीं थी । इस प्रकार हम देखते हैं कि उस समय धर्म के नाम पर रूढ़ि विद्यमान थी । धर्म का कंकाल मात्र ही रह गया था । सभी जनता जादू टोना एवं मूर्ति पूजा में विश्वास करती थी । उरई क्षेत्र में इसका प्रभाव पूर्णरूपेण था ।

2.5 साहित्यिक परिस्थिति :-

सन् 1867 के पूर्व ऐसा युग रहा जो कि अपनी प्राचीनता का पोषक था । विषय, शैली एवं भाषा में नवीनता का प्रादुर्भाव नहीं हुआ वरन साहित्य-क्षेत्र में वही प्राचीनता विद्यमान थी । उस समय काव्य का ही महत्व था अतः रचनाएँ काव्य में ही हुआ करती थी । गद्य की ओर किसी का ध्यान ही नहीं था । रीतिकालीन कवियों की भाँति ही काव्य के विषयों को लेकर रचना करते थे लेकिन उनमें वह काव्य-सौन्दर्य न आ सका था । कला की दृष्टि से रीति-कालीन पद-शैली में कवित्त, सवैया, घनाक्षरी, दोहा, चौपाई आदि का प्रयोग किया गया है तथा संस्कृत के वृत्तों का भी प्रयोग यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होता है ।

काली कवि अत्यधिक सरल, विनोद प्रिय एवं उदार प्रकृति के थे। मनुष्य में आत्माभिमान होना अत्यधिक आवश्यक है जो कि नागर जी ने पूर्णरूपेण था। कवि की काव्य-कृतियों पर उसकी व्यक्तिगत रुचि का पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। इन्हें बचपन में गाय की सेवा करने का बहुत ही शौक था। नागर जी केवल कवि ही नहीं थे बल्कि संस्कृत, हिन्दी एवं फारसी आदि भाषाओं के मर्मज्ञ भी थे। संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों का उन्होंने गहन अध्ययन किया था।

पं० काली दत्त नागर कवि ही नहीं थे वर, उच्च कोटि के विद्वान भी थे। वे प्राचीन साहित्य के पूर्ण मर्मज्ञ वे सहृदय थे। उनमें जिज्ञासा थी अतः इस प्रवृत्ति के कारण तांत्रिक विद्या की अनायास सिद्धि हुई। उन्होंने हिन्दी साहित्य को अनुपम ग्रन्थ रत्न प्रदान कर अपने व्यक्तित्व की गम्भीरता के आधार पर अपने नाम को सार्थक कर दिया।

-----------0-------------

कवि के पूर्वज

3.1 स्थान एवं प्रदेश

3.2 कुल जाति एवं गोत्र

3.3 कवि के माता-पिता

3.4 सन्तान; पुत्र एवं पुत्रियाँ

3.1 कवि के काव्य पर उसके वंश, वातावरण और युगीन परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है । जीवन विभिन्न घटनाओं का समुच्चय ही तो कहा जाता है । पंच भौतिक तत्वों के मिश्रण से इसका निर्माण होता है और अन्ततोगत्वा उन्हीं पंच तत्वों में वह लीन हो जाता है ।

संसार की समस्त वस्तुयें परमाणुओं द्वारा निर्मित होती हैं, किन्तु परमाणु नश्वर हैं, अतः विश्व की प्रत्येक वस्तु नश्वर है। इस नश्वरता के कारण ही जगत दुखमय है । यही दुख सत्य है । समस्त विश्व शून्य है । महात्मा बुद्ध ने शून्यता का अनुभव कर शून्य में विलीन होजाने को ही निर्वाण कहा है ।[1] माध्यमिक आचार्य भी दोप्रकार की सत्यता स्वीकार करते हैं -

"द्वे सत्ये समुपाश्रित्य बुद्धानां धर्म देशना ।
लोक संवृत्ति सत्यं च सत्यं च परमार्थतः ।।"[2]

महापुरुष सर्वत्र नहीं होते । यदा-कदा उनका अवतरण इस संसार में हुआ करता है । महाकवि काली दत्त नागर के पूर्वज भी कुछ इसी प्रकार के थे । कहा भी गया है —

"दुल्लभो पुरिसाज   न सो सब्बत्थ जायति ।
यत्थ सो जायति धीरो तं कुलं सुखमेधति   ।।"[3]

अर्थात् बुद्धिमान पुरुष दुर्लभ है, वह सर्वत्र उत्पन्न नहीं होता । जिस कुल में वह धीर पुरुष उत्पन्न होता है, उस कुल में सुख की वृद्धि होती है ।

---

1. अभिनव पालि पाठावली, सम्पा० डॉ० राजकिशोर सिंह,तृतीय सं०1982 पृ०-42.
2. माध्यमिक कारिका, नागार्जुन, 24/8.
3. धम्म पद, बुद्धवग्गो/ 193 श्लोक.

महाकवि कालीदत्त के पूर्वज उत्तर प्रदेश के निवासी थे । जनपद जालौन में आने से पूर्व जिला आजमगढ़ में निवास करते थे । कालान्तर में यह विद्वान परिवार जनपद जालौन के प्रमुख नगर उरई में आ बसा । यहीं पर महाकवि का प्रादुर्भाव हुआ ।

3.2 आपके पिता पं० छविनाथ जी गुजराती ब्राह्मण थे जो नागर वंश में समुद्भूत हुए थे । इस प्रकार इन उद्भट और प्रकाण्ड विद्वान एवं महामनीषी के सद्गुणों को अपने में समाविष्ट करके स्वयं विवेच्य कवि कालीदत्त नागर भी गुजराती ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए । आपका गोत्र पाराशर था ।

कवि की माता अत्यन्त उदार, सरल एवं धर्मपरायण थीं । वे नित्य प्रति अपने आराध्य पति का चरणोदक लेकर पूजा-पाठ करती हुई प्रायः भक्ति-भावना में लीन रहा करती थी । उनके मन में गोस्वामी तुलसीदास की माता हुलसी के समान ऐसी कामना थी कि मेरी कुक्षि से जो पुत्र उत्पन्न हो, वह अत्यन्त तेजस्वी और यशस्वी हो । सूर-तुलसी और मीरा के पद वे गुनगुनाकर अपनी गृहस्थी के कार्यों में दत्त चित्त रहा करती थी । वे सचमुच उमा ही थीं । यथानाम तथा गुण के अनुसार उनमें हमारा क्षमा, ममता और तप की अपार शक्ति विद्यमान थी ।सम्पूर्ण जगत् की उद्भव स्थिति संहाकारिणी शक्ति पर आपकी अगाध निष्ठा थी । इस प्रकार से कहा जा सकता है कि कवि की माँ शक्ति की अनन्य उपासिका थीं । यही कारण है कि बहुत काल व्यतीत हो जाने पर भी आपके दाम्पत्य जीवन में वे किलकारियाँ न सुन पाई जिसके लिये प्रत्येक नारी लालायित रहा करती है ।

अनुष्ठान कभी असफल नहीं होते यदि उनमें पूरी निष्ठा हो । श्रद्धा और विश्वास की अभिवृद्धि एवं अतिरेक ने जगज्जननी भगवती ने

महाकवि कालो के पूर्वज उत्तर प्रदेश के निवासी थे । जनपद जालौन में आने से पूर्व जिला आजमगढ़ में निवास करते थे । कालान्तर में यह विद्वान परिवार जनपद जालौन के प्रमुख नगर उरई में आ बसा । यहीं पर महाकवि का प्रादुर्भाव हुआ ।

3.2 आपके पिता पं० छविनाथ जी गुजराती ब्राह्मण थे जो नागर वंश में समुद्भूत हुए थे । इस प्रकार इन उद्भट और प्रकाण्ड विद्वान एवं महामनीषी के सद्गुणों को अपने में समाविष्ट करके स्वयं विवेच्य कवि कालीदत्त नागर भी गुजराती ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए । आपका गोत्र पाराशर था ।

कवि की माता अत्यन्त उदार, सरल एवं धर्मपरायण थीं । वे नित्य प्रति अपने आराध्य पति का चरणोदक लेकर पूजा-पाठ करती हुई प्रायः भक्ति-भावना में लीन रहा करती थीं । उनके मन में गोस्वामी तुलसीदास की माता हुलसी के समान ऐसी कामना थी कि मेरी कुक्षि से जो पुत्र उत्पन्न हो, वह अत्यन्त तेजस्वी और यशस्वी हो । सूर-तुलसी और मीरा के पद वे गुनगुनाकर अपनी गृहस्थी के कार्यों में दत्त चित्त रहा करती थीं । वे सचमुच उमा ही थीं । यथानाम तथा गुण के अनुसार उनमें हमारा क्षमा, ममता और तप की अपार शक्ति विद्यमान थी ।सम्पूर्ण जगत् की उद्भव स्थिति संहारकारिणी शक्ति पर आपकी अगाध निष्ठा थी । इस प्रकार से कहा जा सकता है कि कवि की माँ शक्ति की अनन्य उपासिका थीं । यही कारण है कि बहुत काल व्यतीत हो जाने पर भी आपके दाम्पत्य जीवन में वे किलकारियाँ न सुन पाईं जिसके लिये प्रत्येक नारी लालायित रहा करती है ।

अनुष्ठान कभी असफल नहीं होते यदि उनमें पूरी निष्ठा हो । श्रद्धा और विश्वास की अभिवृद्धि एवं अतिरेक ने जगज्जननी भगवती ने

उमा की सूनी गोदी भर दी । माँ अपने इस प्यारे पुत्र का मुख देख-देख भाव-विभोर हो उठती । भगवती काली की अपार कृपा के कारण ही । दम्पत्ति ने अपने कुल-दीपक का नाम "कालीदत्त" (अर्थात् काली द्वारा दिया हुआ) रक्खा ।

3.4 कवि के पिता अपने युग के सुप्रसिद्ध तांत्रिक थे । किन्तु उनमें क्रोध की भावना किंचित भी नहीं थी । वे भी अत्यन्त, सरल, परोपकारी और दयालु थे । संसार तो दुखों का आगार है ही । उनकी धारणा थी कि वे अपने इस मानव शरीर द्वारा जितना दूसरों का हितकर सकें तो यह उनका परम सौभाग्य होगा । श्री रामचरित मानस की यह अर्द्धाली[4] उनकी प्रेरणा-स्रोत थी । भारतीय संस्कृति, शास्त्र, आगम और निगम पर आपका पूर्ण विश्वास था । आपाद मस्तक आप भारतीय वेश-भूषा धारण करते थे । धोती-अँगरखा आपका दैनिक वेश था । सिर पर पगड़ी धारण करते थे । जीवन के उत्तरार्द्ध में आपने छड़ी भी धारण कर ली थी । भव्य और दिव्य ललाट पर त्रिपुण्ड सुशोभित रहा करता था । त्रिपुण्ड के मध्य रोली अथवा रक्त चन्दन का बिन्दु विराजमान रहता जो उनके शाक्त होने का भी प्रमाण था ।

आहार-विहार अत्यन्त संयत और शास्त्रानुकूल था । आप तख्त पर लेटते थे । पदत्राण के स्थान पर खड़ाऊँ धारण करते थे । तंत्र-मंत्र के द्वारा दुखी और भयंकर रोगों का उपचार करना आपका कौतुक था ।

3.5 ऐसी लोक में मान्यता है कि वैद्य प्रायः निःसन्तान होते हैं । तंत्र मंत्र के ज्ञाता भी इस दुख को प्राप्त होते हैं । पर, वे अपनी साधना द्वारा पुत्र-रत्न की प्राप्ति में सफल हो जाते हैं । पं० छविनाथ

4. बड़े भाग मानुस तन पावा, सुर दुर्लभ सद ग्रन्थन गावा ।।

अपने पिता की एकमात्र सन्तान थे । ईश्वर एवं माँ भगवती की कुछ ऐसी कृपा हुई कि दाम्पत्य जीवन के उत्तरार्द्ध में आपको "काली दत्त" की उपलब्धि हुई इस प्रकार यह भी अपने माता-पिता की एकमात्र सन्तान के रूप में रहे और उनके वंश का नाम उजागर किया । काली कवि की कोई बहन न थी । स्वभाव धन्य कवि काली ने अपने पिता से धन-धान्य आदि सम्पत्ति भले पाई हो अथवा नहीं । पर विरासत के रूप में तंत्र-मंत्र और काव्य की अपार सम्पदा अवश्य प्राप्त की । वास्तव में वे इसके सुपात्र एवं सच्चे अधिकारी थे । एक विद्वान का उद्धरण यहाँ अवलोकनीय है —

"हनुमत्पताका वस्तुतः पवन-तनय श्री रामभक्त आंजनेय हनुमान जी के यश की धवल पताका है । पण्डित कालीदास जी नागर "कालीकवि" की यह अनुपम कृति साहित्य मर्मज्ञों एवं भावुक भक्तों के लिये समान रूप से समादरणीय है । संस्कृत साहित्य में जिस प्रकार अभिज्ञान शाकुन्तल का चतुर्थ अंक सर्वोत्तम माना जाता है, उसी प्रकार रामायण में सुन्दरकाण्ड की अपूर्व आभा है । उसी सुन्दर काण्ड के रम्य कथानक को 135 पद्यों में कवि ने लिखा है । हिन्दी की रचना में भूत भावन भगवान शंकर के स्तवन में एक अष्टक संस्कृत में लिखा गया है । उसमें प्रयुक्त पंचचामरवृत्त शिव-ताण्डव स्तोत्र का स्मरण करा रहा है । इससे विदित होता है कि ग्रन्थकर का हिन्दी पर जितना अधिकार था इतना संस्कृत पर भी था । समस्त पुस्तक मनोयोग पूर्वक अध्ययन योग्य है । स्थान-स्थान पर भाव चातुरी विद्यमान है ।[5] दिग्दर्शनार्थ चन्द्र कलंक के वर्णन में कवि का नैपुण्य[6] द्रष्टव्य है ।

---

5. डॉ० कृष्ण दत्त भारद्वाज एम०ए०, पी-एच०डी०, डी०लिट्० केपत्र से उद्धृत.
6. "सोहत परे कलंक के शशि मह,

शेष कुण्डली पर मनहु सोवत परे गुविन्द ।।"

वास्तव में "काली कवि में अनूठा संगम था । वे पण्डित थे और थे तांत्रिक, ज्योतिषी थे और पहलवान, भक्त थे और थे सुकवि। बहुमुखी प्रतिभा के धनी काली महाराज का श्रृंगार और वीर रस दोनों पर समान अधिकार था ।"[7]

"गुजरातियों की हिन्दी साहित्य निधि में श्रणगार लेखकों-कवियों की मजबूत श्रृंखला ना काली कवि पण एक ज्योतिर्मय मणका छे । आ बात निर्विवा देश खरी छे ।"[8]

-----------0-----------

---

7. दैनिक जागरण कानपुर के 24 मई 1985 के पृ0 4 पर प्रकाशित डॉ0 हरिमोहन लाल श्रीवास्तव के लेख से उद्धृत ।
8. गुजराती के सुप्रसिद्ध विद्वान एवं लेखक विश्वनाथ याज्ञिक के दिनांक 26.6.85 के पत्र के आधार पर ।

कवि का व्यक्तित्व एवं शिक्षा दीक्षा

4.1 शैशव एवं बाल्यावस्था

4.2 कैशोर्य एवं तरुणावस्था

4.3 प्रौढ़ावस्था

4.4 कवि के विद्या गुरु दीक्षागुरु एवं काव्यगुरु

4.5 कवि का दाम्पत्य-जीवन

4.6 काव्य की प्रेरणा

4.7(1) कवि की वेशभूषा, रुचियाँ एवं स्वभाव तथा व्यसन एवं अध्यवसाय

4.8(2) तांत्रिक स्वरूप

4.9 कवि के मित्र : समकालीन कवि

4.10 जीवन के प्रमुख कार्य

4.11 देहावसान

4.1 शैशव मानव जीवन का मनभावन वसन्त है । प्रफुल्ल वदन, उत्फुल्ल नयन, निश्छल हृदय, अंग मार्दव, आकर्षक स्वरूप तथा नैसर्गिक लावण्य किस कठोर हृदय को भी प्रभावित न कर देगें, कहना कठिन है । जिस प्रकार प्रकृति में पतझड़ के उपरान्त हमें मधुमय वसन्त के दर्शन होते हैं । ठीक उसी प्रकार मानव-जीवन के उदय काल के सौन्दर्य की भी उतनी निराली छटा है ।

कालीदत्त का शैशव भी कुछ इसी प्रकार का था । माँ अपनी शीतल और सुखद अंक में लेकर जब अपने लाल का चुम्बन करती तो शतशः स्वर्ग उसके मानस में अवतीर्ण हो उठते । उबटन, तैल-मर्दन, अंजन रन्धनादि के उपरान्त जब स्वजन-परिचारिका उसे वस्त्रों से अलंकृत करती थी शिशु कवि का निसर्ग-सौन्दर्य पुष्प की भाँति प्रस्फुटित होकर सारे वातावरण को सुरभित कर जाता ।

मातृत्व नारी जीवन की चिर साधना है । इसी लिये तो यह प्रसिद्ध है कि "जिस दिन सृष्टि-शिल्पी ने नारी का निर्माण किया होगा उस क्षण उसे जो आनन्दानुभूति हुई होगी, उसका वर्णन अनिर्वचनीय है । नारी का लावण्य कला का उत्स है । नारी सृष्टि की शाखा पर खिली हुईवह मनोरम अनाघ्रात कलिका है जिसमें नन्दन-वन की श्री-सुषमा सन्निहित है । उसका प्रस्फुटन काल ही यौवन है, वही यौवन सौन्दर्य का प्राण है । ऐसी नारी जिधर अपनी आकर्षक दृष्टि डालती है, उधर शत-शत शतदल विहँस उठते हैं । उसके एक एक पद-विन्यास पर धरित्री का सम्पूर्ण वैभव निछावर हो उठता है । उसकी मादक एवं मधुर मुसकान जब सरस अधरों पर थिरक उठती है तो अगणित स्वर्ग वासन्ती-वैभव से समान

हो उठते हैं । उसके चरण मंजीर जब आकुल हो मुखरित हो उठते है तो न जाने कितने कण्ठों में काव्य की मधुर स्वर लहरी प्रादुर्भूत होने लगती है । जहाँ नारी के अप्रितम सौन्दर्य में एक मादक आकर्षणहै वहीं एक चैतन्य स्फूर्ति एवं दीप्ति भी विद्यमान है । यही पुरुष की प्रेरक शक्ति है, गति है और है मानव-जीवन का नारायणत्व की ओर ले जाने वाली ऊर्ध्वगामिनी वृत्ति ।"[1]

नारी का मातृत्व , शिशु का शैशव वास्तव में आनन्द का उद्रेक है । प्रत्येक पुरुष इसके लिये लालायित रहता है । शारदीया-सरिता की भाँति अल्प समय में ही जब शैशव काल समाप्त हो जाता है तो बाल्यावस्था में कुछ-कुछ समझ आने लगती है । संसार की वस्तुओं का बोध होने लगता हैं । पप्पा, मम्मा आदि स्वर तोतली वाणी में ध्वनित होकर माँ के ममता से परिपूर्ण मानस को मुखारित कर उठते है । कितनी कठिन साधना के उपरान्त नारी को 'माँ' शब्द सुनेने को मिलता है ।

नारी के इन अनेक रूपों में सर्वाधिक सम्मानास्पद रूप गौरव शालनी माता का ही है । वेदों में माता के पृथ्वी स्वरूपा कहा गया है । पृथ्वी के समान ही वह सन्तान को धारण करती है ,उस का लालन-पालन करती है और आजीवन धैर्य एवं सहिष्णुता के साथ सन्तान के सुख की कामना करती है । इस लिये माता के ऋण से उऋण होना असम्भव माना गया है । वास्तव में "स्त्री के विकास की चरम सीमा उसके मातृत्व में हो सकती है । "[2]

माता को पृथ्वी स्वरूपा और गीतों से भी बड़ा माना गया है । "माता के स्वभाव में एक ओर धैर्य, त्याग, ममता ,स्नेह का परम

---

1. भारतीय नारी प्रतिरूपों का ऐतिहासिक सर्वेक्षण, डॉ रामस्वरूप खरे, शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध) पृष्ठ 308

2. श्रृंखला की कड़ियाँ, महादेवी वर्मा, पृष्ठ 96

उत्कर्ष देखते थे तो दूसरी ओर उसके पुत्रवती होने को भी अनिवार्य मानते थे ।" [3] पत्नी का पद पा कर नारी के व्यक्तित्व का विकास अवश्य होता है पर, उसके जीवन की सच्ची सार्थकता और पूर्णता तभी होती है जब वह माँ बनती है । सन्तान को जन्म देना ,उस का लालन-पालन करना,अन्तिम क्षण तक उसकी रक्षा करना और आजीवन उसकी उन्नति में योग देना - मातृत्व का यही आदर्श है । यही उसका शाश्वत रूप है ।जीवन भर की साधना और तपस्या से माता अपने वात्सल्य को चरितार्थ करती है । एक शब्द में वह अपने समस्त व्यक्तित्व को अपनी सन्तान में लय कर देती है । " ैx नारी केवल माता ह और उसके उपरान्त वह जो कुछ है सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है । मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना , सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है । "[4]

कवि काली का ऐसा ही शैशव और बाल्यकाल व्यतीत हुआ जिसमें माँ का असीम प्यार और दुलार निहित था ।

4.2 किशोरावस्था एवं तरूणाई मानव जीवन की वे मधुरतम घड़ियां हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिये प्रत्येक किशोर और युवामन सदैव लालायित रहता है । बिहारी ने इसीलिये तो लिखा है कि यह वय ही ऐसी होती है जिसमें मनुष्य आगामी पीड़ा नहीं देखता है । चढ़ती उम्र में कौन निर्दोष रह पाता है । [5]

यह समझना गलत है कि किसी देश के मनुष्य सद सर्वदा

---

3. पोजीशन आफ वी मैन इन हिन्दू सिविलाइजेशन,अल्टोकर, अध्याय 3 पृ0 118
4. गोदान,उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द्र , पृष्ठ 151
5. " कितने जग औ गुन करै वय मै चढ़ती नार ।" बिहारी सतसई

किसी विचार या आकार को एक ही समान मूल्य देते आये हैं । पिछली शताब्दी में हमारे देशवासियों ने अपने अनेक पुराने संस्कारों को विस्मृत कर दिया और अवशिष्ट संस्कारों के नये अनुभवों को मिश्रित कर नवीन मूल्यों की कल्पना की है । वैज्ञानिक तथ्यों के परिचय से राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के दबाव से और आधुनिक शिक्षा की मानवतावादी दृष्टि के बहुल प्रचार से हमारी पुरानी मान्यताओं में बहुत अन्तर आ गया है । उदाहरण के लिये साहित्य को लें । आज से दो सौ वर्ष पूर्व सहृदय को दुखान्त नाटकों की रचना अनुचित जान पड़ती थी जिसके कारण यवन(ग्रीक) साहित्य इतना मण्डित समझा जाता है और जिन्हें लिखकर शेक्सपियर संसार के अप्रतिम नाटककार बन गये हैं । उन दिनों कर्मफल प्राप्ति की अवश्यंभाविता और पुनर्जन्म में विश्वास इतने दृढ भाव से बद्धमूल थे कि संसार की सामंजस्य अवस्था में किसी असामंजस्य की बात सोचना एकदम अनुचित जान पड़ता था । किन्तु अब यह विश्वास शिथिल होता जा रहा है और मनुष्य के इसी जीवन को सुखी और सफल बनाने की अभिलाषा प्रबल हो गई है । समाज के निचले स्तर में जन्म होना अब किसी पुराने पाप सफल नहीं माना जाता बल्कि मनुष्य की विकृत समाज-व्यवस्था का परिणाम (अतएव सहानुभूति योग्य) माना जाने लगा है । इस प्रकार परिवर्तन एक-दो नहीं अनेक हुए हैं । इन सबके परिणाम स्वरूप सिर्फ हमारी प्रकाशन भंगिमायें ही अन्तर नहीं आया है ।उसके उपयोग या ग्रहण के तौर तरीके में भी फर्क पड़ गया है । साहित्य के जिज्ञासु को इन परिवर्तित और परिवर्तनमान मूल्यों को ठीक-ठीक जानकारी न हो, तो वह बहुत सी बातों के समझने में त्रुटि कर सकता है और फिर परिवर्तित और परिवर्तन मान मूल्यों की ठीक ठीक जानकारी प्राप्त करके ही हम यह सोच सकते हैं कि परिस्थितियों के दबाव से जो परिवर्तन हुए हैं, उनमें कितना अपरिहार्य है, कितना वांछनीय और कितना ऐसा

है, जिसे प्रयत्न करके वांछनीय बनाया जा सकता है ।[6] क्योंकि न तो कोई प्राचीन वस्तु होने से ही ग्राह्य हो जाती है और न कोई अर्वाचीन होने से अग्राह्य । सच्चा पारखी स्वविवेक द्वारा ही ग्राह्या-ग्राह्य का निर्णय करता है, पूर्वाग्रह के अनुसार नहीं ।[7]

निःसन्देह कालीकवि के जीवन में नवीन एवं प्राचीन तत्वों का समन्वय हुआ । उनकी युवावस्था उस तीखे सूर्य की प्रचंड किरणों के समान थी जिसमें ऊष्मा की तीव्रता ही सर्वत्र विद्यमान रहती है । प्रातःकालीन सूर्योदय का कोमल भाव न होकर प्रचुर प्राखर्य ही दृष्टिगोचर होता है । किन्तु जैसे पाषाणों के मध्य कोई अन्तःसलिला अपना कला-कल स्वर विवादित करती हुई प्रवाहित होती है ठीक उसी प्रकार कवि के इस उद्दण्ड एवं कठोर व्यक्तित्व के मध्य सहानुभूति और करुणा की कल-कल निनादिनी भी मुखरित हुई थी जिसमें अवगाहन करके लोक ने सान्त्वना और शीतलता प्राप्त की । कहा भी गया है -

"यौवन सबका सुन्दर लगता,
यौवन में मन मचला करता ।
यौवन का निर्झर निर्भय हो,
पाषाणों में उछला करता ।।[8]

4.3 कवि अपनी प्रौढ़ावस्था में अध्ययन-अध्यवसाय एवं साधना में अत्यधिक व्यस्त रहा । विचित्र-विचित्र अनुष्ठान वशीकरण, माँ सरस्वती

---

6. साहित्यिक निबन्ध, सम्पा० डॉ० त्रिभुवन सिंह-लेख "परम्परा और आधुनिकता" लेखक-डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, संस्करण 1970 पृ०-613.
7. "पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम् ।
सन्तः परीक्षान्यतरद् भजन्ते मूढः पर प्रत्ययनेव बुद्धि ।।"
— मालविकाग्निमित्र, कालिदास.
8. महाकाव्य अपर्णा, महाकवि रामस्वरूप खरे, तृतीय सर्ग.

मारण एवं उच्चाटन आदि क्रियाओं की सिद्धि प्राप्त की । माँ सरस्वती की तो ऐसी अपार कृपा इस तांत्रिक कवि पर हुई कि अनेक छन्द कवि निर्बाध गति से निर्मित करता जाता था और अपने कवि-साथियों को सुनाता भी जाता था । अपने शोध-सम्बन्धी परिभ्रमण में उरई में मुझे अनेक ऐसे व्यक्ति मिले जिन्होंने मुझे बतलाया कि वे अक्सर अड्डा मन्दिर पर बैठते थे । वहाँ पर उनके कविमित्र और अन्यान्य श्रोता भी एकत्र हो जाया करते थे । बैठे-बैठे वे फर्श पर कोयले से लिख-लिखकर छन्द निर्माण करते और सुना देते थे । किसी भी दिये हुए विषय पर वे तत्काल काव्य निर्माण कर देते थे । इस दृष्टि से उन्हें आशुकवि कहा जा सकता है । "आस्तिक या दिव्य काव्य के सर्जक कवियों में सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई आदि की परम्परा के अन्य प्रमुख काव्य विभूतियों में कवि कालीदत्त नागर का उल्लेखनीय स्थान है । आस्तिक कविता के क्षेत्र में वे बेजोड़ माने जाते हैं । लोक जगत में वे काली कवि के नाम से सुप्रसिद्ध रहे हैं । उनकी शाश्वत और कालजयी रचनाओं में ईश्वरानुराग, आत्मार्पण देव-निष्ठा और समग्र सृष्टि को आनन्दित करने के भावदर्शन प्राप्त होते हैं । उनकी कविता मनुष्येतर स्तर से दिव्य उपलब्धियों की संप्राप्ति कराती है । कालीकवि भावी पीढ़ियों को सतत शान्ति और माधुर्य का सतत सन्देश देते रहेंगे । उसका काव्य-प्रकाश चिरकाल तक सहज पाठकों को अनुप्राणित तथा अनुप्रेरित करता रहेगा ।"[9]........कालीकवि आशु कवि थे । उन्होंने लगभग एक लाख छन्दों की रचना की । विषय पर वे तुरन्त कविता पढ़ने लगते थे । अनुयुक्तों से वे अत्यधिक प्रभावित थे ।[10] प्रौढ़ावस्था में जीवन के बहुत कुछ अनुभव प्राप्त हो चुके थे कवि को । यही कारण है कि अब उनके काव्य में व्यवहृत ज्ञान और परिस्थितियों का स्पष्ट अंकन होने लगा था । जो घटनाएँ नित्य अपने अथवा अपने मित्रों के जीवन में घटती थी, वे कवि के काव्य का प्रतिपाद्य बनने लगी।"

---

9. राष्ट्रभाष्य सन्देश, हिन्दी सा०स०प्रयाग, 15जून 1985 का अंक,पृष्ठ 2 पर श्री चक्रधर नलिन के लेख से उद्धृत.

10. उपर्युक्त.

"छवि रत्नम" में इसकी स्पष्ट छाप विद्यमान है । "काली कवि की रचनायें पद्माकर की रचनात्मक शक्ति से होड़ लेती हैं । वही प्रवाह, वही टकसाली शब्दारचना, वही अन्तिम पंक्ति को प्रभावक बनाने का सफल प्रयत्न सचमुच कवि काली की कविता को पढ़कर लगता है कि वह ब्रज भाषा की पारम्परिक रचना-शैली के अन्त में, अन्तिम दीपशिखोदय थे । अतः उनमें ब्रजभाषा कविता की सम्पूर्ण सुन्दरता और प्रवीणता, माधुर्य और मुहावरेदानी भक्ति और तल्लीनता, पूज्य और रमणीय भावों का एक साथ संगम दृष्टिगोचर होता है ।"[11]

4.4 प्रतिभा जन्मजात होती है । ऐसी प्रतिभा-सम्पन्न विभूति को औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती । इष्टदेव की कृपा, अनुभव, वातावरण की भावुक अनुभूति ही सबल एवं प्रेरक अभिव्यक्ति बन जाती है । कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, आदि के पास कोई विशिष्ट शैक्षिक उपाधि नहीं थी फिर भी ये सब साहित्य जगत के जाज्वल्यमान नक्षत्र सिद्ध हुए ।

जिस प्रकार गुजराती के प्रख्यात उपन्यासकार पन्नालाल पटेल का नाम इस बार पूरी तरह नये सन्दर्भों में उभर कर सामने आया है । उन्हें इस बार ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। पुरस्कार की घोषणा के बाद से उन्हें सम्पूर्ण भारतीय साहित्य-जगत में नये सिरे से जानने समझने की ललक पैदा हुई है । यह आकस्मिक नहीं है कि विधिवत शिक्षा प्राप्त करने का नाम पर मात्र आठवीं जमात तक पढ़ जाने वाला बालक पन्नालाल अपने गहन जीवन अध्ययन, किस्सागोई की अपूर्व क्षमता, अपनी धरती से अटूट जुड़ाव, ग्राम्य-जीवन के सुख-दुख की सूक्ष्म पहचान, मानवीय पीड़ाओं और हर्षोल्लास को सहज किन्तु काव्यात्मक भाषा में व्यक्त कर सकने की अद्भुत प्रतिभा के कारण भारत के शीर्षस्थ साहित्य-कारों की श्रेणी में आ खड़ा विधिवत् औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की थी।

---

11. डॉ० विश्वंभर नाथ उपाध्याय के लेख "ब्रजभाषा के पारम्परिक काव्य के उत्कृष्ट रचनाकार काली कवि" से उद्धृत.

आपके पिता पंडित छविनाथ ने घर पर ही उनके प्रारंभिक अध्ययन की व्यवस्था कर दी थी । स्वयं उनके पिता ने काली कवि को संस्कृत का विधिवत् अध्ययन कराया । प्रारम्भ में गीता, दुर्गा-सप्तशती के श्लोक खूब रटाये गए । इस प्रकार पूज्य पिता ही उनके शिक्षा गुरु के रूप में हम सबके समक्ष प्रस्तुत होते हैं । स्वाध्याय और अध्ययन की ललक पुत्र में उत्पन्न करने का श्रेय वास्तव में छविनाथ जी को ही है । फल यह हुआ कि समय पर कवि उर्दू, फारसी, गुजराती, संस्कृत और हिन्दी का निष्णात विद्वान बन गया । इस सन्दर्भ में यह लोकविश्रुत है — प्रारम्भ में काली का मन अध्ययन में अधिक नहीं लगता था । इनका झुकाव तंत्र-मंत्र अथवा जादू-टोना की ओर विशेष था । पिता ने, जब वे जगम्मनपुर जा रहे थे तो रास्ते में अपने पुत्र की परीक्षा ली । किन्तु उनके द्वारा जब समुचित उत्तर न मिला तो उन्होंने एक तमाचा मारा और अप्रसन्न होकर—पुत्र को वहीं छोड़कर वे आगे बढ़ गए । वहाँ उन्हें एक महात्मा जी मिले । महात्मा जी ने पूछा— "बेटा । तुम क्यों रो रहे हो?" उत्तर में कवि ने रोने का कारण और सारा वृत्तान्त कह सुनाया । महात्मा जी को बालक पर दया आ गई । उन्होंने काली की जिह्वा पर कुछ लिखा और कहा—"जाओ तुम्हें सिद्धि प्राप्त होगी और तुम्हारी जिह्वा पर सदैव सरस्वती विराजमान रहेगी ।" इस जन श्रुति का उल्लेख हिन्दी संहिता के अधिकारी विद्वान विद्वान श्री वृजधर नलिन ने भी किया है ।[13] किम्बदन्ती है कि

13. "ऐसा कहा जाता है कि बचपन में इन्हें स्वयं गणेश जी साधुवेश में जगम्मनपुर (जालौन) के पास मिले और उनकी जिह्वा पर घास के तिनके से बीजमंत्र लिख दिया उनके आशीष से वे अबाधित मंत्रोच्चार और संस्कृत ग्रन्थों का धारा प्रवाह पठन-पाठन, उच्चारण करने लगे । उन्होंने देव साधना के द्वारा हिन्दी भाषा में अनेक महाकाव्यों, काव्यों तथा संस्कृत ग्रन्थों की रचना की । तंत्र-मंत्र, योग पर उनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हिन्दी भाषा की प्राण है । "हनुमत्पताका" "छविरत्न" आदि दो दर्जन पुस्तकों के प्रणेता काली अपने समय के महान रचनाकार रहे हैं। उनकी रचनाओं में "दिव्यानुबोध है ।"——राष्ट्रभाषा, सन्देश, हि०सा०स०, प्रयाग भा-2, अंक-3 15 मई जून 1985 से उद्धृत ।

कवि के पिता के यहाँ एक तांत्रिक महात्मा प्रायः आया करते थे । कवि पर उनके व्यक्तित्त्व का अनूठा प्रभाव पड़ा । कवि इतना अधिक संवेदनशील और भावुक हो उठा कि उन्हें ही अपना दीक्षागुरु मान लिया और सर्वस्व अर्पण कर डाला । "हृदय की सहज आकुलता ही सार्वभौमिक सत्यों का मर्म स्पर्श कर सकती है । प्रत्येक साधना में विह्वलता, तन्मयता एवं दृढ विश्वास अपेक्षित है बिना इसके साध्य की प्राप्ति दुर्लभ ही नहीं वरन् असंगत है और समर्पणहीन जीवन भला पूर्ण कैसे माना जा सकता है।"[14] गुरु तत्त्व जीवन रक्षा एवं प्राण पोषण की कला है । इसलिये जीवन के साथ-साथ गुरु तत्त्वसंप्रवत्त रहता है । कहीं माता के रूप में, कहीं शिक्षक रूप में, कहीं सखा के रूप में और अन्ततोगत्वा इन संस्कारों से पोषित पिपासु ललक एवं सतत कामना का आराधना में परम सौभाग्य से प्राप्त सद्गुरु के रूप में गुरु तत्व प्रकट होकर जीवन मात्र का कल्याण करता रहता है ।"[15] गुरु का आश्रय पाकर निरवलम्ब व्यक्ति भी अज्ञानी से ज्ञानी बन जाता है । और भव-कूप से उद्धार पा लेता है ।[16]

वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुसार ऋषि मुनियों ने मनुष्य के समग्र जीवन को चार वर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों में बाँटा था और गुण स्वभाव तथा कर्म के अनुसार चार आश्रमों {ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास} की रचना की थी । इनमें अपने-अपने वर्ण-आश्रम के अनुसार कार्य करता हुआ व्यक्ति सहज रूप में ही परम पद प्राप्त कर लेता था । पच्चीस वर्ष के उपरान्त ब्रह्मचर्य व्रत का पालन एवं शिक्षा पूर्ण करके ब्रह्मचारी अपने गुरु से गृहस्थ धर्म में प्रविष्ट होने की अनुमति प्राप्त करता था जिससे वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त करता हुआ चिर आनन्द में लीन हो सके ।

---

14. अर्चना {काव्य संकलन} रचयिता-रामस्वरूप खरे, "अपनी बात" से उद्धृत प्रकाशन-अभिनव साहित्य परिषद् मथुरा प्र०सं० 1963.
15. पूजा के फूल, रचयिता-रामस्वरूप खरे, डा० कुंजबारी लाल श्रीवास्तव एम०ए०, पी-एच०डी०, डी०लिट० के उपोद्घात से अवतरित अंश. प्र०सं० जौलाई 1974 पृष्ठ "आ".
16. "तमाछन्न भवकूप में नर-घट निर अवलम्ब । निकसत ज्ञान गुवारि भर गुरु गुण पा अवलम्ब ।।" —— वही पृ०-17.

उचित अवसर पर पं० छविनाथ ने भी अपने एकमात्र प्रिय पुत्र का विवाह "अन्ना नाम की सुशीला, गृह कार्यों में दक्ष तथा अत्यधिक रूपवती कन्या के साथ कर दिया । इसका तत्सम नाम संभवतः अन्नापूर्णा रहा होगा । दाम्पत्य-जीवन सुख पूर्वक व्यतीत करते हुए कालान्तर में कवि को एक पुत्र रत्न प्राप्त हुआ ।

पुत्र का नाम छन्नू था । छन्नू का प्रथम विवाह झाँसी में हुआ था । किन्तु दुर्भाग्य कि द्विरागमन के उपरान्त प्रथम पत्नी का देहावसान हो गया । तत्पश्चात् छन्नू का विवाह (दूसरा) इन्हीं की अत्यन्त सुन्दरी साली से सम्पन्न हुआ । आपकी द्वितीय पत्नी सन्तोषी बाई का विवाह आगरा के किसी प्रसिद्ध ओझा के यहाँ तय हो रहा था । किन्तु छन्नू उसके रूप-सौन्दर्य पर पूर्णरूप से मुग्ध था । इसकी हठ को देखकर कालीकवि ने अपने पुत्र का द्वितीय विवाह सन्तोषी के साथ करा दिया । कहते हैं कि आगरा वाले ओझा ने यह कह दिया था कि सन्तोषी को कुछ वर्ष पश्चात् ही वैधव्य भोगना पड़ेगा । यह भविष्यवाणी कहें अथवा अभिशाप, पर विधि के विधान को कौन टाल सका । होनी होकर ही रही । ढाई वर्ष के सुखद दाम्पत्य जीवन को भोगकर, छन्नू ने संखिया खाकर, सन्तोषी को इस संसार-सागर में असहाय सा भटकता हुआ छोड़ दिया । इस घटना से काली के मन पर बड़ा ही कुप्रभाव पड़ा ।[17] पर इसी हृदय ने आगे चलकर कवि की कृतियों में करुण रस का संचार किया । स्नेह, सहानुभूति, करुणा, दया, क्षमा, ममता, आदि नारी के स्वाभाविक गुणों का समावेश भिन्न-भिन्न कृतियों में दृष्टिगोचर होता है, उसके मूल में पुत्र-वधू की दयनीय एवं एक अप्रकट व्यथा की गाथा ही प्रमुख है ।

4.6 **युगीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, साहित्यिक आदि परिस्थितियों से कालीकवि के काव्य को प्रेरणा एवं प्रगति प्रदान की।**

17. काली कवि के 80 वर्षीय शिष्य परशुराम उरई से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर.

"प्रत्येक कवि या लेखक यही कामना किया करता है कि वह कुछ कालोपरान्त अपनी कोई ऐसी प्रौढ़ रचना पाठकों के लिये छोड़ जाय, जिसमें वह अपने जीवन की सम्पूर्ण अनुभूतियों को साकार रूप दे सके और जो उसकी अमरकृति कहलाने की अधिकारिणी हो ।"[18]

काव्य शब्द कवि शब्द में "ष्यञ" प्रत्यय के योग से निष्पन्न हुआ है । "कवेरिद" कर्मभावों वा"[19] अर्थात् कवि का कर्म या भाव काव्य कहलाता है । इस सन्दर्भ में कवि व्युत्पत्ति परक व्याख्या जानना भी परमावश्यक है । कवि शब्द को "कु" धातु में "अच:ई प्रत्यय के संयोग से निष्पन्न बताकर उसका अर्थ इस प्रकार किया गया है - "कवते सर्व जानाति, सर्व वर्णयति, सर्व सर्वतो गच्छति" अर्थात् जो सब कुछ जानता है, सभी का वर्णन करता है तथा चारों ओर जाता है, कवि कहलाता है ।"[20] महगोपाल के अनुसार "रस और भावों के विमर्श कर्ता को कवि कहते हैं ।"

काव्य का मूल प्रेरणा है । बिना प्रेरणा के कोई भी कवि काव्य का सृजन नहीं कर सकता ।

आचार्य मम्मट के अनुसार "शक्ति‖प्रतिभा‖ निपुणता, लोक-व्यवहार शास्त्र तथा काव्यानुशीलन प्राप्त निपुणता ‖व्युत्पत्ति‖ और काव्यज्ञ की शिक्षा से अभ्यास ।"[21] संस्कृत काव्य शास्त्रों में शब्द भेद से प्रायः तीन ही

---

18. साकेत में काव्य संस्कृति और दर्शन डा० द्वारिका प्रसाद सक्सेनापृ048
19. हल युद्ध कोष
20. उपर्युक्त ।
21. "शक्ति निपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात् ।
    काव्यज्ञ शिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे ।।" काव्य प्रकाश 1/3

हेतु स्वीकार किये गये है । ये हैं——प्रतिभा, अभ्यास और व्युत्पत्ति । "इस प्रकार कहा जा सकता है" प्रतिभा व्युत्पत्ति और अभ्यास तीनों की समष्टि ही काव्य-रचना का हेतु हैं । तीनों पृथक-पृथक नहीं बल्कि मिलकर ही कौण हेतु बनते हैं । समाधि (चित्त की एकाग्रता) न केवल काव्य-रचना बल्कि प्रत्येक रचनात्मक कार्य के लिये आवश्यक है।"[22]

का ी कवि के काव्य की प्रेरणा उनके माता-पिता का कवि हृदय, भक्ति-भावना, समाज की दीन दशा, गुरूजनों की कृपा एवं कवि की स्वानुभूतियाँ हैं जिन्होंने उसके मानस को भरकर सम्यक वाणी प्रदान की ।

"कवि की दृष्टि से उदात्त काव्य का प्रयोजन कीर्ति ही माना जा सकता है । कीर्ति एक ऐसा तत्त्व है जिसकी अभिलाषा जीवन मुक्त आत्माओं को छोड़कर प्रत्येक सामाजिक को होती है । कवि भी इसका उपवाद नहीं है"।[23] अत: "अक्षय कीर्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से कवि गण रस सिद्ध काव्यों की रचना में प्रवृत्त होते है ।"[24]

दृष्टि भेद तो विद्वानों में होता ही है । इसे एकउदाहरण द्वारा समझा जा सकता है । "उषा काल में ओस की बूंदों से परिपूर्ण दूर्वादल को देखकर वैज्ञानिक, दार्शनिक और साहित्यकार तीनों की प्रतिक्रियायें भिन्न-भिन्न होगी । वैज्ञानिक की दृष्टि वस्तुन्मुखी होगी । वह बिन्दुओं का तात्त्विक विश्लेषण करेगा । जल बिन्दुओं का आकार, तापमान आदि की गणना उसे करनी होगी । दार्शनिक जीवन की नश्वरता के दर्शन उसमें कर सकता है । उसे जीवन के उन्मीलन-निमीलन और अस्तित्व का आभास ओस-कणों में मिल सकता है । किन्तु साहित्यकार को दूर्वादल पर विद्यमान

22. भारतीय काव्यशास्त्र, डॉ0 रामानन्द शर्मा, पृ0सं01983, विनोद पु0सं0 आगरा पृ0 20.
23. उपर्युक्त .. .. पृ0सं028.
24. "जयन्ति ते सुकृतिनो रस सिद्धा: कवीश्वरां: । नास्ति येषां यश: कायें जरामरणजं भयम् ।।" भर्तृहरि

ओस-कण हरित मखमल पर श्वेत मोतियों जैसे दिखेंगे । यह विषय के माध्यम से हमारी सौन्दर्यानुभूति को जाग्रत कर देगा । अनुभूति विषय की नहीं होती, बल्कि विषय के माध्यम से होती है । विषय माध्यम है अनुभूति जाग्रत करने का । कवि की इस साहित्य सृष्टि में "कल्पना" का महत्व पूर्ण स्थान है । किन्तु कवि की कल्पना जीवन सत्य से नितान्त भिन्न कोई वस्तु नहीं है । कवि जीवन-सत्य के अनुरूप ही कल्पना करता है, इसलिये यह मत कि कल्पना पर आश्रित काव्य में सत्य का स्थान ही क्या हो सकता है —— संगत नहीं । कवि की कल्पना शून्य पर नहीं जीवन-सत्य पर अवलोम्बित होती है ।"[25]

4.7§1§ व्यक्तित्व दो प्रकार का होता है । बाह्य और आभ्यान्तरिक। बाह्य व्यक्तित्व के अन्तर्गत ही वेष भूषा का प्राधान्य माना जाता है जबकि आभ्यान्तरिक व्यक्तित्व के लिये भिन्न-भिन्न गुणों का होना अपेक्षित है ।

भारतीय परिवेश में ललित-पालित कवि काली को प्रारम्भ से ही भारतीय संस्कृति पर अगाध निष्ठा थी । यही कारण है कि उन्होंने सदैव सरल एवं सौम्य जीवन का आदर्श सम्मुख रखते हुए स्वदेशी वस्त्रों को ही स्वीकार किया । धोती-कुर्ता एवं सिर पर उष्णीष उनका दैनन्दिन वेश था । शीतकाल में ~~अहर्~~ यदा-कदा अँगरखा की भाँति अचकन्सी धारण कर लेते थे । आपके व्यक्तित्व को स्थापित करते हुए श्री बादल जी ने लिखा है —— "उन्नत और स्वस्थ्य कलेवर, गौरवर्ण, भाल पर त्रिपुण्ड, त्रिपुण्ड पर सिन्दूरबिन्दु तथा कण्ठ में रुद्राक्ष की माला । अपने इस तेजोमय बाह्य स्वरूप से ~~ही~~ जन-मानस को बलात् अपनी ओर आकृष्ट करने वाले उरई निवासी पंडित कालीदत्त नागर सुप्रसिद्ध तांत्रिक थे । मारण, मोहन, वशीकरण उच्चाटन आकर्षण और स्तंभन रूप षट कर्म साधकों को ओझा पद से अभिहित किया जाता रहा है । काली महाराज ऐसे ही साधकों में से थे ।"[26]

25. भारतीय काव्य शास्त्र,डॉ0रामानन्द शर्मा, पृ0-30.
26. डॉ0 श्यामसुन्दर "बादल" के लेख का अंश. .

शील और परोपकार की भावना से आप ओत-प्रोत थे । आपके काव्य में जिन हृदयहारी प्राकृतिक छवियों का अंकन है उनके मूल में बुन्देलखण्ड की नैसर्गिक सुषमा का ही प्राधान्य है ।

"अपने प्राकृतिक छवियों की रमणीयता के कारण बुन्देलखण्ड की भूमि अनेक सुकवियों की रंगस्थली रही है । चारों ओर विंध्य की श्रेणियाँ, मधुर(महुवा)तेंदू, करौंदा, करील का सघन वन, साथ ही बेतवा, चम्बल, धसान आदि नदियों ने इसे रस-सिक्त बना दिया है । स्वर्गीय कालीदत्त नागर' वाली कवि' का जन्म बेतवा और यमुना के संगम के समीप उरई (जालौन) में हुआ । " 27

जहां तक कवि की रुचियां का प्रश्न है वे सब मानवीय गुणों से परिपूर्ण थी । सात्विक आहार में दूध,दलिया,चावल, गेंहू की रोटी फल आपको विशेष प्रिय थे । उर्द की दाल आपको बहुत पसन्द थी । भोजनोपरान्त ताम्बूल का सेवन आप स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त लाभप्रद मानते थे । प्रत्युत्पन्नमति सम्पन्न आपका स्वभाव अत्यन्त सरल था पर ऊपर से शुष्क और कठोर दृष्टिगोचर होते थे । अश्वारोहण और प्रातः भ्रमण आपकी अन्य प्रिय रुचियां थी । परिचरों एवं शिष्यों से शरीर पर तैल-मर्दन कराने में आपको अत्यधिक आनन्द मिलता था । आप मल विद्या के प्रति भी आकृष्ट थे ।

काव्य - शास्त्रों का अध्ययन - मनन ही आपका एक मात्र व्यसन था । आप काष्ट की लम्बी चौकी पर विश्राम एवं शयन करते थे ।काव्य रचना करते समय पर चौकी का आश्रय लेते थे ।

==

27.साप्ताहिक हिन्दुस्तान(नई दिल्ली-लेख रामचरण हयारण 'मित्र' जून 1962 से उद्धृत ।

•4.7.{2}{ख} तांत्रिक उपासना अभ्यान्तर है, सर्वथा गोप्य है, अधिकारी को प्रदत्त विद्या ही सफल होती है । योग्य अधिकारी के अभाव के कारण तांत्रिक विद्या इतनी अधिक गोप्य तथा गूढ़ मानी गयी है ।

भारतीय सभ्यता के दो आधार पीठ हैं निगम और आगम, वेद और तंत्र । वेद के समान तंत्र भी मान्य प्रामाणिक तथा प्राचीन है, दोनों में अन्तर यही है कि वैदिक उपासना बाह्य है, सर्वत्र प्रकाशन है परन्तु तांत्रिक उपासना आन्तरिक और अत्यन्त गोपनीय है । तंत्र शब्द का व्यापक अर्थ शास्त्र या सिद्धान्त है । तंत्र का शब्दार्थ निम्न-लिखित है :-

"तनोति विपुलानर्थान तत्त्व मंत्र समन्वितान ।
त्राणं कुरुते यस्मान तंत्रमित्यभिधियते ।।"

अर्थात् वह शास्त्र जो तत्त्व और मंत्र से समन्वित अर्थ का तनन {विस्तार} करता है और इस प्रकार साधकों का त्राण करता है ।

—"कामिक आगम"

तंत्र की दूसरी संज्ञा आगम है । आगम वह शास्त्र है जिसके द्वारा योग तथा मुक्ति के उपाय बुद्धि में आते हैं । यथा -

"आगच्छन्ति आरोहन्ति यस्माद अभ्युदय निःश्रेयसोपाय स आगमः ।" [28]

कर्म उपासना और ज्ञान के स्वरूप का विवेचन निगम करता है और उनके साधनों का वर्णन आगम करता है । देवता के स्वरूप गुण कर्म आदि का चिन्तन जिनमें किया गया हो तद् विषयक मंत्रों का उद्धार किया गया हो तथा उपासना के पाँचों अंग-पटल, पद्धति, कवच, नाम सहस्त्र और स्तोत्र व्यवस्थित रूप से दिखलाए गए हो, उन ग्रन्थों को तंत्र कहते हैं ।

28. तत्व वैशारदी, वाचस्पति मिश्र, पृ० 17.

वैष्णव तंत्रों के दो प्रधान भेद है - {1} पांचरात्र, {2} वैखानस। आजकल पांचरात्र ही वैष्णव आगम का प्रतिनिधि माना जाता है। इसी का प्रचुर साहित्य भी उपलब्ध होता है। वैखानस आगम का कभी बोल बाला था, परन्तु आजकल वह लुप्त प्राय हो गया है। पांचरात्र के नामकरण के भिन्न-भिन्न कारण बताए जाते हैं। रात्र का अर्थ है ज्ञान। परम तत्त्व, मुक्ति, भुक्ति, योग तथा विषय{संसार} इन पाँचों के प्रतिपादक होने से इस आगम का नाम पांचरात्र पड़ा है। यह मत नारद पांचरात्र के अनुसार है। किन्तु महाभारत के अनुसार चारों वेद तथा सांख्य योग के समाविष्ट होने के कारण इस तंत्र का यह विचित्र नाम है। अतः विद्वानों का अनुमान है कि यादव वंशी क्षत्रियों में विशेषतः प्रचरित होने के कारण ही यह सात्त्वत कहा जाता है था। यह सिद्धान्त नितान्त प्राचीन है। स्पन्द कारिका में पांचरात्र श्रुति तथा पांचरात्र उपनिषद् से वचन उद्धृत किए गए हैं, जिससे इस आश्रम के श्रुति सम्मत होने की बात प्रमाणतः पुष्ट होती है। छान्दोग्य उपनिषद में यह मत "एकायन" के नाम से उल्लिखित है। इतना प्राचीन होने पर भी यह महाभारत युग के इसकी विशेष ख्याति बढ़ी। परन्तु पांचरात्र के तंत्र के प्रतिपादक संहिता ग्रन्थ मध्य युग के पूर्वार्ध की रचना है। इन संहिताओं की संख्या 108 से भी ऊपर बतलाई जाती है, परन्तु इनमें से प्रकाशित संहिताएं एक दर्जन से ऊपर नहीं है। अहिर्बुध्न्य संहिता, ईश्वर संहिता, कपिंजल संहिता, जयाख्य संहिता, पराशर संहिता, पाद्म-तन्त्र, वृहत ब्रह्म संहिता, भरद्वाज संहिता, विष्णु संहिता, इस वैष्णव आगम के मान्य प्राचीन ग्रन्थ हैं। इनमें भी अहिर्बुध्न्य संहिता का महत्व दार्शनिक दृष्टि से सबसे अधिक है। इन संहिताओं का प्रभाव हिन्दी साहित्य के ऊपर साक्षात् न होकर परम्परा से माना जा सकता है। इनका सीधा प्रभाव रामानुजाचार्य के श्री वैष्णव मत पर और उससे सम्बद्ध होने के कारण रामानन्द तथा उनके वैष्णव सम्प्रदाय पर पड़ा। पांचारात्र संहिताओं और हिन्दी के वैष्णव साहित्य का परस्पर सम्बन्ध विद्वानों

के लिए विशेष अनुसन्धान का विषय है ।

पांचरात्र संहिताओं के विषय चार है-§1§ज्ञान, ब्रह्म,जीव तथा जगत् के आध्यात्मिक रहस्यों का उद्घाटन और सृष्टि तत्व का विवेचन ।

§2§ योग - मुक्ति के साधनभूत योग और उसकी प्रक्रियाओं का वर्णन । §3§ क्रिया - देवालय का निर्माण मूर्ति के स्थापन में मूर्ति के विविध आकारों आदि का विशिष्ट वर्णन ।

§4§ चर्या - आन्हिक क्रिया मूर्ति तथा मंत्र का पूजन ।

इनमें मुख्य स्थान चर्या का है जिसके वर्णन में आधे से अधिक स्थान दिया गया है, शेष आधे में सबसे अधिक क्रिया, क्रिया से कर्म• ज्ञान और उससे कम योग का विवेचन है । पांचरात्र की तत्त्व मीमांसा के ऊपर उसका साधन मार्ग अवलम्बित है । यह तन्त्र परम तत्त्व नारायण के उभय भावों अर्थात् निर्गुण और सगुण को स्वीकार करता है । नारायण सगुण तथा निर्गुण दोनों एक साथ है। प्राकृत गुणों से हीन होने के कारण वह निर्गुण है, परन्तु षड्गुणों से युक्त होने के सगुण है ।"भगवान में जिन षड्गुणों का निवास है, हैं - ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य, बल, वीर्य और तेज। इसीलिए नारायण "षड्गुण विग्रह" कहलाते हैं । उनकी शक्ति का सामान्य नाम लक्ष्मी है । भगवान अपनी लीला से जगत् के मंगल साधन केलिए अपने ही आप चार रूपों की सृष्टि करते हैं — §1§ व्यूह, §2§विभव, §3§ अर्चावतार §4§अन्तर्यामी अवतार । वासुदेव से संकर्षण §जीव§की उत्पत्ति होती है, संकर्षण से प्रद्युम्न §मन§की उत्पत्ति होती है और प्रद्युम्न से अनिरुद्ध§अंहकार§की । यही चतुर्व्यूह सिद्धान्त पांचरात्र का विशिष्ट सिद्धान्त माना जाता है ।"[29] के मन्तव्यानुसार यह मत उपनिषद् से सिद्ध होने के कारण वेद बाह्य है परन्तु रामानुज ने इसे वैदिक सिद्ध करने के लिए पर्याप्त प्रयास किया है । विभव का अर्थ है अवतार ।

---

29. ब्रह्मसूत्र, शंकराचार्य-शंकरभाष्य 2/2/42 एवं 45.

के लिए विशेष अनुसन्धान का विषय है।

पांचरात्र संहिताओं के विषय चार है-§1§ज्ञान, ब्रह्म,जीव तथा जगत् के आध्यात्मिक रहस्यों का उद्घाटन और सृष्टि तत्व का विवेचन।

§2§ योग - मुक्ति के साधनभूत योग और उसकी प्रक्रियाओं का वर्णन। §3§ क्रिया - देवालय का निर्माण मूर्ति के स्थापन में मूर्ति के विविध आकारों आदि का विशिष्ट वर्णन।

§4§ चर्या - आन्हिक क्रिया मूर्ति तथा मंत्र का पूजन।

इनमें मुख्य स्थान चर्या का है जिसके वर्णन में आधे से अधिक स्थान दिया गया है, शेष आधे में सबसे अधिक क्रिया, क्रिया से कम• ज्ञान और सबसे कम योग का विवेचन है। पांचरात्र की तत्त्व मीमांसा के ऊपर उसका साधन मार्ग अवलम्बित है। यह तन्त्र परम तत्त्व नारायण के उभय भावों अर्थात् निर्गुण और सगुण को स्वीकार करता है। नारायण सगुण तथा निर्गुण दोनों एक साथ है। प्राकृत गुणों से हीन होने के कारण वह निर्गुण है, परन्तु षड्गुणों से युक्त होने के सगुण है।"भगवान में जिन षड्गुणों का निवास है, हैं - ज्ञान, शक्ति, ऐश्वर्य, बल, वीर्य और तेज। इसीलिए नारायण "षड्गुण विग्रह" कहलाते हैं। उनकी शक्ति का सामान्य नाम लक्ष्मी है। भगवान अपनी लीला से जगत् के मंगल साधन केलिए अपने ही आप चार रूपों की सृष्टि करते हैं — §1§ व्यूह, §2§विभव, §3§ अर्चावतार §4§अन्तर्यामी अवतार। वासुदेव से संकर्षण §जीव§की उत्पत्ति होती है, संकर्षण से प्रद्युम्न §मन§की उत्पत्ति होती है और प्रद्युम्न से अनिरूद्ध§अंहकार§की। यही चतुर्व्यूह सिद्धान्त पांचरात्र का विशिष्ट सिद्धान्त माना जाता है।"[29]के मन्तव्यानुसार यह मत उपनिषद् से सिद्ध होने के कारण वेद बाह्य है परन्तु रामानुज ने इसे वैदिक सिद्ध करने के लिए पर्याप्त प्रयास किया है। विभव का अर्थ है अवतार।

---

29. ब्रह्मसूत्र, शंकराचार्य-शंकरभाष्य 2/2/42 एवं 45.

अर्चावतार से अभिप्राय मूर्तियों से है । जीवन के हृदय में निवास करने का एक ही साधन है - भक्ति और उसका उदय भगवान के शरणागत हुए बिना होता ही नहीं । शरणागति की मीमांसा वैष्णवों के अत्यन्त उदार रूप से की है । वैष्णव भक्त को "पंचकालज्ञ" कहते हैं । क्योंकि वह अपने समय को पाँच भागों में बाँटकर भगवत् पूजन में निरन्तर लगा रहता है । पंचकालों के नाम है - {1} अभिगमन, {2} उपादान {3} इज्या, {4} अध्याय तथा {5} योग । मुक्ति का नाम है -

ब्रह्मभावापत्ति, क्योंकि भक्ति तथा शरणागति के बल पर जीवन ब्रह्म के साथ सकाकार हो जाता है । पाँचरात्र जीव और ब्रह्म के ऐक्य का प्रतिपादन अवश्य करता है, परन्तु वह अद्वैत वेदान्त के प्रतिकूल विवर्तवाद का अनुयायी न होकर परिणाम वाद का पक्षपाती है ।[30]

यह तांत्रिक मत का संक्षिप्त परिचय है जिसका प्रभाव कवि के मानस पर पड़ा । जहाँ भी बौद्धिक और भावनात्मक पक्ष का कवि ने उद्घाटन किया है । वहाँ उसकी छाप स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। नागर जी का व्यक्तित्व समझने के लिए सम्भवत: यह प्रकरण अनुपयुक्त न समझा जायेगा ।

तांत्रिक होने के कारण लोग प्राय: उनसे भयभीत रहा करते थे इसलिए उनके घनिष्ट मित्रों की श्रेणी में किसी को नहीं रखा जा सकता । दूसरी ओर नागर जी का जीवन साधना परक तो था ही वे प्राय: अनुष्ठानों में व्यस्त रहा करते थे । इसलिए मित्रता जैसा व्यवहार किसी के प्रति सम्भव नहीं था । हाँ कुछ लोग उनकी सेवा में जरूर रहा करते थे जिनमें काशी नाई का नाम उल्लेखनीय है । कृषि की व्यवस्था की देखरेख तथा अन्य कार्यों की सम्पादन के लिए मुख्तयार के रूप में माधुरी खजान्ची का नाम उल्लेखनीय है । जब मैं अपनी शोध यात्रा के दौरान उरई पहुँचा तो वहाँ भिन्न-भिन्न प्रतिष्ठित, सामाजिक एवं अन्य साधक व्यक्तियों से मिला।

30. हिन्दी साहित्य प्रथम खण्ड सम्पादक डॉ0 धीरेन्द्रवर्मा एवं डॉ0 ब्रजेश्वर वर्मा, पृष्ठ - 81-83.

लगभग पचास व्यक्तियों से मैंने साक्षात्कार किया । सम्बन्धित बातों की पुष्टि के लिए एक दिन झाँसी उरई रोड पर स्थित एट के निकट कोटरा रोड पर स्थित ग्राम पचोखरा भी गया । जहाँ आज भी काली कवि की 40बीघा जमीन है वहाँ भी एक उनका मकान बना हुआ था जो अब ध्वंशावशेष के रूप में विद्यमान है । इस भूमि पर पं0 शम्भू दयाल अजयगढ़ निवासी काबिज है वैसे उसकी सारी देखरेख पं0 जय नारायण मुखिया ही करते हैं ।

उरई में अड्डा मन्दिर के निकट श्री कन्हैयालाल माहेश्वरी आँनरेरी मजिस्ट्रेट के भवन के पार्श्व में तथा विजय कुमार मुहल्ला में काली कवि का वह मकान है जिसमें वे स्वयं रहा करते थे और अध्ययन, मनन, स्वाध्याय तथा अनुष्ठान आदि कार्य सम्पन्न किया करते थे । कहा जाता है कि इस मकान में काली कवि के देहावसान के पश्चात् उनकी विधवा पुत्रवधू सन्तोषी बाई रहीं । वेदिका स्थित मृतिका को रोगी, दुखी अथवा पीड़ितों को दे करके उन्हें सुखी बनाती रही । मैंने स्वयं प्रत्यक्ष रूप से यह देखा है कि आज भी जो व्यक्ति वहाँ से निकलते हैं वे इस दरवाजे को प्रणाम करते हुए अथवा सिर झुकाते हुए जाते हैं । कई सेठ-साहूकारों और बुढ़ाओं को मैंने उनकी देहली पर नतमस्तक होते हुए देखा है ।

उपर्युक्त ~~xxx~~ मकान में श्रीराम नाम का अहिरवार सपरिवार निवास करता था । बाहर से मकान यद्यपि टूटा फूटा सा प्रतीत होता था खण्डहर सा लगता था किन्तु वह अपने अन्तर में अपनी विशालता छिपाए हुए ~~xxx~~ काली कवि की गौरव गाथा का वर्णन कर रहा था । आज उनके प्रपौत्र अरूण कुमार "   " ने उसी स्थान पर पक्का मकान निर्मित करा लिया है । अत्यन्त खेद की बात है कि जिस नगर में दो-दो डिग्री कालेज बी0एस0 कालेज, छै-सात इण्टर कालेज और कई प्राथमिक विद्यालय, पोलटेक्नीक स्कूल तथा अन्य स्वतन्त्र सामाजिक एवं धार्मिक संस्थायें विद्यमान हो तथा जिसकी प्राचीन साहित्यिक परम्परा अत्यन्त गौरवशालिनी रही हो

तथा जिस नगर में अनेक गण्य मान्य और धनाढ्य व्यक्ति विद्यमान हों उस नगर में काली कवि का कोई समुचित स्मारक न बन सका । स्मारक की बात तो दूर रही उनके नाम पर वाचनालय, विद्यालय, अथवा धर्मशाला इत्यादि का निर्माण तो सरलता पूर्वक कराया ही जा सकता था, अच्छा होता यदि अब भी वहाँ के साहित्यकार कुछ प्रयत्न करें तो काली कवि की ग्रन्थावली का सम्पादन वहाँ के विद्वानों द्वारा कराया जा सकता है जो काली कवि का सच्चा स्मारक सिद्ध होगा । काली कवि की साधना भूमि को देखने का मुझे सौभाग्य मिला इसके लिए मैं अपने, को कृतकृत्य समझता हूँ ।

पं० परशुराम जी ने मुझे बताया कि "मेरे पिता पं० छेदाराम काली कवि के यहाँ लेखक का काम किया करते थे ।" काली महाराज अपनी सम्पत्ति पं० रामाधार को देना चाहते थे किन्तु उन्होंने यह समझकर कि जो भी यह सम्पत्ति लेगा उसे यह फलेगी नहीं—उनके प्रस्ताव को विनम्रता पूर्वक अस्वीकार कर दिया ।

4.9 जीवन के प्रमुख कार्य :-

काव्य सृजन और तांत्रिक अनुष्ठान ही उनके प्रमुख कार्यों के अन्तर्गत परिगणित किए जा सकते है । यह अपने निवास स्थान पर ही अनुष्ठान करते थे या फिर राजा महाराजाओं के यहाँ भी सादर आमन्त्रित किए जाने पर उस राजधानी में जाने पर ही अनुष्ठान करने की चर्चा सम्बन्धी विभिन्न जन श्रुतियों में बताई जाती हैं । इस सन्दर्भ में नागर जी का जगम्मनपुर, आलीपुर, छतरपुर, पन्ना आदि पर आना जाना रहा है इन स्थानों पर जाकर उन्होंने अनुष्ठान आदि किए और उनके सफल होने पर प्रभूत धन राशि दक्षिणा में प्राप्त की । शोध यात्रा के समय मुझे निम्नलिखित जनश्रुतियाँ सुनने को मिली जिनका उल्लेख करना

मैं आवश्यक समझता हूँ ।

{अ}   कहा जाता है कि उरई में जवाहर लाल डिप्टी कलैक्टर थे वह स्वभाव से अपने को कुछ विशिष्ट समझने वाले थे एक समय वह काली महाराज से अप्रसन्न हो गए और उन्होंनें दरोगा से इनका चालान करवा दिया । पेशी पर जाकर महाराज ने अपने बयानों को देना प्रारम्भ किया तो जवाहर लाल जी की कलम स्थित होकर रह गयी तथा वह कुर्सी से नीचे गिर पड़े और कुर्सी उनके ऊपर हो गयी तब सबने महाराज के सम्बन्ध में बतलाया तो उन्होंनें काली महाराज से क्षमा याचना की ।

{ब}   एक समय बुढ़ादाने ग्राम में एक औरत को कुछ हो गया था उसने बहुत प्रयत्न किया लेकिन किसी प्रकार भी वह ठीक नहीं हुई तो उसका पति काली महाराज के पास आया । काली महाराज काशी नाई एवं पं0 छेदाराम के साथ उस गांव गए । महाराज को गढ़ी में ठहरा दिया गया । काली महाराज ने उस कोठी में बन्द नग्न स्त्री को देखकर कहा कि सात दिन बाद इसे देखेंगें । सातवें दिन काली महाराज ने एलान कराया कि आज 5 बजे शाम को इस स्त्री को ठीक करूँगा, जो भी यहाँ ओझा आदि हों वे भी आ जाँय और आकर घटना को देखें । निर्धारित समय पर कोठी का ताला महाराज ने खुलवाया और उसे कपड़े पहिनवाये, इसके बाद वह काली महाराज को काटने के लिए झपटी तो उन्होंनें कुछ मंत्र पढे, मंत्र पढते ही वह स्त्री जोर जोर से चिल्लाने लगी और कह रही थी आह मैं जरी, आह मैं मरी । उन्होंनें उपस्थित जन समूह के सामने कहा कि इस पर पाँच दुष्ट आत्माएँ सवार थी उन्होंनें नारियल के खाली भाग में उन पाँचों आत्माओं को बन्द कर दिया । सबके देखते-देखते वह स्त्री भली चंगी हो गयी उसने आकर महाराज के पैर छुए । स्त्री का पति एक बड़ा सेठ था उसने दक्षिणा स्वरूप पाँच हजार रूपयों की धनराशि महाराज के चरणों में समर्पित की और उनके

साथ गए हुए पण्डित तथा नाई को भी वस्त्र एवं द्रव्य देकर संतुष्ट किया ।

{स} एक बार नगर सेठ मिट्ठूलाल महेश्वरी के यहाँ कालपी के किसी ओझा ने सेठ जी की किसी सिद्धि के लिए अनुष्ठान किया था, कार्य सिद्धि होने के उपरान्त सेठ जी ने अभीष्ट भेंट ओझा को नहीं दी, इस पर उसने क्रुद्ध होकर अपनी तंत्रशक्ति के बल पर सेठ जी को गद्दी पर चिपका दिया वे कहीं भी हिलडुल नहीं सकते थे तो काली महाराज को बुलाया गया उन्होंने सारी स्थिति का अध्ययन किया । तत्पश्चात् कुछ पकवान बनवाकर बाहर जंगल में रखवा दिया और कहा कि यदि यह पकवान ज्यों का त्यों रक्खा रहेगा तो तुम ठीक हो जाओगे अन्यथा तुम्हें कोई ठीक नहीं कर सकता । प्रातःकाल होने पर पकवान ज्यो का त्यों पाया गया तो उन्होंने कहा कि सेठ अब तुम बच गए हो पर ऐसा प्रतीत होता है कि तुमने ओझा जी को {कालपी वाले} जो वचन दिया था उसका निर्वाह नहीं किया है । उनकी जो दक्षिणा शेष रह गयी हो उसको ससम्मान उनके पास भिजवा दो । नगर सेठ ने अपनी गल्ती स्वीकार की और कालपी के ओझा के यहाँ शेष दक्षिणा भिजवा दी तथा अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हुए काली महाराज को भी दो हजार रुपये की धनराशि भेंट की ।

{द} इसी प्रकार की एक जनश्रुति का उल्लेख महोपाध्याय श्याम सुन्दर बादल ने अपने लेख में किया है जो इस प्रकार है :-

"बुन्देलखण्ड की आलीपुर स्टेट के राव साहब हिन्दूपति के पुत्र राव छत्रपति सिंह के भ्राता डा० सरदार सिंह के ये दीक्षा गुरू थे । बिहारी बारखड़िया पर डाका डलवाने के अभियोग में, कहा जाता है कि मुकदमा चल रहा था, कदाचित् उन पर यह आरोप था कि तत्कालीन कुख्यात डाकू दौलतसिंह को उक्त डाका डालने के लिए राव साहब ने ही प्रेरित किया था । काली महाराज के अनुष्ठान से राव साहब विजयी हुए ।

कुछ भी हो आलमपुर के राज्य-परिवार में उनका बड़ा मान था । कहते हैं कि दामोदर नामक एक गुजराती ब्राह्मण की पुत्र-वधू {नरोत्तम की स्त्री} को एक जिन्न लगा हुआ था जिसे काली महाराज ने अपनी मंत्रशक्ति से दूर किया था ।"

1.10 <u>मरण</u> :-

प्रायः महान विभूतियों के सम्बन्ध में जनश्रुतियाँ प्रचलित होने लगी थीं । वैसी ही काली महाराज की मृत्यु के सम्बन्ध में सेठ श्रीबिहारी लाल जी जो अभी लगभग 78 वर्ष के हैं, ने बताया कि उनका जब दाह संस्कार किया गया तो प्रभूत मात्रा में ईंधन का प्रयोग किया गया था फिर भी उनका शरीर सम्पूर्ण रूप से भस्मीभूत नहीं हुआ । वे स्थूल काय तो थे ही दूसरी बात यह है कि फिर चिता पर भारी मात्रा में लकड़ी आदि रक्खी गयी तब कहीं जाकर उनका अन्तिम संस्कार सफल हो पाया ।

मरण सम्बन्धी काल का विवेचन विभिन्न विद्वानों द्वारा पूर्व ही व्यक्त किया जा चुका है । इस प्रकार कवि का देहावसान गंगा दशहरा के पुनीत पर्व पर वि0 संवत् 1966 में हुआ ।[31]

-------------0-------------

31. मिश्रबन्धु विनोद, पृ0 118.

काव्य का स्वरूप

5.1 महाकाव्य : स्वरूप एवं परिभाषा

5.2(1) खण्डकाव्य एवं परिभाषा

(2) मध्यकालीन खण्डकाव्यों की प्रवृत्तियाँ

5.3 आधुनिक काल में खण्डकाव्य का विकास एवं हनुमत्पताका

5.4 मुक्तक काव्य

5.1 महाकाव्य मानव की कलात्मक प्रतिभा का सर्वोत्कृष्ट निदर्शन निदर्शन है । इसमें एक ओर रसाभिव्यंजना पाठक को रसाप्लावित करती है तो दूसरी ओर महदुद्देश्य तथा स्वरूप जीवन-दर्शन उसे प्रभावित करता है । वह जहाँ लोक जीवन एवं संस्कृति से परिचय प्राप्त करता है वहीं महान चरित्र और महत्कार्य से साक्षात्कार भी । मर्मस्पर्शी घटनाओं तथा उदात्त शैली का तो उसमें प्रौढतम रूप उपलब्ध होता है । वस्तुतः उसमें माननीय प्रगति का पूर्ण प्रतिबिम्ब रहा करता है ।[1] राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर की यह धारणा है कि " विश्व के महाकाव्य मनुष्यता की प्रगति के मार्ग में मील के पत्थरों के समान हैं । वे व्यंजित करते हैं कि मनुष्य किस युग में कहाँ तक प्रगति कर सका है ।"[2]

महाकाव्य के स्वरूप पर विचार करते हुए संस्कृत के कतिपय उद्भट विद्वानों ने विचार व्यक्त किये है जिनमें निम्नांकित उल्लेख्य है:-

भामह ने महाकाव्य को सर्गबद्ध, महद् चरित्रों के वर्णन से युक्त, अलंकारों एवं अर्थ सौष्ठव से समान मंत्रणा, दूत संप्रेषण, अभियान वर्णन अपेक्षित है । इसका कथानक नाटकीय संधियों से युक्त तथा पुरुषार्थ चतुष्टय का विधायक होता है । नायक-वध वर्जित है ।[3]

दण्डी के अनुसार महाकाव्य का प्रारंभ मंगला चरण से होता है। सर्गों में विभक्त इसकी कथा ऐतिहासिक होती है । चार पुरुषार्थों से युक्त, धीरोदात्त नायक का चारित्रिक उत्कर्ष काव्योचित भाषा में वर्णित होता है । नवरसों का संचार, नगर, समुद्र, पर्वत, चन्द्रोदय, सूर्योदय, उद्यान,

1. भारतीय काव्य शास्त्र, डॉ0 रामानन्द शर्मा, पृ0 - 281.
2. शुद्ध कविता की खोज, रामधारी सिंह दिनकर, उदयाचल पटना पृ0-35.
3. काव्यालंकार, भामह.

जलक्रीड़ा, मधुपान, संयोग-वियोग पक्ष, विवाह, सन्तानोत्पत्ति, मंत्रणा, दूत, संप्रेषण आदि का वर्णन होता है ।[4]

रूद्रट ने दण्डी की परिभाषा को स्वीकार करते हुए कथा के सहज विकास क्रम को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया है । उन्होंने अवान्तर कथानक प्रतिनायक के वंश तथा वैभव, युग जीवन का चित्रण आदि को महाकाव्य में स्थान दिया है जो मौलिक वस्तु है ।[5]

आचार्य विश्वनाथ ने शैलीगत विशेषताओं को दृष्टि में रखते हुए महाकाव्य का स्वरूप इस प्रकार निरूपित किया है --

(1) इसका नायक देवता, कुलीन क्षत्रिय या धीरोदात्त गुणों से समन्वित होता है जो चतुवर्ग में से एक को लक्ष्य बनाता है ।

(2) महाकाव्य में कम से कम 8 सर्ग अपेक्षित है । वर्ण्य कथा पर आधारित सर्गों के नाम होना चाहिए । सर्गान्त में आगामी कथा की सूचना आवश्यक है ।

(3) इसका कथानक लोक प्रसिद्ध, ऐतिहासिक तथा नाटकीय संधियों से युक्त होता है ।

(4) इसमें श्रृंगार, वीर और शान्त रस में से एक रस अंगी तथा शेष सभी रस अंग रूप में आते हैं । सर्गारंभ मंगलाचरण से होना चाहिए । यत्र-तत्र सज्जन-प्रशंसा और दुर्जन-निन्दा भी अपेक्षित है ।

(5) इसमें संध्या, सूर्य, चन्द्र, रजनी, प्रातः, पर्वत, वन, सागर, नगर, मार्ग, रण, प्रयाण, विवाह, सन्तानोत्पत्ति, प्रभृति का वर्णन आवश्यक है ।

(6) एक सर्ग में एक ही छन्द का प्रयोग होता है । सर्गान्त में छन्द परिवर्तन का विधान है ।

---

4. काव्यादर्श, दण्डी.
5. काव्यालंकार, रूद्रट.
6. साहित्य दर्पण, आचार्य विश्वनाथ.

§7§ इसका नामकरण कवि, नायक, या वृत्त के आधार पर होता है ।[6]

पाश्चात्य विद्वानों में अरस्तू का नाम विशेष उल्लेख्य है ।अरस्तू का विवेचन विकसनशील महाकाव्य §ईपिक ऑफ ग्रोथ§को दृष्टि में रखकर किया गया है ।[7] बाद में वर्जिल के "इनीड" से अलंकृत महाकाव्य §ईपिक ऑफ आर्ट§की परम्परा प्रारंभ हुई ।[8]

आधुनिक विद्वान डॉ० शर्मा नेमहाकाव्य की परिभाषा इस प्रकार दी है ——

"महाकाव्य ऐसी छन्दोबद्ध प्रकथनात्मक रचना होती है जिसमें विषय की व्यापकता और नायक की महानता के साथ-साथ कथावस्तु की एक सूत्रता, छलकता हुआ रस प्रवाह, वर्णन की विशदता, उदात्त भाषा शैली, जीवन का यथासम्भव सर्वांगीण चित्रण, जातीय भावनाओं के साथ-साथ संस्कृति की सुन्दर अभिव्यक्ति हो ।"[9]

5.2 संस्कृत आचार्यों के अनुसार खण्डकाव्य की स्वरूप-कल्पना सबसे पहिले रूद्रट के मन में आयी और उन्होंनें प्रबन्ध काव्य के दो रूप बताए, एक महत एवं दूसरा लघु रूप । इसका निरूपण करते हुए उन्होंनें कहा कि इसमें चतुवर्ग-फल में से कोई एक वर्ग और एक रस समग्र रूप में तथा अनेक रस असमग्र रूप में होता है । यथा -

"सन्ति द्विधा प्रबन्धाः काव्य कथाख्यायिकादयः काव्ये ।
उत्पाद्यनुत्पादा महल्लघुत्वेन भूयो पि-[10] ।।

---

6. साहित्य दर्पण, आचार्य विश्वनाथ.
7. पोइटिक्स, अरस्तू.
8. वही, अरस्तू.
9. हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, डॉ० गोविन्दराम शर्मा, पृ०-43.
10. काव्यालंकार, आचार्य रूद्रट 16/2.

"ते लाघवो विज्ञेया येष्वन्यतमो भवेच्चतुर्वर्गात् ।
असमग्रानेकरसा ये च समग्रैकरसयुक्ता: ।।" [11]

इसके बाद रूद्रट की परिभाषा में दोषों का परिहार करते हुए विश्वनाथ ने प्रबन्ध काव्य के तीन भेद महाकाव्य, काव्य और खण्डकाव्य किए । खण्डकाव्य नाम और उसके निश्चित वस्तु पर की कल्पना का सारा श्रेय विश्वनाथ को ही है । उन्होंने भाषा, विभाषा में रचित सर्गबद्ध, समस्त सन्धियों से रहित, एक कथा के निरूपक, एक देश के अनुसरण करने वाले को खण्ड काव्य कहा । यथा-

"भाषा विभाषा नियमात्काव्यं सर्ग समुत्थितम् ।
एकार्थप्रवणै: पद्यै: सन्धिसामग्र्यवर्जितम् ।।
खण्ड काव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च ।" [12]

~~xxxxxxxxx~~ इस प्रकार विश्वनाथ के द्वारा इस काव्य में एक देश जीवन का एक विशिष्ट पक्ष ही चित्रित होता है । जीवन के विशेष पक्ष का एक अंश या कोई घटना ही इसकी वस्तु का आधार होता है । लेकिन यह खण्डकाव्य में एक ही पक्ष का ग्रहण होना ही एक भ्रान्ति उत्पन्न करता है क्योंकि जीवन के किसी एक पक्ष में ग्रहण करने वाला काव्य खण्डकाव्य नहीं हो सकता । वस्तुत: इससे एक पक्ष के जीवन की सूचना तो प्राप्त होती है किन्तु उसके आकार का कोई ज्ञान नहीं हो सकता है तथा उससे सम्बन्धित व्यक्ति की अनेक घटनाएँ भी हो सकती हैं उन सबका सांमजस्य खण्डकाव्य में नहीं हो सकता ।

5.2(1) हिन्दी के आचार्यों द्वारा खण्डकाव्य की परिभाषाएँ :-

खण्डकाव्य में एक ही घटना को मुख्यता दी जाकर उसमें जीवन के किसी एक पहलू की झाँकी सीमित जाती है । [13]

11. काव्यालंकार, आचार्य रूद्रट 16/6.
12. साहित्य दर्पण, आचार्य विश्वनाथ, 6/328-329.
13. काव्य के रूप, गुलाबराय, पृ0-23.

"खण्डकाव्य वह प्रबन्ध काव्य है जिसमें किसी भी पुरुष के जीवन का कोई अंश ही वर्णित होता है पूरी जीवन-गाथा नहीं। इसमें महाकाव्य के सभी अंग न रहकर एकाध अंग ही रहते हैं।"[14]

प्रबन्धकाव्य का दूसरा भेद खण्डकाव्य या खण्ड प्रबन्ध है। प्रायः जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना या हृदय का मार्मिक उद्घाटन होता है और अल्प प्रसंग संक्षेप में रहते हैं इसमें भी कथा - संगठन आवश्यक है सर्ग बद्धता नहीं। इसमें भी वस्तु-वर्णन भाव वर्णन एवं चरित्र का चित्रण किया जाता है, पर कथा विस्तृत नहीं होती।[15]

"महाकाव्य के ही ढंग पर जिस काव्य की रचना होती है पर जिसमें पूर्ण जीवन न ग्रहण करके खण्ड जीवन ही ग्रहण किया जाता है उसे खण्डकाव्य कहते हैं। यह खण्ड-जीवन इस प्रकार व्यक्त किया जाता है जिससे वह प्रस्तुत रचना के रूप में स्वतः पूर्ण प्रतीत हो.....खण्ड काव्य का विस्तार भी थोड़ा होता है।.........।"[16]

"वह काव्य जो मात्रा में महाकाव्य से छोटा परन्तु गुणों में उससे यद्यपि शून्य न हो खण्डकाव्य कहलाता है....महाकाव्य विषय प्रधान होता है परन्तु खण्ड काव्य प्रायः विषयी-प्रधान होता है जिसमें लेखककथानक के स्थूल ढांचे में अपने वैयक्तिक विचारों को प्रसंगानुसार वर्णन करता है।"[17]

---

14. हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास, डॉ0 भगीरथ मिश्र, पृ0-421.
15. काव्य शास्त्र, डॉ0 भगीरथ मिश्र, पृ0-61.
16. वांग्मय विमर्श, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 - 46.
17. संस्कृत आलोचना, हि0 खण्ड, बल्देव उपाध्याय, पृ0 - 62.

"काव्य के एक अंग का अनुसरण करने वाला खण्डकाव्य होता है । इससे जीवन की पूर्णता अभिव्यक्त नहीं होती । उसकी रचना के लिए कोई एक घटना अथवा सम्वेदना मात्र पर्याप्त होती है ।"[18]

इस प्रकार खण्डकाव्य में एक ही घटना होती है और उसमें मानव जीवन के एक ही पहलू पर प्रकाश डाला जाता है । उसमें महाकाव्य के अनुगुण पूर्णतया विद्यमान रहते है ।[19]

खण्डकाव्य प्रबन्ध का लाक्षयी क्षणों की अनुभूति कीअभिव्यंजना है.....खण्ड काव्य यद्यपि जीवन के एक अंग को लेकर चलता है तथापि वह अपने में पूर्ण होता है और उसकी अनुभूति भी पूर्ण होता है ।[20]

× × × × ×

खण्ड काव्य के खण्ड शब्द का यह अर्थ कदापि नहीं कि वह विखरा हुआ अथवा किसी महाकाव्य का एक खण्ड है प्रत्युत यह खण्ड शब्द उस अनुभूति के स्वरूप की ओर संकेत करता है जिसमें जीवन अपने सम्पूर्ण रूप में कवि को न प्रभावित कर आंशिक या खण्डरूप में प्रभावित करता है ।

× × × × ×

खण्ड काव्य का रचयिता महा काव्यकार की भाँति.....युग को कोई महत उपदेश नहीं देता ।

× × × × ×

खण्ड काव्य वह वर्णनात्मक प्रबन्ध काव्य है जिसमें कवि धीरे-धीरे कथा का आरम्भ और विकास करता है ।

× × × × ×

18. हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव डॉ0सरनामसिंह शर्मा,पृ0-28.
19. हिन्दी की काव्य शैलियों का वर्गीकरण,डॉ0हरदेव बाहरी, पृ0-105.
20. काव्यरूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास,डॉ0 शकुन्तला दुबे,पृ0-143.

"काव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला खण्डकाव्य होता है । इससे जीवन की पूर्णता अभिव्यक्त नहीं होती । उसकी रचना के लिए कोई एक घटना अथवा सम्वेदना मात्र पर्याप्त होती है ।"[18]

इस प्रकार खण्डकाव्य में एक ही घटना होती है और उसमें मानव जीवन के एक ही पहलू पर प्रकाश डाला जाता है । उसमें महाकाव्य के अनुगुण पूर्णतया विद्यमान रहते हैं ।[19]

खण्डकाव्य प्रलम्ब का लाक्षयी क्षणों की अनुभूति कीअभिव्यंजना है.....खण्ड काव्य यद्यपि जीवन के एक अंग को लेकर चलता है तथापि वह अपने में पूर्ण होता है और उसकी अनुभूति भी पूर्ण होता है ।[20]

x x x x x

खण्ड काव्य के खण्ड शब्द का यह अर्थ कदापि नहीं कि वह बिखरा हुआ अथवा किसी महाकाव्य का एक खण्ड है प्रत्युत यह खण्ड शब्द उस अनुभूति के स्वरूप की ओर संकेत करता है जिसमें जीवन अपने सम्पूर्ण रूप में कवि को न प्रभावित कर आंशिक या खण्डरूप में प्रभावित करता है ।

x x x x x

खण्ड काव्य का रचयिता महा काव्यकार की भाँति..... युग को कोई महत उपदेश नहीं देता ।

x x x x x

खण्ड काव्य वह वर्णनात्मक प्रबन्ध काव्य है जिसमें कवि धीरे-धीरे कथा का आरम्भ और विकास करता है ।

x x x x x

---

18. हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव डॉ0सरनामसिंह शर्मा,पृ0-28.
19. हिन्दी की काव्य शैलियों का वर्गीकरण,डॉ0हरदेव बाहरी, पृ0-105.
20. काव्यरूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास,डॉ0 शकुन्तला दुबे,पृ0-143.

खण्डकाव्य में कथांश या कथा-सूत्र का होना परमावश्यक है । इस कथा के लिए महाकाव्य की कथा की भाँति ख्यात या इतिहास प्रसिद्ध होना अनिवार्य तत्व कदापि नहीं ।

× × × × ×

यहाँ कथा-संगठन उतना सुव्यवस्थित भी नहीं मिलेगा जितना महाकाव्य में मिलता है ।

× × × × ×

इसमें प्रासंगिक कथाओं का प्रायः अभाव ही होता है ।

× × × × ×

इसमें प्रासंगिक कथाओं का प्रायः अभाव ही होता है ।

× × × × ×

उसकी कथा सर्गों में होकर गूँथी जा सकती है और उसके बिना भी उसका प्रणयन हो सकता है ।[21]

"मोटे ढंग से यह कहा जा सकता है कि खण्ड काव्य एक ऐसा पद्यबद्ध कथा काव्य है जिसके कथानक में इस प्रकार की एकात्मक अन्विति हो कि उसमें अप्रासंगिक कथाएँ सामान्यता अन्तर्भुक्त न हो सकें, कथा में एकांगिता-साहित्य दर्पण के शब्दों में ऐकदेशीयता हो, कथा-विन्यास क्षेत्र में क्रम, आरम्भ, विकास, चरम सीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो ।

खण्ड काव्य के कवि का दृष्टिकोण उतना व्यक्ति निरपेक्ष और वस्तुपरक नहीं रहता जितना महाकाव्य के लिए अपेक्षित होता है ।[22]

जो काव्य सम्पूर्ण लक्षण युक्त न हो ।[23]

हिन्दी विश्व कोश,सं0 नगेन्द्र नाथवसु पृ0-709.

---

21. काव्य रूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास, डॉ0शकुन्तला दुबे पृ0-145-147.
22. हिन्दी साहित्य कोश, सम्पा0 डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ 248.
23. हिन्दी विश्व कोश, सम्पा0 नगेन्द्र नाथ वसु, पृ0-709.

महाकाव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला काव्य महा-काव्य के लिए आवश्यक वस्तुओं में से जिसमें सब का समावेश न हो और भी अपेक्षया छोटे जीवन-क्षेत्र का प्रबन्ध चित्र उपस्थित करें, वह खण्डकाव्य है ।[24]

उपर्युक्त हिन्दी आचार्यों द्वारा दी गयी खण्ड काव्य की विभिन्न परिभाषाएँ है जिनमें साम्य नहीं हैं । डा0 भागीरथ मिश्र ने खण्डकाव्य में घटना को मुख्य माना है और अन्य प्रसंग संक्षेप में साथ ही साथ कथा संगठन को आवश्यक माना है सर्गवद्धता को नहीं । आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने खण्डकाव्य को महाकाव्यत्व के आधार पर लघु माना है लेकिन उनकी वह मान्यता उचित नहीं है । बल्देव उपाध्याय ने खण्डकाव्य को मुख्यतया विषयी प्रधान माना है । डा0 शकुन्तला दुबे ने खण्डकाव्य के एक विशेष पक्ष को लिया है क्योंकि उनका कहना है कि खण्ड काव्य किसी काव्य रूप का खण्ड मात्र है ।जब कोई जीवन की अनुभूति सम्पूर्ण रूप में व्यक्त करता है तो महाकाव्य और जब उसे खण्ड रूप में प्रभावित करती है तो खण्ड काव्य की रचना होती है । अनुभूति कभी एक सी नहीं होती है कभी तो वह पूर्ण होती है या अखण्ड होती है और उसका प्रभाव भी पूर्ण या आंशिक होता है इसी के अनुसार कृति का रूप भीदीर्घ या लघु हो जाता है यही दोनों में अन्तर है । इसके साथ ही महाकाव्य का उद्देश्य संदेश और खण्डकाव्य का उपदेश होता है । खण्डकाव्य की घटनाओंमेंकथा होती है अतः उसको सर्ग बद्ध करना आवश्यक नही है और न पाँच सन्धियों का होना भी । इस प्रकार खण्ड काव्य के कथा विन्यास में क्रम, विकास, चरम, सीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो ।

खण्डकाव्य के सम्बन्ध में संस्कृत एवं हिन्दी के आचार्यों के मतों में प्रायः साम्य ही है । दोनों ही आचार्यों ने महाकाव्य का रूप वृहत

---

24. साहित्य शास्त्र का पारिभाषिक शब्द कोश, राजेन्द्र द्विवेदी,पृ0-80.

और खण्डकाव्य का लघु रूप लिया है । उसमें किसी एक ही रस की प्रमुखता और अनेक रसों की असमग्रता होती है । इतना अवश्य ही है कि जहाँ संस्कृत आचार्यों ने खण्ड काव्य में महाकाव्यत्व गुणों को लिया है वहाँ हिन्दी के आचार्यों में भिन्नता है उन्होंने महाकाव्य के गुणों का उसमें परिहार किया है । अतः सर्ग बद्धता आदि खण्ड काव्य में होना आवश्यक नही है ।

5.2§2§ मध्य कालीन खण्ड काव्यों की प्रवृतियाँ :-

मध्यकाल के खण्ड काव्यों से हिन्दी की वास्तविक परम्परा आरम्भ होती है । संस्कृत में खण्ड काव्य वर्णन प्रधान होते थे । उसमें नायक के जीवन की एक घटना से अधिक मानव जीवन की एक सम्वेदना ही देखी जाती है अतएव उसमें इतिवृत्त का अभाव है । मध्यकालीन खण्ड काव्यों में इतिवृत्त तो है ही, मार्मिक स्थलों के वर्णन भी है । इस तरह मध्यकाल से हिन्दी के सुव्यवस्थित खण्ड काव्यों की परम्परा विकसित हुई ।[25]

मध्यकालीन खण्डकाव्यों के तीन प्रेरक तत्व-धर्म वीरता एवं प्रेम हैं जिनमें धर्म सबसे प्रबल रहा है । धर्ममूलक खण्ड काव्य सभी अलौकिक है । अलौकिक वस्तु की भी लौकिक अभिव्यक्ति हो सकती है जो मध्य-कालीन खण्ड काव्यकारों को उपलब्ध न हो सकी थी । नामकरण की प्रवृत्ति विषयों को ग्रहण करने में निःसंकोच है उसी प्रकार नामों को ग्रहण करने में भी निःसकोंच हैं । इनके नामों में कोई कलात्मकता भी नहीं है । जैसे हनुमन्नाटक आदि ।

वस्तु की दृष्टि से मध्यकालीन खण्ड काव्यों का अधिकांश पौराणिक है । ऐतिहासिक खण्डकाव्यों की वस्तु लोकपरम्परा से ली गयीहै।

---

25. हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य, डॉ0 सियाराम तिवारी, पृ0-411.

कथा संघटन की दृष्टि से मध्यकालीन खण्ड काव्य दो कोटियों में विभाजित किए गए है । एक तो वे है जिसमें कवि का सारा ध्यान एक ही घटना पर रहता है । दूसरे प्रकार के खण्ड काव्यों में मुख्य घटना के पहले या बाद में कथासूत्र को ताना गया है । इस श्रेणी में दूसरे प्रकार के खण्डकाव्य वे हैं जिनमें कवि एक बारगी चरमोत्कर्ष पर उठाकर रख देता है और वहाँ से धीरे-धीरे उतरने के लिए कथा पर्वत को ढालुआँ बना देता है ।

तीसरी कोटि के आदर्श खण्ड काव्य है । इनमें चरमोत्कर्ष के दोनों और कथासूत्र का तनाव होता है । इसलिए इनका कथा संगठन बड़ा संतुलित होता है । मध्यकाल के अधिकांश खण्ड काव्य इसी प्रकार के आदर्श खण्ड काव्य है । इस प्रकार के खण्ड काव्य वर्णन प्रधान होते हैं । अतः ये खण्ड काव्य अधिक आत्मगत होते हैं ।

कथा विभाजन की दृष्टि से भी कुछ सर्ग बद्ध और कुछ सर्ग विहीन भी है । इसों में श्रृंगार रस ही खण्ड काव्यों में छाया हुआ है । तथा दूसरा वीर रस अंगी के रूप में पाया जाता है इसके अतिरिक्त गौण रूप में करूणा, वात्सल्य, शान्त आदि रस भी यत्र तत्र आए हैं ।

मध्यकालीन खण्ड काव्य नायक के जीवन की किसी एक ही घटना का वर्णन होता है जो जीवन के किसी एक पक्ष की झलक प्रस्तुत करता है ।

खण्ड काव्य का नायक सुर असुर, मनुष्य इतिहास प्रसिद्ध अथवा कल्पित या शान्त, ललित, उदात्त और उद्धत में से किसी भी प्रकार का हो सकता है । लेकिन भक्ति का नायक देवता ही होगी ।

खण्ड काव्य की कथा का सर्गों में विभाजित होना अनिवार्य नहीं है ।

सम्वेदन-प्रधान खण्ड काव्यों की कथा बिल्कुल कल्पित होती है । अधिकांशतः मध्यकाल के खण्ड काव्यों की कथा ख्यात ही है।

खण्ड काव्यों में अवांतर कथाएँ नहीं होती ।

सम्वेदनापरक और व्यक्ति परक सभी प्रकार के खण्ड काव्यों का एक निश्चित उद्देश्य होता है ।

खण्ड काव्य महाकाव्य के गुणों से शून्य नहीं होता बल्कि आंशिक होता है ।

खण्ड काव्य का चतुर्वर्ग-फल में से किसी एक की प्राप्ति का उद्देश्य होता है ।

खण्ड काव्य में सभी सन्धियाँ नहीं होती ।

खण्ड काव्य में प्रारम्भ में स्तुति और अन्त में फल श्रुति का होना अनिवार्य नहीं है ।

खण्ड काव्य आद्यंत एक ही छन्द में लिखा जा सकता है और अनेक छन्दों में भी ।

भाषा की दृष्टि से मध्यकालीन खण्ड काव्य के लिए साहित्यिक परिनिष्ठित भाषा में होना आवश्यक नहीं है वरन् उनमें अपभ्रंश, राजस्थानी, अवधी, ब्रजी, खड़ी बोली एवं किसी-किसी में मिश्रित बोली भी पायी जाती है । अधिकांश खण्ड काव्यों की भाषा ब्रजी है इसके बाद अवधी तब अन्य भाषाएँ है जिनमें ये काव्य लिखे गए है । [26]

खण्ड काव्य के भेदोपभेद और उनके आधार

सबसे पहिले डा० भागीरथ मिश्र ने छन्द योजना के आधार पर खण्ड काव्य के दो भेद किए एकार्थ और अनेकार्थ खण्ड काव्य । जिसमें

26. हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य, डॉ० सियाराम तिवारी, पृ०-408-410 एवं पृ० - 411-415.

आदि से अन्त तक एक ही प्रकार के छन्दों का प्रयोग होता है उन्हें एकार्थ और जिसकी रचना में अनेक छन्दों का प्रयोग होता है उन्हें अनेकार्थ कहते हैं । डा0 शकुन्तला दुबे ने भी इसी आधार पर अपने विचार प्रकट किए हैं । लेकिन यह वर्गीकरण खण्ड काव्य साहित्य का है खण्ड काव्य का नहीं है । उन्होंने अन्त:प्रेरणा, अन्त:स्वरूप, उद्देश्य एवं शैली के आधार पर यह वर्गबद्ध किए है, लेकिन इस प्रकार का वर्गीकरण करने में सीमा युक्त सा प्रतीत होता है । अत: उसमें चिन्तन और कल्पना का स्वाभाविक अभाव है । अत: छन्द योजना के आधार पर खण्ड काव्य के दो भेद - अनेक छन्दों में लिखा गया खण्डकाव्य और सम्पूर्णत: एक छन्द में लिखा गया खण्ड काव्य है ।[27]

सर्गबद्धता की दृष्टि से इसके चार भेद किए जा सकते है -

§1§ सर्ग युक्त

§2§ सर्ग हीन

§3§ जिसमें सर्गीकरण न हो किन्तु वर्णन संकेत हो

§4§ जिसमें सर्ग बद्धता और वर्णन संकेत दोनों हो

रस के आधार पर खण्ड काव्य के दो भेद हो सकते हैं :-

§1§ एक रस समग्र

§2§ अनेक रस समग्र रूप

व्यक्ति परक अथवा घटना परक खण्ड काव्य के दो भेद हो सकते हैं :-

§1§ घटना प्रधान

§2§ वर्णन प्रधान ।[28]

5.3 आधुनिक काल में खण्डकाव्य का विकास एवं मध्यकालीन

आधुनिक हिन्दी खण्ड काव्य मध्यकालीन खण्ड काव्यों से आगे

27. हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य, डॉ0 सियाराम तिवारी, पृ0-53-54.
28. उपर्युक्त ,, ,, ,, ,, पृ0-411.

नहीं बढ़ा है, पाश्चात् प्रभाव के कारण मंगलाचरण और फल वर्णन भले ही हट गया हो । ऐसा युग की प्रवृत्ति के कारण हुआ, यह कला का विकास नहीं है । आधुनिक युग में आकर प्रबन्धत्व की धारणा में विकास हुआ । अब प्रबन्ध के नायक नायिका व्यक्ति विशेष ही नहीं रह गये । अतः खण्ड काव्यादि व्यक्ति परकता से भाव परकता पर आ गए ।[29]

आधुनिक काल में खण्ड काव्य के विकास में डा0 सियाराम तिवारी की उक्त धारणा उचित प्रतीत नहीं होती है क्योंकि आधुनिक काल में निश्चित ही विकास दिखायी देता है । विकास की दो स्थितियाँ होती हैं । प्रथम में खण्ड काव्य का विकास पूर्ण रूप में नहीं होता और दूसरे में खण्ड काव्य का विकास सम्पूर्ण होता है प्रथम स्थिति में पर्याप्त कलात्मकता की झलक खण्ड काव्य मिलने लगती है, लेकिन इसकी शैली प्राचीन ही है। आगे चलकर बिल्कुल नवीन शैली के खण्ड काव्यों का विकास हुआ, जिसे शैली का सच्चा निखरता कहा जाता है यह आधुनिक काल के खण्ड काव्यों में परिलक्षित है । कवियों ने वर्णनात्मकता के आग्रह को बहुत ही कम कर दिया और खण्ड काव्यों में नैतिकता का पुट भी आने लगा । कथा का आधार मात्र लेकर कवियों ने ऐसे मनोवैज्ञानिक ढंग से हृदय की खुली मुँदी प्रवृत्तियों को प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया कि खण्ड का बिल्कुल ही स्वरूप परिवर्तित हो गया ।[30]

शैली के आधार पर दो भेद किए जा सकते है -§1§चरित्र प्रधान §2§ वर्णन प्रधान । चरित्र प्रधान खण्ड काव्य रासो पद्धति के प्रबन्ध काव्यों से प्रेरणा ग्रहण करते हैं, अतएव उनमें चरित काव्य की रूढ़ियाँ अधिक है मौलिकता उतनी नहीं है । वर्णन प्रधान खण्ड काव्यों में पर्याप्त विकास हुआ है जैसे - आल्हा आदि । इन काव्यों में नाट्यकीय का प्रभाव है

---

29. हिंदी के मध्य कालीन खण्ड काव्य, डा0 सियाराम तिवारी, पृ0-412.
30. काव्य रूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास, डॉ0 शकुन्तला दुबेपृ0-134.

एवं कथोपकथन की शैली में सौन्दर्यता है । नवीन शैली में व्यक्तिपरकता, भावपरकता एवं प्रभावात्मकता है ।

काल विभाजन के अनुसार हनुमत्पताका आधुनिक काल का ही खण्ड काव्य है क्योंकि आधुनिक काल सवत् 1900 से अब तक के समय को सभी विद्वानों ने माना है तथा मध्य काल संवत् 1700से1900 तक के समय को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल डा० रामकुमार वर्मा, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पण्डित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र प्रभृति विद्वानों ने माना है । हनुमत्पताका संवत् 1949 में लिखा गया है कि जैसा कि उसके 133 वें दोहे से विदित है। लेकिन आधुनिक खण्ड काव्य की प्रवृत्तियों के आधार पर यह खण्ड काव्य साम्य नहीं रखता है वरन् मध्य कालीन खण्ड काव्य की प्रवृत्तियों पर आधारित है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी काल विभाजन रचना की प्रवृत्तियों के आधार पर ही किया है । अतः हनुमत्पताका खण्डकाव्य आधुनिक काल में लिखे जाने पर भी प्रवृत्ति के आधार पर मध्य कालीन खण्ड काव्य के अन्तर्गत माना जाना ही उपयुक्त होगा । मध्य कालीन खण्ड काव्य में नायक के जीवन की किसी एक ही घटना का वर्णन होता है । खण्ड काव्य की कथा का सर्गों में विभाजित होना अनिवार्य नहीं है। इसमें नायक सुर आदि या इतिहास प्रसिद्ध होता है । इसमें कोई न कोई उद्देश्य भी निश्चित होता है चतुवर्ग फल में से किसी एक की प्राप्ति होती है । इसमें एक रस समग्र रूप में और अनेक रस असमग्र रूप में होते हैं । यह आद्यन्त एक ही छन्द या अनेक छन्दों में भी लिखा जा सकता है आदि प्रवृत्तियाँ मध्य कालीन खण्ड काव्यों में पायी जाती है । अतः इन प्रवृत्तियों के आधार पर "हनुमत्पताका" को मध्य कालीन खण्ड काव्य के अन्तर्गत मानना उचित ही है क्योंकि ये सभी प्रवृत्तियाँ "हनुमत्पताका" खण्ड काव्य में भी है । यह घटना प्रधान वर्णन खण्ड काव्य है ।

5.4 श्रव्य काव्य के अन्तर्गत गद्य, पद्य और चम्पू को परिगणित किया जाता है । पद्य के पुनः प्रबन्ध और मुक्तक दो विभेद माने गये हैं । प्रबन्ध

काव्य महाकाव्य और खण्ड काव्य में विभक्त हो जाता है । यथा -
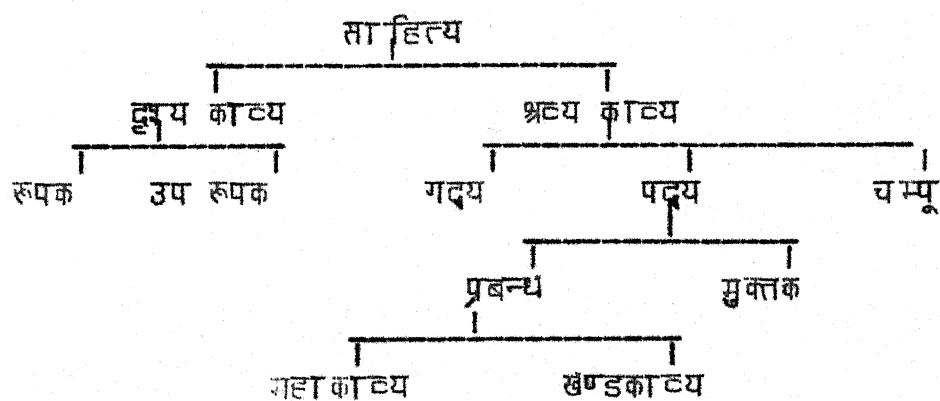
मुक्तक का स्वरूप जानने के लिये उसकी व्युत्पत्ति पर ध्यान देना होगा । "मुक्त" शब्द में "कन" प्रत्यय के योग से "मुक्तक" शब्द निष्पन्न हुआ जिसका अर्थ है —— अपने आप में सम्पूर्ण या अन्य निरपेक्ष । अस्तु मुक्तक काव्य से तात्पर्य उन छन्दों से है जो अर्थ की अभिव्यक्ति में स्वतः समर्थ हों ।

दण्डी, अग्निपुराण कार और अभिनव गुप्त की परिभाषायें इस सन्दर्भ में द्रष्टव्य हैं ——

"वाक्यान्तर निरपेक्षश्लोका ।

पूर्वापर निरपेक्षापि हि येन रस चर्वणा क्रियते तदेवं मुक्तकम्।"

इस प्रकार मुक्तक पूर्वापर निरपेक्ष होता है अतः स्वतःपूर्ण एवं अर्थद्योतन में समर्थ होता है । उसमें कथा का अभाव रहता है और भाव-सम्पदा ही उसकी आत्मा है । इसमें हृदयाह्लादन की क्षमता विद्यमान रहती है ।[31]

सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ० सिंह ने मुक्तकों का निम्नांकित वर्गीकरण किया है :-

---

31. भारतीय काव्य शास्त्र, डॉ० रामानन्द शर्मा, पृ०- 293-294.

(1) संख्याश्रित मुक्तक–सतसई, शतक, बावनी आदि

(2) वर्णमालाश्रित मुक्तक – बारहखडी, ककहरा, अखरावट आदि

(3) छन्दाश्रित मुक्तक – चौपाई, दोहा, कवित्त, छप्पन आदि

(4) रागाश्रित मुक्तक – गरबा, लावनी, कजरी, धमाल आदि

(5) ऋतु एवं उत्सव मूलक – फाग, होली, बारहमासा, सोहर आदि

(6) पूजा या धर्माश्रित – विनय, भजन, सारणी, रसैनी आदि ।

(7) फारसी काव्य रूप – गजल रूबाइयाँ आदि ।

(8) लोकाश्रित मुक्तक – मुकरी, पहेली, कहावत आदि

(9) अंग्रेजी काव्य रूप – द्विपदी, चतुष्पदी, षट्पदी, चतुर्दशपदी.

(10) साहित्य शास्त्राश्रित – छन्द, ध्वनि अलंकार, विषयक उदाहरण

(11) अन्य प्रकार काव्य रूप – नख–शिख, दूत काव्य, अष्टयाम आदि ।[32]

---------------0---------------

---

32. महाकाव्य का स्वरूप विकास, डॉ० शंभूनाथ सिंह.

कृतित्व

(प्रकाशित काव्य कृतियाँ)

6.1 हनुमत्पताका : कथावस्तु एवं अभिधान

6.1(1) हनुमत्पताका के स्रोतों का अध्ययन

6.1(2) कथानक एवं कथायोजना

6.2 चरित्र चित्रण

6.2(1) हनुमान

6.2(2) सीता

6.2(3) रावण

6.2(4) मेघनाद

6.3 भाषा

6.4 भाव-सौन्दर्य

6.5(1) शिल्प-कौशल (अलंकार)

(2) छन्द

6.6 तुलनात्मक अध्ययन एवं निष्कर्ष

6.1 हनुमत्पताका की कथा पौराणिक है । रामचन्द्र जी हनुमान को सभी प्रकार से योग्य समझकर एवं अँगूठी देकर सीता जी की खोज करने के लिए भेजते हैं ।

यह खण्डकाव्य दोहा, कवित्त, सवैया, एवं छन्द में लिखा गया है । इसमें रामचन्द्र जी के द्वारा भेजे हुए हनुमान सीता जी की खोज करने के लिए लंका को जाते हैं । प्रारम्भ में ही वह समुद्र को लाँघकर लंका में पहुंचते हैं तो वे उसको देखकर आश्चर्य चकित हो जाते है क्योंकि जिसमें विशाल द्वार एवं गगनचुम्बी भवन हैं जिनकी शोभा अवर्णनीय है ।

लंका का भ्रमण करते हुए हनुमान अनेक प्रकार के दृश्यों का अवलोकन करते हैं तथा रात्रि के श्रृंगारिक वातावरण एवं नर नारियों के प्रेम मिलन से भली भाँति अवगत होते हैं । प्रातःकाल होने पर एक स्वच्छ जल से युक्त सरोवर पर पहुँचते हैं जिसमें ललनाएँ उन्मुक्त होकर स्नान कर रही थी तथा समीप में ही एक सुन्दर शिव जी का मन्दिर था जिसमें समस्त सामग्री सहित मन्दोदरी रावण के साथ शिव जी की स्तुति करती हुई दिखलायी पड़ती है ।

इसी तारतम्य में हनुमान का विभीषण से परिचय हो जाता है । दोनों परस्पर के समाचारों से अवगत होते हैं । हनुमान के पूछने पर एवं सीता जी की जानकारी प्राप्त करके वह सीता जी के समीप पहुँचते हैं । वह देखते हैं कि सीता जी रावण द्वारा दिए गए संतापों से संतप्त है एवं गहन विचारों में डूबी हुई है । समयानुकूल समझकर वह वह रामचन्द्र जी द्वारा दी हुई उस अंगूठी को सीता जी के समक्ष डाल दे

देते हैं जिसे देखकर वह आश्चर्य में पड़ जाती है । हनुमान प्रकट होकर समाचारों से अवगत कराते हैं । इस जानकार सीता जी हनुमान को फल खाने की आज्ञा देती है।

अनुमति पाकर हनुमान रक्षकों के मना करने पर भी अशोक वन को उजाड़ देते हैं और योद्धाओं को भी मार देते हैं । अन्त में मेघानाद द्वारा ब्रह्म पाश में बँधकर रावण के समक्ष पहुँचते हैं । रावण की आज्ञानुसार हनुमान की पूँछ में आग लगायी जाती है । उसी समय समयानुकूल वायु भी चलती है जिससे सम्पूर्ण सोने की लंका जलकर नष्ट हो जाती है ।

अन्त में हनुमान समुद्र में अपनी पूँछ बुझाकर तथा सीता जी से शिशफूल लेकर शीघ्र ही रामचन्द्र जी के समीप पहुँच जाते हैं । रामचन्द्र जी के पूछने पर वह लंका के समस्त समाचारों से अवगत कराते हैं तथा सीता जी के दुःख का भी वर्णन करते हैं एवं रामचन्द्र जी, लक्ष्मण जी, सुग्रीव आदि हनुमान के सुयश को कहते हैं । इस प्रकार यह कृति यथा नाम तथा गुण भी प्रकट करके अपने नाम को सार्थक करती है ।

हनुमत्पताका के स्त्रोतों का अनुसंधान

6.1.§1§ "हनुमत्पताका" की कथा वाल्मीकीय रामायण का सुन्दर काण्ड, रामचरित मानस का सुन्दर काण्ड, हनुमन्नाटक एवं रघुवंश के अनुसार ही है फिर भी उस दीर्घ कथा को कवि ने घनीभूत कर खण्ड काव्योपयुक्त कलेवर प्रदान किया है । इसका अर्थ यह नहीं है कि कवि ने इसके कथा-विधान में कोई मौलिकता नहीं दिखाई है । इस खण्ड काव्य पर उक्त ग्रन्थों का प्रभाव मात्र कहा जा सकता है । इसमें कतिपय प्रकरण उक्त ग्रन्थों से भिन्न हैं । हनुमान का समुद्र को छलांग मारकर पार करना वाल्मीकीय रामायण, रामचरित मानस, हनुमन्नाटक एवं रघुवंश में है तथा

उसी प्रकार ही कवि के "हनुमत्पताका" में वर्णन किया है लेकिन वह भी अपने ढंग से । इसी प्रकार सुरसा के साथ छल एवं असुरों को मार कर लंका के द्वार में प्रवेश रामचरित मानस, एवं बाल्मीकीय रामायण के आधार पर ही है ।

लंका में हनुमान सीता जी, की खोज में प्रत्येक स्थान एवं घर-द्वार का भ्रमण करते हैं । रात्रि के समय राक्षस पत्नियों द्वारा अपने प्रियों को तस्तरियों में पान आदि देना एवं क्रीड़ा आदि का बाल्मीकीय रामायण के उल्लास सुन्दर काण्ड के आधार पर ही कवि ने भी अपने "हनुमत्पताका" में अपनी मौलिकता में परिणत किया है । कवि ने "हनुमत्पताका" में रावण द्वारा शंकर की स्तुति जो संस्कृत में की है वह भी रामचरित मानस के उत्तर काण्ड[1] के दोहा 107 के एवं 108 के बीच में तुलसी दास जी ने शंकर जी की जो स्तुति की है, यह उसी के अनुसार ही है । घूमते समय हनुमान का विभीषण से परिचय हो जाना, परस्पर के समाचारों से अवगत होना हनुमान द्वारा सीता जी का पता पूँछना विभीषण का सीता जी को अशोक वृक्ष के नीचे बताना, हनुमान का अशोक पर छिपकर बैठना तथा रावण द्वारा सीता जी को समझाना, सीता द्वारा कठोर बचनों को रावण से कहना एवं रावण द्वारा एक माह की अवधि देकर वापिस जाना और हनुमान द्वारा मुद्रिका डालना आदि बाल्मीकीय रामायण एवं रामचरित मानस के आधार स्वरूप ही "हनुमत्पताका" में है ।

सीता जी एवं हनुमान के प्रश्नोत्तर जो कवि ने "हनुमत्पताका" में लिखे हैं उसी प्रकार के हनुमन्नाटक में भी पाए जाते हैं । हनुमान द्वारा अशोक वन को उजाड़ना, अक्षय कुमार को मारना, मेघनाद द्वारा ब्रह्मपाश

---

1. नमामीशमीशान निर्वाण रूपं । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेद स्वरूपम् ।से
   जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं।प्रभो पाहि आपन्नमामीश शंभो।।"तक।

में बंधना, रावण के कहने पर पूँछ में आग लगाना, हनुमान द्वारा लंका को जलाकर नष्ट करना तथा समुद्र में पूँछ बुझाकर सीता जी से चूड़ामणि लेकर रामचन्द्र जी के पास पहुँचना बाल्मीकिय रामायण, रामचरित मानस, रघुवंश एवं हनुमन्नाटक में भी है । अतः "हनुमत्पताका" में भी कवि ने इन्हीं ग्रन्थों के आधार पर लिखा है ।

सीता जी का वियोग में दुर्बल होने का वर्णन हनुमन्नाटक में इस प्रकार है – "कांर्श्यं चेत्प्रतिपत्कला हिमनिधेः स्थूलाथ चेत्पाडिमा नीला एवं मृणालिका यदि धना बाष्पाः कियान्वारिधिः । संतापो यदि शीलतो हुतवहस्तस्याः क्षिपद्भण्यति राम त्वत्स्मृतिमात्रमेव हृदये लावण्य शेष वपुः रामः ।"[2] इसी प्रकार कवि में भी "हनुमत्पताका" में सीता जी की दुर्बलता का वर्णन हनुमान द्वारा इस प्रकार बतलाया है —

"सीता के उपासन की बूझत कथा हौ तौ,
बूझौ कहौ केती हरतालिका सुनाऊँ मैं ।।
कालीकवि लाऊँ ढूँढ द्वैज द्विजराई ,
कला देह दुबराई आज बावरे दिखाऊँ मैं।।
ताके अंग अंगन की रंगत बताइवे को,
समय असंगत बसंत कहूँ पाऊ मैं ।।
अधिक अधीरन की नैनन के नीरन की,
मधा मेघ बरसै तौ तुरत कराऊँ मैं ।।[3]

इन सबके होते हुए भी अनेक स्थलों पर भिन्नता है जिनमें कवि की पूर्ण रूपेण मौलिकता ही है । परम्परागत चन्द्रमा की छटा का वर्णन कवि ने अपनी मौलिकता के आधार पर अनुपम छटा को

---

2. हनुमन्नाटक श्लोक 40, पृष्ठ 120.
3. हनुमत्पताका, कालीदत्तनागर, छन्द 124, पृ0-54.

व्यक्त किया है जो कि उनका अपना एक अनोखा ही ढंग है ।
इसी प्रकार हनुमान एवं मेघनाद के मल्लयुद्ध की कल्पना भी विचित्र
ही है ।

6.1.{2} कथानक और कथायोजना :-

"हनुमत्पताका" की कथा पौराणिक है । रामचन्द्र जी.
हनुमान को सभी प्रकार से योग्य समझकर एवं अपनी अँगूठी देकर सीता
जी की खोज करने के लिए भेजते हैं । यह खण्डकाव्य दोहा, कवित्त,
सवैया, एवं छन्द में लिखा गया है । इसमें रामचन्द्र जी के द्वारा भेजे
हुए हनुमान सीता जी की खोज में लंका को जाते हैं तो प्रारम्भ में
ही वह समुद्र को लांघकर उसका उल्लंघन करते हुए प्रतीत होते है।
जब वह लंका में पहुँचते हैं तो उसे देखकर आश्चर्य चकित हो जाते है
क्योंकि जिसमें विशाल द्वार एवं गगनचुम्बी भवन है । अतः वह उसकी
शोभा को देखते ही रह जाते हैं ।

कवि हनुमान को लंका में भ्रमण कराते समय वहाँ के अनेक
दृश्यों का अवलोकन कराता है । रात्रि के श्रृंगारिक वातावरण एवं
नर नारियों के प्रेम मिलन के दृश्यों से भली भाँति अवगत होते हैं ।
प्रातःकाल हनुमान एक स्वच्छ जल से युक्त सरोवर पर पहुँचते हैं जहाँ
ललनाएँ रात्रि की उन्मादता से अलसाई हुई अपने को पुनः स्वस्थ्य होने
के लिए स्नान करती हुई दिखलायी पड़ी समीप में ही एक सुन्दर शिव
जी का मन्दिर था जिसमें मन्दोदरी रावण सहित शिव जी की
तन्मयता से स्तुति करती हुई दिखलायी पड़ती है ।

इसी प्रकार भ्रमण करते हुए हनुमान का विभीषण से परिचय
हो जाता है तथा दोनों परस्पर के समाचारों से अवगत होते हैं ।

हनुमान सीता जी के बारे में विभीषण से पूँछते हैं । सीता जी की जानकारी प्राप्त करके उनके समीप पहुंच जाते हैं । वहाँ सीता जी को रावण द्वारा दिये गये संतापों से संतप्त एवं विचारों में डूबी हुई देख कर तथा उपयुक्त समय जानकर वह रामचन्द्र जी द्वारा दी हुई अंगूठी को उन के समक्ष डाल देते हैं जिसे देख कर वह आश्चर्य में पड़ जाती है । हनुमान प्रकट होकर समस्त समाचारों से अवगत कराते हैं ; यह जानकर सीता जी हनुमान को फल खाने की स्वीकृति देती हैं ।

सीता जी से आज्ञा प्राप्त कर करके हनुमान रक्षकों के मना करने पर भी अशोक वन को उजाड़ते है । वह अक्षय कुमार के साथ आए हुए योद्धाओं को मार डालते हैं । मेघनाद द्वारा ब्रहम फांस में बाँधकर रावण के समक्ष उपस्थित किया जाता है । रावण की आज्ञानुसार हनुमान की पूँछ में आग लगायी जाती है उसी समय समयानुकूल वायु का वेग भी तीव्र हो जाता है जिससे सम्पूर्ण स्वर्णमयी लंका जल कर नष्ट हो जाती है । अन्त में हनुमान समुद्र में अपनी पूँछ बुझाकर तथा सीता जी से शीशफूल लेकर शीघ्र ही रामचन्द्र जी के समीप पहुंचते है ।भगवान रामचन्द्र द्वारा लंका के समाचारों को पूँछने पर हनुमान वहाँ के समस्त समाचारों से अवगत कराते हैं साथ ही सीता जी के दुःख का भी वर्णन करते हैं । रामचन्द्र जी लक्ष्मण जी तथा सुग्रीव आदि हनुमान के सुयश को कहते है ।

कथा योजना का बिम्ब कवि के मस्तिष्क में यदि स्पष्ट और सुगठित है तो निश्चित रूप से कथा का प्रवाह अक्षुण्य बना रहता है । किसी भी कवि की विशेषता उसके कथा योजना में ही निहित रहा करती है । कवि का व्यक्तित्व इसी के माध्यम से पाठक के मन पर उतरता है । सुगठित प्रांज्जल और शुद्ध रूप में किसी भी साधारण कथा का आकार सहृदय कवि के मस्तिष्क में आकर सशक्त रचना को

जन्म दे डालता है । साहित्याचार्यों ने काव्य के तीन प्रमुख तत्व माने हैजो इस प्रकार है:-{1} बुद्धि {2} भाव {3} कल्पना ।इन तीन सोपानों पर ही किसी वस्तु की उदात्तता अनुदात्तता निभर करती हैं जहां तक प्रस्तुत कृति का सम्बन्ध है विश्लेषण करने पर यह तथ्य सामने आता है कि नागर जी के मन में पूर्वाग्रह के द्वारा कथा संयोजना का एक रूप था और वह प्राय: राम चरित मानस आदि विभिन्न ग्रन्थों से गृहीत किया गया था ।

तांत्रिक होने के साथ ही 'हनुमत्पताका' के प्रणेता रसिक कवि भी थे यही कारण है कि इन्होंने समूची कृति में केवल दो छन्दों का अर्थात दोहा और कवित्त का प्रयोग करके कथा संयोजना का स सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है । कथा का प्रारम्भ रात्रि के आगमन से होता है जैसा कि कवि ने प्रथम, द्वितीय और तृतीय छन्दों में अपने भावों को व्यक्त किया है । समपुष्टि के लिये कतिपय पंक्तियां दृष्टव्य है-

"बंदि चरण रघुनंद के, वह कपिय कुलबीर ।।
बल सागर पहुँच्यो तुरत,जल सागर के तीर ।।" [4]

इसके उपरान्त पवन पुत्र रामदूत हनुमान का लंका प्रवेश का क्रम आता है जहां कवि ने अपनी काव्य कला को उत्कर्ष पर पहुंचाया है । कवि का मन वर्णनात्मक शैली की ओर झुक - सा गया है । गढ़ वर्णन,पताका वर्णन,राजभवन तथा अन्त:पुर के वर्णन इसी कोटि में आते हैं ।

---

4. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 1,2,एवं 3,पृष्ठ 304

कवि को यहां कल्पना के लिए बड़ा अच्छा अवसर मिल गया प्रकृति वर्णन में चन्द्रोदय के आश्रय से उसने बड़े सुन्दर छन्द प्रस्तुत किए हैं, यह सब कथा की प्रारम्भिक स्थितियां हैं । उदाहरण के लिए:-

"सब लग नभ अरविंद सौं, उदित भयो छबि छंद ।।
सुन्दर चन्दन बिन्दु सौं, सुधाकन्द सो चंद ।।" [5]

सर्वत्र चन्द्रिका छटक रही है ऐसा प्रतीत होता है मानो सारी वसुन्धरा के ऊपर दुग्ध धवल चादर बिछा दी गयी हो । प्रकृति का निश्चेष्ट और मौन सौन्दर्य निहारने के लिए यहां अवसर मिला है जो कवि की सौन्दर्य अनुभूति की ओर इंगित करता है ।

भाव-सिन्धु में निमग्न होने पर जहां उसने पाठकों के समक्ष कल्पना के सुन्दरतम मुक्ताओं का संचयन किया है वहां दूसरी ओर कला-त्मक ही सहज रूप में उपलब्ध हो जाता है । ऐसी सुन्दर कल्पना के उदाहरण और कहां मिलेंगे:-

"सोहत परे कलंक के, शशि महँ श्यामल चिंद ।।
शेष कुंडली पै मनो, सोवत परे गुविंद ।।" [6]

प्रकृति वर्णन के उपरान्त कवि की दृष्टि राज-पौर की ओर उठ जाती है, सीता का अन्वेषण, पुर कौतुक तथा राज पौर आदि का वर्णन करने का अवकाश यहां कवि अपनी कल्पना के माध्यम से निकाल

---

5. वही, छन्द 11, पृष्ठ 7
6. वही, छन्द 19, पृष्ठ 11

ही लेता है :-

"दुग्धहिं सरोवर की लहर छटा सी छूटत ,
फिरत अटा माशिा तरद उदो करै । " 7

लिखने वाला कवि तुरन्त ही हनुमान को वहां ले जाता है जहां पुर नारियां स्नान करने के लिए प्रस्तुत हैं । यथा -

"फिरत विलोकत जानकी गए तहाँ हनुमान ।
जहाँ सुरतहारी करत पुरनारी स्नान ।। " 8

भाव और कला पक्ष का सुन्दर समन्वय किया गया है प्रस्तुत छन्द के 28 वें छन्द में । इसके उपरान्त कथा की मध्य स्थिति आती है और इसी अवसर पर खण्ड काव्य का दूसरा पात्र पाठकों के समक्ष प्रस्तुत होता है । अन्य कवियों की भाँति रावण यहाँ उतने हेय रूप में प्रस्तुत नहीं होता है । इस चरित्र के पीछे त्याग और साधना को तेज पुंज ही अधिक दृष्टि गोचर होता है । कथा में शैथिल्य न आ जाय इसलिए कवि ने सपत्नीक पुलस्त कुल दीप को वहां उपस्थिति कराया है । 38 वें छन्द में वे इसी भाव को व्यक्त कर रहे है:-

"तिहि अवसर आयो तहाँ ,मुनि पुलस्त्य कुलदीप ।
दीप मालिका सी लगी ,मन्दोदरी समीप ।। " 9

---

7. वहीं, छन्द 28, पृष्ठ 15
8. वही, छन्द 31, पृष्ठ 16
9. वही, छन्द 38, पृष्ठ 19

लगता है कवि को संस्कृत से सहज लगाव है । पात्रानुकूल भाषा का निर्वाह करने के लिए ही उन्होंने रावण द्वारा शिव-आराधना की संयोजना की । कवि की बहुज्ञता और पाण्डित्य का यह एक और उदाहरण है । यह आठों श्लोक[10] रावण की विद्वत्ता की ओर भी इंगित करते है वैसे भी रावण वेद पाठी ब्राह्मण था । यहां पर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कवि में ही एक और तांत्रिक आ बैठा हो । स्तुति के उपरान्त अपने समाज सहित रावण राज भवन को वापिस लौट जाता है । उधर दूसरी ओर कथा का प्रवाह आगे बढ़ सके इस लिए पवन पुत्र हनुमान का शुभागमन करा दिया जाता है । यहां उनका विभीषण से परिचय होता है । प्रश्नोत्तर शैली को अपनाकर जिस कथा का विस्तार पृथक से दो सर्गों में किया जा सकता था उसे उत्पन्न संक्षिप्त कर दिया है इस प्रकार संक्षिप्तता में कहीं भी शिथिलता नहीं आने पायी ।

हिन्दी साहित्य में अभी तक प्रश्नोत्तर और संवाद-प्रणाली के लेखन में महाकवि केशव सिद्धहस्त माने जाते हैं । पर काली कवि भी कम नहीं है । संक्षिप्त प्रश्नोत्तर - प्रणाली और संवादात्मकता उच्च कोटि की बन पड़ी है । यथा-

> "कुशल प्रश्नकर भीषणहिं पूँछी हरि सिर मौर ।
> रघुकुल की जीवन लता जनक सुता किहि ठौर ।।
> संपति लोचन लोक की जाप विलोकहु आप ।
> तरू अशोकतर बसत है , भरी शोक संताप ।। 6"[11]

---

10. वही छन्द , 52एवंx से तक पृष्ठ
11. वही छन्द,52 एवं 53 , पृष्ठ 23 एवं 24

यद्यपि इस खण्ड काव्य में कला पक्ष का सुन्दर निरूपण किया गया है किन्तु हृदय पक्ष भी कम प्रधान नहीं है -

"फिरत वाम देखी लखी, जनक सुता अति दीन ।
परी भूमि तल विकल जन, कमला कमल विहीन ।। "[12]

जैसी पंक्तियाँ भला कोई सहृदय भुला सकता है ?

कथा चरम सीमा पर पहुँचे इसके पूर्व ही कवि ने रावण का अभिप्राय उसके स्वगत कथन के रूप में प्रस्तुत किया है जो सुन्दर बन पड़ा है । इसमें सीता जी की महत्ता रावण की निरीहता का अच्छा चित्रण हुआ है । मानस से कवि बहुत अधिक प्रभावित रहा है । मुंदरी का गिराया जाना इसका एक और प्रमाण इस प्रकार है-

"डार दई अवसर निरख मणि मुँदरी हनुमान ।।
लई मगनमन जानकी, गगन अगिन कण जान ।।"[13]

यहाँ आकर पुनः संवादात्मक शैली में हनुमान जानकी का कथोपकथन चलता है जिससे कथा का आगे बढ़ने का अच्छा योग मिल जाता है । मानस की भाँति तारिका विध्वंस ,हनुमान का पराक्रम और शौर्य अंकित करने में कवि समर्थ हुआ है । वीर रस की अभि-व्यंजना में भी कवि को अच्छी सफलता मिली है । घननाद का रथारूढ़ होना एवं ब्रह्मास्त्र प्रयोग इसके अच्छे उदाहरण है ।वस्तु निर्वाह की तीसरी स्थिति में कवि ने हनुमान का बाँधा जाना दिखाया है । वह लंकाधिपति के दरबार में उपस्थिति कराया गया है जिसमें रावण

---

12. वही , छन्द 57 पृष्ठ 25

13. वही, छन्द 77 , पृष्ठ 33

को डाटा फटकारा गया है । रावण अपने दरबारियों से हनुमान के लिए दण्ड व्यवस्था पूँछता है । पूर्व परम्परा अनुसार वे हनुमान की पूँछ में आग लगाने की योजना सुझाते है । तदुपरान्त लंका-दहन का दृश्य पाठकों के समक्ष उपस्थित होता है ।। तत्पश्चात जगज्जननी सीता से शीशफूल लेकर अपने स्वामी रामजी का आदेश पालन कर उन्हीं के पास सकुशल लौट आते हैं । लौटने पर रामचन्द्र जी उनसे जानकी जी का समाचार पूँछते हैं ।

इसके उपरान्त ग्रन्थ का पर्यवसान रामचन्द्र जी लक्ष्मण जी सुग्रीव , जामवन्त एवं अंगद आदि के द्वारा वर्णित सुयश में होता है जिससे ग्रन्थ के शीर्षक की सार्थकता भली भाँति सिद्ध होती है । उपसंहार की अवस्था में प्राचीन परम्परा के अनुसार ग्रन्थ निर्माण का समय भी उल्लिखित किया गया है -

"उनइससे उनचासमेँ सकवि को सुख पंथ ।।
प्रगट भयो हनुमंत को, सुयश पताका ग्रंथ ।।"[14]

इस प्रकार इस पूरी कृति में जिसमें कि कुल 135 छन्द उपलब्ध हैं । कवित्व की दृष्टि से योजना की दृष्टि से निरूपण की दृष्टि से तथा सुसम्बद्धता की दृष्टि से कवि को अपने प्रयास में पूर्ण सफलता मिली है ।

6.2

चरित्र चित्रण :-

प्रस्तुत खण्ड काव्य में कवि ने लगभग छः पात्रों की सर्जना

---

14. वही, छन्द 133 पृष्ठ 59

की है किन्तु केवल चार पात्र ही ऐसे हैं जिनके चरित्र उद्घाटन में कवि को पूर्ण सफलता मिली है । पराक्रमी हनुमान को इस कृति में नायकत्व प्रदान किया गया है । लंकाधिपति दशानन को खलनायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है । राम की धर्म पत्नी सीता का चरित्र चित्रण श्रृंगार के संयोग और वियोग से परिपूर्ण होकर उच्च कोटि का बन पड़ा है । इसके अतिरिक्त मेघनाद का भी संक्षिप्त चित्र काली कवि ने पाठकों के समक्ष रक्खा है । सभी पात्रों के चरित्र चित्रण में उन्हें पूर्ण सफलता मिली है । कथा के सम्यक प्रवाह को बनाए रखने के लिए इन चरित्रों में पूर्ण रूपेण योग दिया है । पात्रों में सुसम्बद्धता है कहीं भी ऐसा प्रतीत नहीं होता कि व्यर्थ ही पात्रों की सर्जना की गयी है । जितने पात्र सृजित किए गए हैं वे वस्तु की आकांक्षा पर निर्भर करते हैं स्वतः ही वे अपनी उपादेयता को सिद्ध करते हैं । पात्र कवि का वह समुचित माध्यम है जिसके द्वारा कवि अपनी मनोभावनाओं को सिद्धान्तों को तथा अपनी विचार धाराओं को सहृदय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है । हनुमान सीता रावण आदि के चरित्र निःसन्देह इस कृति में प्रमुख स्थान रखते हैं ।

6.2

हनुमान :-

नायक होने के साथ ही साथ पवन पुत्र हनुमान राम जी के आज्ञाकारी सेवक है । उनके जीवन का लक्ष्य भगवान राम की आज्ञा का अक्षरशः पालन करना । वे राम जी को अपना स्वामी मानते हैं और अपने को उनका दास और सेवक। काली कवि ने इनका चित्रण इस रूप प्रस्तुत किया है यथा :-

"बंदि चरण रघुनंद के ,वह कपिप कुलवीर ।।
बल सागर पहुँच्यो तुरत,जल सागर के तीर ।।"[x15]

15. वही, छन्द 1 पृष्ठ 3

पराक्रमी स्वरूप का वर्णन करते हुए कवि ने एक अच्छा शब्द चित्र प्रस्तुत किया है जिसके द्वारा उनकी वीरता का आभास पाठकों को सहज रूप में मिल जाता है यथा :-

" प्रबल उच्चकर अच्छत ततच्छन विलोको वीर,
पाया कलकच्छन सुगंध मधु मल्ली को ।। " [16]
काली कवि लडित उताल तन तीरन पै,
ताक तमताम को उताल तरु तल्ली को ।।
पिच्छल पछेल पग झेल घन वल्लभ ने,
वल्लभ नदी को कियो एक उछल्ली को ।।
तुच्छकर कुछ न भुजान बल स्वच्छकर,
गुच्छकर शिर पै समच्छ पुच्छबल्ली को ।।

असुर विनाशक रूपका प्रस्तुत कृति में सरस वर्णन किया गया है जैसे:-

" असुर मार सुरताहि छल दार लंकिनीदार ।।
लखत भयो कपि लंक को,नभ चुंबति पुर द्वार ।।" [17]

वीर रस की अवतारणा करते हुए कवि ने हनुमान का और एक रूप प्रस्तुत किया है । हनुमान को किंचित भी शंका नहीं है वे प्रत्येक कार्य करने में सक्षम है वीरता की प्रशंसा करते हुए वे लिखते हैं । यथा:-

" चलो पैठ शंका न कछु , रंकारत रघुबीर ।
लंका ते गढ़ दुर्ग में बंका वानर वीर ।। " [18]

16.वही,छन्द 2 पृष्ठ 3

17.वही,छन्द 3,पृष्ठ4

18.वही,छन्द 5 पृष्ठ5

पराक्रम के तेज से प्रदीप्त हनुमान का सारा शरीर अरूण वर्ण का हो रहा है । वह पर्ण पुंज में छिपा हुआ ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई अशोक का पुष्पित हो उठा हो ।

यथा:-

आनन अरूण प्रताललन , चरण शरण सम तूल ।
परण पुंज कपि छपरहुयौ जनु.अशोक को फूल ।। [19]

सेवक अपने स्वामी का आराधन करने में अपने जीवन का×ब उत्सर्ग कर देता है । हनुमान राम के अनन्य उपासक थे । राम की कृपा से हनुमान लघु काय और विशालकाय धारण करने में भी सक्षम्य हैं । जानकी जी के पूँछे जाने पर -"को हो तुम " का निम्न लिखित उत्तर कितना सुन्दर बन पड़ा है - " हों हो दूत प्रीतम तिहारे को "[20] और इसमें यह अभिव्यक्ति भी बड़े मार्मिक ढंग से हो गयी है कि मैं आपके प्रियतमभगवान राम का ही दूत हूँ । सीता के मन में उठे हुएसंशय का निदान कैसे हो यह कुछ समझ में नहीं आ रहा था जब सीता जी ने उन का सूक्ष्म रूप देखा तो कवि ने तुरन्त ही सीता के मन का संशय दूर करने का प्रयत्न किया और लिखा :-

" लंकपुर क्रूर समुंदर मथन काज ।
बंदर बलंद भीरू मंदर समान भो ।। [21]

वे रघुनाथ प्रिय हैं सीता जी उन्हें शुभाशीश प्रदान करती

---

19. वही छन्द 59 पृष्ठ 26

20. वही छन्द 80 पृष्ठ 34

21. वही छन्द 80 पृष्ठ 35

हैं कि तुम चिरजीवी रहो । अपना संकोच भी वे साथ-साथ व्यक्त करती हैं कि तुम हमारे अतिथि हो पर यहाँ वनवास में वनफूल के अतिरिक्त तुम्हें और क्या दे सकती हूँ कितनी सुन्दर और सफल अभिव्यंजना है यथा-

"चिरजीवहु रघुनाथ प्रिय, भैंट तुमहिं या देत ।
वनफल ही भोजन यहाँ, अतिथि तिहारे हेत ।।"[22]

कवि ने जहाँ हनुमान के मनोरम और सुखद स्वरूप की अवतारणा की है साथ ही साथ वहाँ विध्वंसक रूप का भी चित्रण किया है इसमें कवि को पूर्ण रूपेण सफलता मिली है । जैसे:-

"तौ तरु लतान गरोर जर वेलिन की,
चितय न वेलिनकी हारत छर्ड करै ।
काली कवि मजर उजार फुलवारिन कौ,
मार रखवारिनकौं कलह मई करैं ।।
रक्षपत्ति रावण सौं रक्षक पुकारे जाय,
चाहत कहा धौं अब अगति दई कौ ।।
आज लौ न ऐसी भई लंकपुर वासिन पर[23]
यह कपि जात नाथ निपट नई करै ।।"

बाहुबली हनुमान का वीर वेश बड़ा ही सुन्दर बन पड़ा है । वे दुष्टों के समूहों के नष्ट कर्ता हैं । रण मण्डल में उनके भुजदण्ड उदण्ड है यथा :-

"चंडकर चुंगल चपेट खल मुंडन को,
खंडकर गंडन गयंद गलदंत के ।
मंडकर मंडित उमंड रण मंडल मैं,
दंदित डंदड भुजदंड हनुमंत के ।।"[24]

22. वही छन्द 81, पृष्ठ 35. 24. वही छन्द 90 पृ0-39.
23. वही छन्द 84, पृष्ठ 36.

आगे कवि ने पवन पुत्र हनुमान का पर दुख निवारक रूप प्रस्तुत किया है । वे राम के सुयश का गान करने वाले परम चतुर चारण हैं । चारण होने में भी उन्हें अत्यन्त गौरव मिला है । यथा–

लंकपुर जारन उजारन अशोक वन,
मारन न हौं असुर कुमारन की भीर को।
कासी कवि निपट निवारन सिया को,
शोक पार परतार नहीं जलनिधि नीर को।।
द्रोण गिरिधारन उधारन अहीश प्राण,
बालबध कारन हौं तनय समीर को ।।
दशन उचारणहौं वीर निशि चारण को,
चारण हौं चतुर मुनिन्द रघुवीर को ।।-[25]

हनुमान अत्यन्त निर्भीक और निशंक हैं । राम की कृपा का उन्हें पूरा भरोसा है । वे अपनी लघुता को भूलकर राम की कृपा के द्वारा ही बड़े से बड़े काम करने में अपने को सामर्थ्य पाते हैं । यही कारण है कि उन्होंने लंका का विध्वंस करके, उसका अग्निदाह करके, सीता का समाचार लेकर अपने स्वामी का कार्य साधन किया । यथा–

निशिचर सकल सशंक कर या विधि लंक जराय,
अति अशंक जलसिंधु में, कूदपरौ कपिराय ।।-[26]

कवि ने अन्त में अपने नायक का लक्ष्मण, सुग्रीव, जामवन्त तथा अंगद के द्वारा सुयश वर्णन कराया है । हनुमान बुद्धि और बल के सागर है उन्होंने द्रोणाचल को धारण किया है । वे व्योम मार्ग से चलने वाले

25. वही, छन्द 103, पृष्ठ 44.
26. वही, छन्द 112, पृष्ठ 28-29.

पवन के पुत्र तथा वानर सेना के अधिपति हैं । यथा —

"बुद्धि बलसागर के विशद सुधा को,
सारसद उपकार सुगरीव सुखदेन को ।
काली कवि द्रोणागिरि धारण अपार भार,
कर अवतार धाक मर्दन मैने को ।।
व्योममग धावन है पावन पवनसुत,
भवन अपार धार लावन सुखदेन को ।।
कारबरदार दरबार रघुनायक को,
अवसरदार सरदार कपि सैन को ।।[27]

कवि ने हनुमान को जहाँ पवनपुत्र माना है उसके साथ ही साथ वे अंजनिकुमार भी हैं । यथा —

"अंजनी सलोनौ है तुम्हारौ वीर छौनौ अब,
रोकौ नाहि कौनौ जौ अनहौनौ खेल खेलैना ।।[28]

अंगद द्वारा तो कवि ने हनुमान की अच्छी संस्तुति करायी है। हनुमान सभी के वन्दनीय हैं वे बाली का हित करने वाले रण रूपी हाथी को वशीभूत करने वाले वारों में अग्रगण्य विपत्ति का निवारण करने वाले समीर सुवन हैं । यथा —

"करन अंगद रामचंद अरविंद पद,
रज मकरंद को मलिंद अवधूत है ।।
काली कवि बंदनीय राजत अमंद वृंद,
बंदर बलंद को बुलंद पुरहूत है, ।।

---

27. वही, छन्द 128, पृष्ठ 56.

28. वही, छन्द 130, पृष्ठ 57-58.

ब ल जाल सिंधु मानिंधु रण सिधुर को,
धरणि धुरंधर को धन अद्भुत है ।।
बीरन को बीर मीर अपार अधीरन को,
बिपत बिदीरन समीरन सपूत है ।।"[29]

6.2|2| सीता :-

नारी पात्रों में एक मात्र सीता ही का ऐसा चित्रण किया गया है जो पाठकों और आलोचकों की दृष्टि से उल्लेखनीय है । सीता अपने प्रियतम राम के प्रेम में निमग्न रहने वाली पत्नि के साथ ही साथ उनकी अनन्य उपासिका है । समूचि कृति में सीता के संयोग अवस्था के चित्र अनुपलब्ध हैं । बिरह विधुरा कृशकाय दीना-हीना तथा प्रिय वियोक्ता के चित्र बड़े मार्मिक बन पड़े हैं, ऐसा प्रतीत होता है मानो अशोक तरू पुंज के कुंज में की सुन्दर मंज्जरी म्रियमाण सी पड़ी हुई है ऐसा प्रतीत होता है कि मारूत के प्रबल प्रवाह के कारण चंचला घन मण्डल से अचानक गिर पड़ी हो । चिंतिता सीता अबला का रूप धारण किए हुए दशानन द्वारा आरोपित वाटिका में ऐसी प्रतीत हो रही है मानों राहू के भय से भीत होकर द्विजराज चन्द्रमा की कला धरती पर पड़ी हुई हो । यथा —

"भौंर भर भंजित अशोक तरू पुंज कुंज,
बंजुल की मंजरी सुमंजु कुमला परी ।।
कारी कवि तोर तरू मरूत मरोर जोर,
घोर घन मंडलते चूक चपला परी ।।
विनही अराम के अराम में दशानन के,
तामरस दाम धाम राम अबलापरी ।।

---

29. वहीं, छन्द 131, पृष्ठ 58.

क्रौंच द्विजराजकी अकास ते सु आन मानों
राहु भय भाज छूट निरखि कलापरी ।।"[30]

बिरह विधुरा होने पर भी जहाँ एक ओर सीता असहाय और असक्त हैं वहाँ कवि ने अबला को सबला और निर्भीक रूप देने में किंचित भी संकोच नहीं किया है । यथा —

"हीन तन अधिक मलीन आहारहीन कोहु,
तिमिर मलीन घनवेष्ठन को वेश है ।।
काली कवि चूड़ामणि वरण हमारे योग,
रावण तिहारी यह भणाति भदेश है ।।
नखहूँ तिहारे युद्ध कवि न बखानो मोहिं,
यह अपराध क्षमि देको करनेश है ।।
चरण सरोजन को निरख धरा की ओर,
रूकत न रोको नित झुकत दिनेश है ।।"[31]

सीता का मन अहिर्निश राम के चरणों में निरत रहता है भला वे राम को छोड़कर स्वप्न में भी किसी का वर्णन करेगी? वे राम की अनन्य आराधिका एवं उपासिका हैं । यथा —

"रघुपति हित आतपाविना हिय नवनीत द्रवैन ।।
रामचन्द्र बिन होय क्योंहसन चाँदनी रैन ।।65।।

सीता के वाक् पटु होने का प्रमाण अत्यन्त सुन्दर बन पड़ा है । वे तर्कमयी भाषा में अपनी सहज बात का उल्लेख रावण से करती है यथा —

---

31. वही, छन्द 64, पृष्ठ 28.

"देखी रावण नृपन की, मतमतवारी होत,
सुनै कहूँ वारिज विमल, विकसत कुसुमु नीत ।।"[32]

वह काव्य श्रेष्ठ कोटि का माना जाता है जिसमें अन्तः और वाह्य पक्ष दोनों का समन्वित रूप प्रस्तुत किया जाता है । कवि को जहाँ कला पक्ष के वर्णन में भली प्रकार सफलता मिली है ठीक उसी प्रकार हृदय पक्ष की मनोरम अनुभूतियाँ अनूठी बन पड़ी हैं । तत्पुष्टि के लिए एक ही उदाहरण[33] पर्याप्त होगा । यथा —

"सीता के उपासन की कूजन कथा हौं तौ,
दूजी कहौं केती हरतालिका सुनाऊँ मैं ।।
कालीकाहि लाऊँ ढूंढ कैसे दिखराई,
कला देह दुबराई आज रावरे दिखाऊँ मैं ।।
ताके अंग अंगन की रंगत बताइबे कौ,
सम्य असंगत बसंत कहँ पाऊँ मैं ।।
अधिक अधीरन की नैनन के नीरन की,
भा मेघ बरसैं सौ सुरत कराऊँ मैं ।।

6.2(3) रावण :-

राम काव्य परम्परा में रावण का उल्लेख लंकाधिपति के रूप में हुआ है वह भगवान शंकर का सच्चा भक्त और परम उपासक चित्रित किया गया है । नारद जी ने भी पूर्वाग्रहों से प्रेरित होकर प्रस्तुत कृति में रावण को शिव का भक्त माना है । यथा —

---

32. वही, छन्द 67 पृष्ठ 29.

33. वही, छन्द 124 पृष्ठ 54.

"तिन शिव को पूजन कियो, सहित विभव विस्तार ।
लगो बहुरि अस्तुति करन, छंद प्रबंध प्रचार ।।[34]

रावण जैसा भक्त था वैसा ही विद्वान भी । कहा जाता है कि रावण ने ही सर्व प्रथम वेदों का भाष्य किया था । कवि भी ऐसी मान्यताएँ अपने मानस में छिपाए हुए है । रावण के पाण्डित्य प्रदर्शन की बात उसके द्वारा की गयी भगवान शंकर की स्तुति है जो कवि ने विशुद्ध संस्कृत शब्दावली में प्रस्तुत की है । यथा —

"सदा शिवाय शङ्कराय शाश्वताय शूलिने,
भवाय भैरवाय भूत भावनाय भास्वते ।।
विभावरीशखण्ड भूषिताय कृत्तिवाससे,
मृडाल माधव प्रियाय मुक्तिदाय ते नमः।।"[35]

कवि ने रावण को मायावी भी माना है उसमें यह सामर्थ्य थी कि वह इच्छानुकूल कोई भी रूप धारण कर सकता था । यथा —

"सुन्दर दरशन योग तब, दशकंधर धार रूप ।
आयो हर हर करत सिय थर थर कॅपी अनूप।।"[36]

विद्वान शक्ति सम्पन्न अनन्त ऐश्वर्य और वैभव से परिपूर्ण रावण प्रणय का याचक भी है वह परम सुन्दरी सीता को अपनी पटरानी बनाना चाहता है । यथा —

---

34. वही, छन्द, 40, पृष्ठ 19.
35. वही, छन्द 48, पृष्ठ 22.
36. वही, छन्द 60 पृष्ठ 27.

"परम सुदेश केश कामिनी हमारिन को,
चूड़ामणि वरण तिहारे बिन सूने है ।।"[37]

कौतूहल, उत्सुकता और रसिकता का वर्णन भी इस कृति में उल्लेख है । रावण का रसिक रूप अवलोकनीय है । यथा —

"बेर कहा राखी सुकर, दृग भ्रमरनकी बेर ।
देत क्यों न नीरज नयनि, एक बेर हँसहेर ।।"[38]

प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रसंशा अच्छी लगती है । सीता के मन पर अपना प्रभुत्व जमाने के लिए रावण स्वयं आत्म प्रसंशा में लीन हो जाता है । यथा —

"मंदकर कुमुंद कदंब सुरवृंदन को,
मुनि मुख चन्दन को करन कलेश को ।"
काली कांव असुर अमंद अरविंदन को,
सुदमकरंदनको हरख हमेश को, ।।
उचित उंदड भुज वरन मयूरबन तैं,
भार तम टारन हैं शिखर महेश को ।।
देखौ देश देशन दिशान दीप दीपन में,
दमक रहो है तेज रावण दिनेश को ।।"[39]

इन रूपों के अतिरिक्त कवि के रावण के पराक्रमी और वीर स्वरूप का भी संक्षिप्त रूप से चित्रण किया है जो अत्यन्त सफल बन पड़ा है । यथा —

37. वही, छन्द 61, पृष्ठ 27.

38. वही, छन्द 66, पृष्ठ 29-30.

39. वही, छन्द 68, पृष्ठ 29-30.

"बरषत मो धन भुजन ते असि धारा को नीर ।
राहें सो जाय उड़, तेरो श्वास समीर ।।"[40]

6.2.{4} मेघनाद :-

कवि ने मेघनाद को अत्यन्त वीर माना है । वह रथ चलाने में चलाने में निपुण अत्यन्त गम्भीर एवं रण में धीरे रखने वाला सुवीर है। जैसे——

"गीर गँभीर महा रणाधीन सुवीर धुरीनन को शिरताजसो ।।
त्यों कवि काली सुरावत आवत बाज दबावत टूटत बाजसो।।"
लै तरू राज तराज महा धुन गाज बिराजत जोम जहाजसो ।
मेघगराजन के रथ पै कपि राज तराज परो गिरि गाजसौ ।"[41]

कवि ने मेघनाद को मल्लयुद्ध के लिए प्रस्तुत किया है । ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कवि भी इस विदया के जानकार रहे हो क्योंकि द्वन्द युद्ध के वर्णन में उन्होंने इस विषय का सूक्ष्मातिसूक्ष्म वर्णन किया है । यथा ——

"भयौ विरथ आयुध रहित, महारथी बलवान ।
फुल्ल बाहु लाग्यौ करन मल्लयुद्ध संधान ।।"[42]
बैठकर बायें तर बगल तर हो पैठ,
कमर समेट करवल भरपूर में ।।
काली कवि गोट पर पकर लगोट,
पट पीडकर मीडत मिलाये देत धूर में ।।
घूमकर चक्कर की निकट तरे है वीर ।
भूमि पर चाहत पछारौ कपिशूर में ।।

---

41. वही, छन्द 95, पृष्ठ 40-41.
42. वही, छन्द 96, पृष्ठ 46.

झूमकर झपक झपेटत भुजान बीच,
लूमकर लपक लपेटत लंगूर में ।।"[43]

कवि ने रावण का जहाँ मायावी रूप प्रस्तुत किया है वहाँ मेघनाद मायावी होने के साथ-साथ विभिन्न शस्त्रास्त्रों का सफल प्रयोक्ता भी है । यही कारण है कि ब्रह्मास्त्र का प्रयोग करके उसने हनुमान को आबद्ध कर लिया । यथा —

"मारो वारिदनादने, कपिहि कियो परतंत्र,
ब्रह्म अस्त्र बगलामुखी, रिपु भुज तंभन मंत्र ।।"[44]

दैवी शक्ति को आसुरी शक्ति के सामने झुकना ही पड़ता है। पुराकाल से लेकर वर्तमान तक ऐसी परिपाटी चली आ रही है ।कवि ने मेघनाद को अत्यन्त बली, पराक्रमी और निर्भीक योद्धा के रूप में प्रस्तुत किया है । अकेले ही हनुमान को बाँध लेना, उसकी वीरता का प्रमाण है । यथा —

"बांध बजरंग को अकेले रंग भूमहीं ते,
संग में सके लैं सैन धारा लिए जात है।।"[45]

6.3 भाषा :-

सृष्टि के समस्त प्राणियों में मानव श्रेष्ठ माना जाता है । इस श्रेष्ठता में दो तत्व प्रमुख रूप से काम करते हैं, एक तो मानव के पास

---

43. वही, छन्द 97, पृष्ठ 41-42.
44. वही, छन्द 98, पृष्ठ 42.
45. वही, छन्द 99, पृष्ठ 42-43.

उत्कृष्ट बुद्धि है एवं दूसरे उसके पास उत्कृष्ट वाणी है । दोनों तत्वों में वाणी श्रेष्ठ है क्योंकि वही बुद्धि को प्रेरित करती है । वाणी का सूक्ष्म एवं अभौतिक रूप ही मन को प्रेरित करने में कारण बनता है । सुप्रसिद्ध वैयाकरण आचार्य पाणिनी ने भी लिखा है — "व्यक्तां वाचाम् समुच्चारणे इति भाषा" अर्थात् सम्यक् प्रकार से उच्चारित व्यक्त वाणी को ही भाषा कहते हैं । महर्षि पतंजलि भी व्यक्त भाषा को महत्व-पूर्ण मानते हैं — "व्यक्तावाचि वर्णा येषां त इमे व्यक्त वाचः ।"[46]

भाषा के ही आलोक से यह चराचर जगत प्रकाशित है अन्यथा सब कुछ अन्धकार में डूबा रहता कवि अपनी वाणी का प्रयोग इसी अज्ञानान्धकार को हटाने के निमित्त करता है —

इदमन्धतमः कृत्स्नम् जायेत भुवनत्रयम ।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसार न दीप्यते ।।[47]

अर्थात् यदि सृष्टि के आरम्भ से भाषा की ज्योति न जलती होती तो यह त्रिभुवन घोर अन्धकार में निमग्न हो जाता ।

भाषा निसन्देह सबसे भावों की संवाही हुआ करती है। कवि इसी के माध्यम से मनोगत भावों की अभिव्यंजना प्रस्तुत करता है। अनुभूति सत्य को हृदयांगम करके प्रेक्षकों के समक्ष रखने में वह वाणी का विधान करता है । सुन्धी लोग इसी को काव्य कहते हैं ।

उपनिषद्-काल के एक प्रसिद्ध ऋषि ने भाषा के महत्व पर अपनेविचार व्यक्त किए है । उनके अनुसार यदि सृष्टि में वाक् तत्व न

---

46. महाभाष्य, पंतजलि, 1/3/48.
47. काव्यादर्श, दण्डी, 1/3-4.

होता तो धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य, उचित-अनुचित, सहृदय-अहृदय, की पहचान निराकरण विवेचन तथा व्यवस्था न हो पाती जो वाणी को ब्रह्म रूप में उपासना करता है उसी का भाषा पर पूर्ण अधिकार होता है और वही इस जीवन में अपने प्रयत्न के अनुसार शक्ति और सिद्धि को प्राप्त करता है । कहा भी गया है —

"शब्द ब्रह्माणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति ।"[49]

जिसे भाषा का ठीक प्रयोग आता है उसकी जिह्वा में अमृतका वास माना जाता है । मंत्र में यही शक्ति मानी जाती है । शुद्ध भाषा और उच्चारण के बल पर महाविषधर सर्प का भी विष उतर जाता है। महर्षि वाक् तत्व को सिद्धि का साधन मानते हैं । यथा —

"एकःशब्द सम्यग ज्ञातः शास्त्रान्वितः सुप्रयुक्तः
स्वर्गे लोके च कामधुक भवति ।"[50]

कवि का जन्म बुन्देलखण्ड में हुआ अतएव स्वाभाविक है कि उसमें बुन्देलखण्डी के शब्दों का प्रयोग हो । संस्कृत के तत्सम, तद्भव शब्दों का कवि ने भावों की अनुकूलता के लिए उपयुक्त माना है वहाँ दूसरी ओर देशज और विदेशज शब्दों को भी प्रस्तुत कृति में स्थान दिया गया है सम्पूर्ण कृति में दोहा और कवित्त नामक छन्द का ही प्रयोग किया गया है, यह प्रयोग अपने में पूर्ण और सफल है । जहाँ तक भाषा काप्रश्न है ब्रजभाषा की कृति ही इसे कहा जायेगा पर विभिन्न भाषा के शब्दों का भी इसमें बाहुल्य है ।

---

49. ब्रह्म बिन्दूपनिषद.

50. महाभाष्य, पंतजलि, 6/1/84.

समूची कृति में पात्र एवं भावानुकूल भाषा का प्रयोग सुन्दर बन पड़ा है । अभिधा का एक सरल और सहज उदाहरण देखिये ——

"बंदि चरण रघुनन्द के, वह कपिर्द कुलवीर ।
बल सागर पहुँच्यो तुरत, जल सागर के तीर ।।"[51]

वीर रस की सफल अभिव्यंजना के लिए कवि ने वित्थ संयुक्ता-क्षर तथा टवर्ग के वर्णों को प्रधानता दी है इसलिए स्वाभाविक रूप से भाषा में ओज गुण का समावेश हो गया है । यथा ——

"उच्चकर अच्छन लच्छन बिलोको वीर,
पाया कलकच्छन सुगंध मधु मल्ली को ।।"[52]

× × × ×

"गिरिन करंडकर रंडकर राकसीन,
बदन बिहंडकर असर अनंत के ।।
काली कवि तुंड बिन वाहन बिलंडकर,
छंडकर झंड मंडलीकन के पंत के ।।"[53]

× × × ×

"बैठकर बायें तर बगलताहो पैठ,
कमर समेट करबल भरपूर में ।।
काली कवि गोट पर पकर लँगोट,
पट पीडकर मीडत मिलाये देत धूर में।।"[54]

वीर रस प्रदर्शन में जहाँ वाणी का ओज कृतव्य है वहाँ सौन्दर्य के वर्णन में कवि को माधुर्य गुण के व्यक्ति करण में भी पूर्ण रूपेण सफलता

51. बही, हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 1, पृ0-3.
52. वही, छन्द 2, पृष्ठ 3.
53. वही, छन्द 90, पृष्ठ 38-39.
54. वही, छन्द 97, पृष्ठ 41-42.

मिली है । यथा —

"एहैं पिय तिय पगन मैं, जावक रहे लगाय,
एकै मृगनैनीय की, वेणी गुहत बनाय ।।"[55]

× × ×

"तब लग नभ अरविंद सौं, उदित भयो छविछंद ।।
सुन्दर चंदन बिन्दु सो, सुधाकंद सो चंद ।।"[56]

× × ×

"नील कसीं भ्रमरीन के, कुमुदिनि किये श्रृंगार ,
चपल चंचुकर चंदरस, चाषहि चकोरी चार ।।"[56]

ओज गुण में कवि ने उसके अनुरूप शब्दावली का चयन किया है । भाषा स्वतः ओजमयी हो उठी है तो माधुर्य के गुण के अन्तर्गत कोमलकान्त और श्रुति मधुर शब्दावली का प्रयोग सुखद और भला सा लगता है ।प्रसाद गुण में सरलता और सहज बोध्य गम्यता स्पष्ट दृष्टि गोचर होती है । यथा —

"या विधि पुर कौतुक लखत, देत सबन तन पीठ ।
पहुँची बदन किशोर की, राज पौर पर दीठ ।।"[58]

× × ×

"डारदई अवसर निरख, मणि मुँदरी हनुमान ।
लई मगनमन जानकी, गगन अगिनकरा जान ।।"[59]

---

55. वही, छन्द 9, पृष्ठ 6-7.
56. वही, छन्द11, पृष्ठ 7.
57. वही, छन्द13, पृष्ठ 8.
58. वही, छन्द27, पृष्ठ 14-15.
59. वही, छन्द77, पृष्ठ 33.

"विहँसत अनमोले वचन, बोले राम उदार,
समाचार अरि नगर के, वर्णहु पवनकुमार ।।"[60]

ध्वन्यात्मकता और चित्रात्मकता सेभाषा में निखार आता है। कवि ने भी इसका आश्रय लिया है। कुछ शब्द चित्र देखिये—

"रथ रनकत पहरात ध्वज, बजत दुदुंभी धीर ।।
हय हींसत चिंघरत गज, करत कुलाहल वीर।।"[61]
लख प्रिया विपक्ष मुख रक्षपति, अक्षय कौ रूखपाय।।
हाँके सजित गंयद तब, धुन के धका बजाय ।।"[62]
कटकटाय रिपुकटक पर, परो डपट झट झूप ।।
आय गयो निशिचरन कौ, काल मनो कपिरूप।।"[63]

कवि भाषा के व्यापक रूप का पक्षपाती है इसलिए भावों के अनुरूप विभिन्न भाषाओं के शब्दों को प्रयुक्त करने में उसे किंचित भी हिचकिचाहट नहीं। संस्कृत के शब्दों के रूप तो हमें रावण द्वारा की गई स्तुति में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त यत्र-तत्र तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। यथा — सागर, नीर, तमाल, वारिद, प्रमोद, दिनेश, अरविन्द, यामिनी, श्रम, जल एवं विन्दु। [64]

तद्भव शब्दावली में - नयन, बीरी, लेजन, छिति, छपा, परयंक, अस्नान, दीपक, पुहुप, सकुता, रैनन आदि। शब्द उल्लेखनीय है।[65]

---

60. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 114, पृष्ठ 49-50.
61. वही ,, ,, छन्द 87, पृष्ठ 38.
62. वही, ,, ,, छन्द 88, पृष्ठ 38.
63. वही, ,, ,, छन्द 89, पृष्ठ 38.
64. xबाबरे, कालीकवि, प्रो० रामस्वरूप खरे के निबन्ध से उद्धृत.
65. वही ,, ,, ,,

विदेशज के अन्तर्गत कवि ने तस्तरीन, मसाला, आब, गुल, हौलिन, चिरागन, जरतारन, तमाग, मसक, गिलिन, मसोस, अतर, तवज, तथा खबर आदि शब्द द्रष्टव्य है ।[66] कहीं-कहीं बुन्देली के शब्द भी अपनी छटा-छटकाते हुए दृष्टिगोचर होते हैं यथा - दिरौंधो, उपरात, चिलक, दुआर, घांघरे, तरैनो, मुंदरी, जुगुनू, डारदई, सालन, चीन्ह आदि ऐसे ही शब्द है ।[67]

लोकोक्ति और मुहावरे के प्रयोग से भाषा में सौन्दर्य आ जाता है किन्तु इनका अभाव सा प्रतीत होता है पर एकाध स्थल पर इसकी अभिव्यक्ति बड़ी, सरल, मार्मिक और समुचित बन पड़ी है । यथा-"
"सैंया देख रैन की तरैया भर आई है ।"[68]

6.4 **भाव सौन्दर्य :-**

जब मनुष्य काव्य सृजन करता है तो उसके मानस में भावों की अथाह जल राशि उमड़ने लगती है । भावों का चारु चित्रण ही कला की सार्थकता को व्यक्त करता है । काव्य मर्मज्ञों ने अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति को कला माना है प्रत्येक मनुष्य के हृदय में यह भावना विद्यमान होती है कि वह हृदयस्थ भावों को अभिव्यक्त किए बिना नहीं रह सकता । वह किसी न किसी रूप में अपने मनोगत विचारों का मूर्तत रूप देने का प्रयत्न करता है, इस प्रकार भावों के सुन्दर चित्रण में कवि का रसिक मन निमग्न हो उठता है, उन्हें अतीत आनन्द की उपलब्धि होती है, इन्हें अनुभूत विषय का सजीव चित्र खींचकर वे पाठकों और श्रोता गणों के हृदय को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं । कवि की स्थिति चित्रकार के समान है । कुशल कवि शब्द चित्रण द्वारा भावों

---

66. काली कवि, प्रो0 रामस्वरूप खरे के निबन्ध से उद्धृत ।
67. वही, ... ।
68. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 111, पृष्ठ 48.

और विचारों की अभिव्यक्ति इस प्रकार करता है कि पाठक शब्दों के जाल में ही नहीं उलझा रह जाय । सहज और सरल रूप में भावों की अभिव्यंजना हृदय पर जो अमिट छाप छोड़ जाती है वह अलंकार के चमत्कार की चकाचौंध में नहीं ।

"वाक्यं रसात्मकं काव्य" के प्रणेता विश्वनाथ के अनुसार रस काव्य की आत्मा है । नागर जी भी इसी को अपना अभीष्ट मानते हैं, उन्होंने अपने इस खण्ड काव्य में श्रृंगार और वीर रस की सुन्दर अभिव्यंजना की है । इनके काव्य को परखने के लिए पाठक में सहृदयता और रसज्ञता होना परम आवश्यक है बिना रसज्ञ के काव्य का मर्म समझना अत्यन्त कठिन है कहा भी गया है कि —

"तत्वं किमपि काव्यानाम् जानाति विरलो भुवि ।
मार्मिकः को मरन्दानामन्तरेण मधुव्रतम् ।।"[69]

रस :-

प्रस्तुत कृति में प्रमुख रूप से श्रृंगार रस का वर्णन है, सहयोगी रस के रूप में वीर रस की भी व्यंजना अवलोकनीय है । यथा —

"पिच्छल पछेल पगछेल वन वल्लभ ने,
वल्लभ नदी को कियो एक ही उछल्ली को ।।"
गुच्छकर कुछन भुजान बल स्वच्छकर,
गुच्छकर शिर वै समच्छ पुच्छ बल्ली को ।।"2।।[71]

---

69. संस्कृत सुभाषित.

70. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 2, पृष्ठ 3-4.

× × × × × × × ×

फूटी परैं फुनगैं फणीश फणमंडल की,
टूटी परै नभ तैं सितारन की मालै है ।।
रथ रनकत फहरात ध्वज, बजत दुंदभी धीर,
हय हींसत चिग्घरत गज, करत कुलाहल वीर।।-71

× × × × × × ×

कटकटाय रिपु कटक पर, परो झपट झट भूप ।।
आय गयो निशिचरन को, काल मनो कपिरूप ।।-72

× × × × × × ×

"घूमकर चक्कर की निकर तरे तैं वीर,
भूमि पर चाहत पछारो कपि शूर मैं ।।
झूमकर झपक झपेटत भुजान बीच,
लूमकर लपक लपेटत लँगूर मैं ।।-73

× × × × × × ×

"पुच्छ पुर फेरत लथेरत पताकन कौं,
गेर कटसेलियाँ नवेलियाँ नगिन की ।।
काली कवि नांरिन की नगर गुहारैं परी,
जहर फुहारैं फुतकारै पन्नगिनकी ।।
वेग बढ़ लागी कोट कंचन कँगूरन सौं,
जागीं झोत जोरन करोर कनगिन कीं।।
फोर नभ मंडल आखंडल अरावै जाय,
दपटैं दराज लूह पलटै अगिन की ।।-74

---

71. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 86-87, पृष्ठ 37-38.
72. वही, ... छन्द 89 , पृष्ठ 38.
73. वही, ... छन्द 97, पृष्ठ 41-42.
74. वही, ... छन्द 108, पृष्ठ 46-47.

श्रृंगार रस :-

श्रृंगार रस को रस राज माना जाता है । विश्व की विभिन्न रचनाओं में इसी रस का सर्वाधिक चित्रण हुआ है । संयोग और वियोग दोनों के ही चित्रण में कवि को सफलता मिली है ।

संयोग श्रृंगार :-

"एकै पिय लाइली तिलाई तस्तरीन बीच,
लाई पानबीरी मज सिजिल मशाला मैं ।।
काली कवि सबज सुरंग सुख सेजन पै,
आब छिरकावतीं गुलाब गुलगाला मैं ।।
एकै सजंगज कल गावती क्वोरन मैं,
एकै रहीं हाला भर सुआर पियाला मैं ।।
एकै नवनाला गुहैं किंकिनी रसाला गुहैं,
एकैं फुलमाला गुहैं बाला चित्रशाला मैं ।।"8।।[75]

× × × × ×

"एकैं पिय तिय पगन मैं, जावक रहे लगाय,
एकैं मृगनैनीन की वेणी गुहत लगाय ।।"[76]

× × × × ×

"एकैं कुच कोरन पैं चारचंद छोरन तैं,
धन धान औरनते मोरन निगावती ।।
तनक उघारकै सुबन्द करलेती मुख,
चंद रस छोरन चकोरन चिंगावती ।।"[77]

× × × × × ×

"नील कर्णी भ्रमरीन के, कुमुदिनि किये श्रृंगार,
चपल चंचका चंदरस, चावहि चकोरी चार ।।"[78]

---

75. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 9, पृष्ठ 6.
76. .. .. छन्द 9, पृष्ठ 6-7.
77. .. .. छन्द10, पृष्ठ 7.
78. .. .. छन्द13, पृष्ठ 8.

× × × × ×

"खोलकर बदन गदूल गुल गोलन के,
कमल अमोलन के दलन दला करैं ।।
काली कवि चाक दिल चकवन चोरनके,
लखन चकोरन के अमृत झला करैं ।।
याम यामिनी मैं काम योगिन जगावैं देत,
बलि सौं वियोगिन को भोगिन भला करैं।।
छहर छरीली छूट छिति के छलापी आज,
किरणैकलाकर की कोरन कला करैं ।।"[79]

× × × × × ×

"आल बाल शशि ते चली, पाय सुधा जल मेल ।
गई भवन फिरिया लपर, छिछल चाँदनी बेल ।।"[80]

× × × × × ×

"गगन सरोवर को हँसत सरोज ऐसो,
ओजकर लसत मनोज रथ चाकसो ।।
काली कवि अमृत अनूप कल्पारी को फल,
सुरग तरंगिनी तटी को चक्रवाकसो ।।
कंदुक अमोल है चकोर चित्त नन्दन को,
दिपत बलंद रति मंदर चिराकसो ।।
रूप गुण सुंदरी पुरंदरी दिशा को यह,
उदित अमंद इन्दु सुंदर सुलाकसो ।।"[81]

× × × × × × ×

"सोहत परे कलंक के, शशि महँ श्यामल बिंदु ।।
शेष कुंडली पै मनो, सोवत परे गुविंद ।।"[82]

× × × × × ×

"तावकर अंबर अंक परयंक पर,
अंक भर भेटत मंयक निशि नारी को ।।"[83]

---

79. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 14, पृष्ठ 9.
80. ,, ,, छन्द 17, पृष्ठ 10.
81. ,, ,, छन्द 18, पृष्ठ 10-11.
82. ,, ,, छन्द 19, पृष्ठ 11.
83. छन्द 10, पृष्ठ 7.

× × × × × × ×

भाल महावर लीक लसै चिल लै, अधरानमैं अंजन छाँहै ।

त्यौं कवि काली लिये अँखियान के नींद अलान पला झपकौं है।।

सोहैं न हेरत सौहैं करै कहूँ किंकिणी लै बांधे अंत सितौ है ।

मान भरी लरान उनै रहीं कामिनी तान कमानसीं भौहैं ।।-84

विरोग श्रृंगार :-

"फिरत बाग देखत लखी, जनक सुता अतिदीन ।
परी भूमि तल विकल जनु, कमला कमल विहीन।।-85

× × × × × ×

भौंर भर भंजित अशोक तरू पुंज कुंज,
वंजुलकी मंजरी सुमंझु कमला परी ।।
काली कवि तोर तरू मस्त परोर जोर,
घोर घनमंडलते चूक चपला परी ।।
विनही आराम के आराम मैं दशानन के,
तामरस दाम छाम राम अबलापरी ।।
दौज द्विज राज को अकाश तै तु आज मानौं,
राहु भय भाज छूट छिति पै कलापरी ।।-86

× × × × × ×

मारकर नखन विदार शशि के हरनेहार,
विरहीनके हजारन वगारे हैं ।।
डारे हैं मारतंड किरन किनारे रहे छूट,
नभ तारे हैं कि बरत अंगारे है ।।-87

---

84. वही, छन्द 28, पृष्ठ 14.
85. वही, छन्द 56, पृष्ठ 25.
86. वही, छन्द 58, पृष्ठ 26.
87. वही, छन्द 76, पृष्ठ 32-33.

× × × × × ×

सीता के उपासन की बूझत कथा हौं तौ,

बूझौ कहौ केती हरतालिका सुनाऊँ मैं ।।

काली कवि लाऊँ बूढ़ द्वैज द्विजराई ।।

कला देह छुबराई आज सावरे दिखाऊँ मैं ।।

ताके अंग अंगन की रंगत बताइवे कों,

समय असंगत बसंत कहूँ पाऊँ मैं ।।

अधिक अधीरन की नैनन के नीरन की,

क्या मेघ बरसै तौ सुरत कराऊँ मैं ।।[88]

6.5.(1) शिल्प कौशल :-

जो काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि में सहायक हो वह अलंकार कहा जाता है । कविता कामिनी को अलंकृत करने के लिए जिन उपादानों का कवि प्रयोग करता है वे सब अलंकार की परिधि में परिगणित किए जाते हैं । निःसन्देह इनके द्वारा काव्य में सौन्दर्य और चमत्कार उदभाषित हो उठता है । यद्यपि अलंकारों के अनुचित प्रयोग से कभी-कभी काव्य आत्मा की समाप्ति तक हो जाती है फिर भी सम्यक् एवं समुचित अलंकार काव्य का अभिवर्धन ही करते हैं ।

नागर जी की प्रस्तुत कृति में विभिन्न अलंकारों का प्रयोग उनकी पाण्डित्य पूर्ण प्रतिभा का सुन्दर उदाहरण है । उनके प्रमुख प्रिय अलंकारों के कतिपय उदाहरण निम्न लिखित है :-

उपमा :-

(क) भूल भरकीसी सरकीसी केश पासन ते,

छिदवर कीसी नैन नोकन नुकाइकी ।।

---

88. वही, छन्द 124, पृष्ठ 54.

काली कवि रानिन के रपटी कपोलन पै,
खाई कुच गोलन पै चोट चट चाहकी ।।
चिध चिघ कीरति तीन गिलली तारालन मैं,
डूबत छबीली नाभि भगर भमाहकी ।।
आहकर उड़की कराह कै विभीषण के,
तिलक सिराह पै निगाह कपिना हकी ।।[89]

(ख) मालोपमा :-

गगन सरोवर को हँसत सरोज ऐसो,
ओजकर लसत मनोज रथ चाकसो ।।
काली कवि अमृत अनूप बल्लरी कोफल,
तुरग तरंगिनी तटी को चक्रवाकसो ।।
कंदुक अमोल है चकोर चित्त नंदन को,
दिपत बंलद रति मंदर चिराक सो ।।
रूप गुण सुंदरी पुरंधरी दिशा को यह,
उदित अमंद इन्दु सुंदर सुलाकसो ।।[90]

रूपक :-

आल बाल शशि ते चली, पाय सुधा जल मेल ।
गई भुवन फिरिया लपा छिछल चाँदनी बेल ।।[91]

यमक :-

राई हरत्वारैं जेन आई घर द्वारैं ते,
फिरैं परद्वारै परद्वारै लंकपुर की ।।[92]

---

89. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 50, पृष्ठ 22-23.
90. ,, ,, छन्द 18, पृष्ठ 10-11.
91. ,, ,, छन्द 17, पृष्ठ 20.
92. ,, ,, छन्द 110, पृष्ठ 47-48.

उत्प्रेक्षा :-

थकित शरीर तिरंग मैं, सुपति यामिनी इन्दु ।।
झलक रहे तारा मनहुँ, श्रम जल शीतल बिन्दु ।।[93]

अनुप्रास :-

लरम लफीले लफ लोलहेल यौदन की,
ललन लदाऊ लौद लदलतरीफिरे ।।[94]

× × × ×

चौक चाँदनी है चाक चंद्रक चुनी है चारु,
चन्द्रवदनी हैं चन्द्रिका हैं चन्द्रशाला है ।।[95]

सन्देह :-

जीतकर सकल समाज शशि सूरज को,
कैधौं राज पदपै विराजो अंधकार है ।।
बिज्जुल लतासे खुल उज्ज्वल रहे हैं,
दंत सज्जल पयोधर के कज्जल पहार है ।।[96]

श्लेष :-

बाली पर तारा गया पर तारा के गेह ।
परदा राखत है कहूँ, परदारा को नेह ।।[97]

---

93. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 21, पृष्ठ 12.
94. ,, ,, छन्द 56, पृष्ठ 25.
95. ,, ,, छन्द 115, पृष्ठ 51.
96. ,, ,, छन्द 101, पृष्ठ 43.
97. ,, ,, छन्द 106, पृष्ठ 46.

× × × × ×

पद्म की धुजा है कै भुजा हैं हनुमान की ।।[98]

परिसंख्या :-

सुमन सुगंध बिन पवन न देखौं जहाँ,
भवन न देखौ जहाँ बिन धनवागकौं ।।
काली कवि तालबिन मुरज न देखौं जहाँ,
उरज न देखौं जाहाँ बिन नवदागकौं ।।[99]

×× × × ×

सुभग शरीरन तैं सरल न और कछु,
कुटिल न और कछु भ्रुकुटी कमानतैं ।।
केलिरसकौंतुतै कदर न और कछु,
मधुर न और कछु अधर सुधानतैं ।।"[100]

उल्लेख :-

"करन अमंद रामचन्द अरविंद पद,
रज मकरंद को मलिंद अवधूत हैं ।।
कालीकवि वंदनीय राजत अमंद वृंद,
वंदा बलंद को बुलंद पुरुहूत है ।।
बल जल सिंधु बालिबंधु रणसिंधुर को,
धरणि धुरंधर को धन मजबूत है ।।
वीरन को वीर मीर अमर अमीरन को,
विपत निदीरन समीरन सपूत है ।।"[101]

---

98. हनुमत्पताका, कालीदत्त,नागर, छन्द 189,पृष्ठ 56-57.
99. ,, ,, छन्द 119,पृष्ठ 52.
100. ,, ,, छन्द 121,पृष्ठ 53.
101. ,, ,, छन्द 131,पृष्ठ 58.

× × × × ×

स्वर्गपुर जीना है, कुरीना राजपूत को,

भूषण नवीना भारती के, कंठ सूत को ।।

कालीदत्त काव्यरस रंगत रंगीना यात्र ।।

मीना पै नगीना यह कवि करतूत को ।।

मोदकर करणा सुधा है हरि भक्तन को,

बोधकर पंडित समूह पुरहूत को ।।

पुंज कविता को जाहि मंजु कविता को कुंज,

कल्प लता को जो पताको पौनपूत को ।।-102

अतिसयोक्ति :-

नयत शंभु शिरमणि गिरो, दिनमणि गयो हिराय ।

तमन ताहि खोजन चली, भूतभीर बहराय ।।-103

× × × × ×

वेग बढ़ लागी कोट कंचन कँगूरन सों,

जागीं जोत जोरन करोर कनगिन की ।।

फोर नभ मंडल आपटल अटापै जाय,

दपटैं दराज लूह लपैटे अगिन की ।।-104

6.5.(2) छन्द :-

काव्य में छन्द का विशेष महत्व है । जब से भाषा का प्रादुर्भाव हुआ तभी से प्रत्येक देश और समय में काव्य और छन्द का घनिष्ठतम सम्बन्ध रहा है इस सम्बन्ध में डा० नगेन्द्र के विचार अवलोकनीय है :-

---

102. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 1?2, पृष्ठ 59.

103. ,, ,, छन्द 10, पृष्ठ 6.

104. ,, ,, छन्द 108, पृष्ठ 46-47.

"साधारणतः हमारे रक्त की धारा एक विशेष संगति से बहती रहती है, यह संगति जो हृदय की धड़कन और स्वांस प्रस्वांस से नियमित आरोह अवरोह में पूर्त्त होती रहती है, स्वभावतः लययुक्त है क्योंकि नियमित आरोह अवरोह ही तो लय है । भावोच्छवास की अवस्था में रक्त की गति तीव्र हो जाती है । हृदय कम्पन तथा स्वांस के आरोह अवरोह में भी उसी के अनुसार अन्तर पड़ जाता है और इस प्रकार उस मूलगत समलय में विशिष्टता आ जाती है यह विशिष्टता इतनी सशक्त होती है कि इसका हम स्पष्ट अनुभव करते हैं, यही अपने आप शारीरिक क्रियाओं में जैसे हाथ पैर उछालना आदि में व्यक्त होती है। आरम्भ में नृत्य का जन्म इसी प्रकार हुआ और इसी प्रकार कुछदिनों के बाद उसी आन्तरिक लय की भाषा पर आरोप कर मनुष्य ने सहज रूप से छन्द का भी आविष्कार, कर लिया तभी वास्तविक कविता का जन्म हुआ और तभी छन्द का ।"[104]

छन्द का कविता से आन्तरिक सम्बन्ध स्थापित करते हुए महाकवि सुमित्रा नन्दन पंत भी कविता और छन्द केबीच अन्यतम सम्बन्ध मानते हैं । उनके अनुसार " कविता हमारे प्राणों का संगीत है, छन्द हृदय कम्पन । कविता का स्वभाव ही छन्द में लयमान होता है जिस प्रकार नदी के तट अपने बन्धन से धारागति को सुरक्षित रखते हैं जिनके बिना वह अपनी ही बन्धन हीनता में अपना प्रवाह खो बैठता है उसी प्रकार छन्द भी अपने नियंत्रण से राग को स्पंदन, कम्पन तथा वेग प्रदान कर निर्जीव शब्दों के रोड़ों में एक कोमल सजल कलरव भर उन्हें सजीव बना देते हैं । वाणि की अनियमित सांसे नियंत्रित हो जाती हैं, ताल युक्त हो जाती है उसके स्वर में प्राणायाम, रोओं में स्फूर्ति आ जाती, राग

---

105. रीतिकाल काव्य की भूमिका तथा देव और उनकीकविता, डॉ० नगेन्द्र पृष्ठ 234.

की असम्बद्ध झंकारे एक वृत्ति में बंध जाती, उनमें परिपूर्णता आ जाती हैं । छन्द वह शब्द चुम्बक के पार्श्व वर्त्तीय लोह चूर्णा की तरह अपने चारों ओर एक आकर्षित क्षेत्र तैयार कर लेते हैं उनमें एक प्रकार का सांमजस्य एक रूप, एक विन्यास आ जाता, उनमें राग की विद्युत धारा बहने लगती, उनके स्पर्श में प्रभाव तथा शक्ति पैदा हो जाती है ।"106

/

डॉ0 मनोहर लाल गौर के मतानुसार — "भारतीय छन्द विधान स्वर और व्यंजन की वाणी विभाग पर आश्रित है । इनमें व्यंजना की अपेक्षा स्वर कोमल होता है इसलिए भाषा विकास में कठोर व्यंजन कोमल में और कोमल व्यंजन स्वर में परिवर्तित होता है जो भाषाएँ संश्लेषणात्मक होती है उनमें समास बहुल्यता के कारण वर्णों की एक श्रृंखला सी बन जाती है ऐसी भाषा के लिए वार्णिक छन्द अनुकूल पड़ते हैं इसीलिए संस्कृत में वर्णिक छन्दों की बहुल्यता है । यद्यपि श्रृंगार आदि कोमल भावों की कविताएँ वहाँ भी आर्या मात्रिक छन्दों में ही थी जाती थी । लोक भाषाओं का स्वरूप व्याकरण आदि के बन्धन से मुक्त होकर अपने सहज रूप से बहता है वह प्रायः विश्लेषणात्मक होता है । अतः मात्रिक छन्दों का ही प्रयोग उनमें प्रायः देखा जाता है। प्राकृतिक अपभ्रंश आदि भाषाओं में उस समय भी मात्रिक छन्दों का प्रयोग अधिक हुआ था जबकि संस्कृत वर्णित छन्दों का व्यवहार प्रचुरता से होता था । हाल की शप्त सती मात्रिक छन्दों में लिखी गयी है जो लोक विकीर्ण कविताओं का संग्रह तथा कवि की रचना दोनों का सम्मिलित बताया जाता है । हिन्दी की प्रकृति विश्लेषणात्मक है । अतः मात्रिक छन्द उसकी प्रकृति के अनुकूल पड़ते हैं । वीरगाथा काल में कुछ वर्णित छन्दों का प्रयोग हुआ है पर प्रधानता दोहा, छप्पय आदि मात्रिक छन्दों की ही रही ।

---

106. पल्लव भूमिका, सुमित्रानन्दन पन्त.

भक्ति काल के संत भक्तों की सरस्वती तो गेय पदों के रूप में ही मुखरित हुई जो मात्रिक छन्दों का कोमलतम रूप कहा जा सकता है। भक्ति काल के उपरान्त रीतिकाल में गये पदों की परम्परा केवल भक्त सन्तों में ही सुरक्षित रही है पर इन भक्तों की संख्या अत्यल्प है। आनन्दघन रीतिकाल के ऐसे ही सन्त हैं उनके पद आकृति में तो गई स्वभाव में भी वस्तुतः गये हैं। ऐसे ऐसे प्र गेय पदकार सन्तों का वृन्दावन में जमघट था। सन्तों के अतिरिक्त कवि लोगों ने भी वर्णिक छन्द, सवैओं, और घनाक्षरी का इतना प्रचुर प्रयोग किया कि वही एक मात्र छन्द इस काल का बन गया।"[107]

आचार्य भरत ने अपने नाट्य शास्त्र में कात्यायन के मत का उल्लेख किया है कि वीरों के युद्ध कार्यों के वर्णन में स्रग्धरा तथा नायिका वर्णन में बसन्त तिलका छन्द उपयुक्त होता है।[108]

आचार्य मम्मट ने अपने काव्य प्रकाश में करुण-रस में मन्द कान्ता और पुष्पिताग्री शृंगार में पृथ्वी वीर में स्रग्धरा, शिखरणी शार्दूल विक्रीड़ित और हास्य में दीपक का प्रयोग बतलाया है।[109]

सवैया तथा घनाक्षरी की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों के विभिन्न मत हैं। डा० नगेन्द्र के मतानुसार :-

"सवैया शब्द सपाद का अपभ्रंश रूप है, इस छन्द के अन्तिम छन्द को सबसे पूर्व तथा अन्त में पढ़ा जाता था। चार पंक्तियाँ पाँच बार पढ़ी जाती थी, वह पाठ में सवाया होने से छन्द सवैया कहलाया।

---

107. घनानंद और स्वच्छन्द काव्य धारा, डॉ० मनोहर गौड़, पृ०-177-178.
108. नाट्य शास्त्र, आचार्य मम्मट.
109. नाट्य शास्त्र, आचार्य भरत, 14/12/3016.

संस्कृत के किसी छन्द से भी इसका मेल नहीं है । अतः यह जनपद साहित्य का ही छन्द बाद के कवियों ने अपनाया होगा ऐसा अनुमान किया जाता है ।"[110]

डॉ0 मनोहर लाल गौड़ के मतानुसार —"तेइस वर्णों वाले संस्कृत के उपजाति छन्द के चौदह भेदों में से किसी एक का विकृत रूप सवैया बन गया है । ध्वनियों के उच्चारण से कठिन लय का उच्चारण होता है । अतः उसके अधिक विकृत होने की सम्भावना रहती है । सवैया 28 अक्षरों से लेकर 36 तक का होता है । उपजाति 32 अक्षरों का छन्द है । अक्षरों का लघु गुरु भाव सवैया में भी पर्याप्त परिवर्तन ग्रहण करता है । वैदिक छन्दों का भी लौकिक संस्कृत छन्दों तक आते-आते बड़ा परिवर्तन हो गया है । इसी प्रकार उपजाति का परिवर्तित रूप सवैया है जो सवाया बोलने से सवैया कहलाया, यह सम्भव लगता है।"[111]

सवैया व्यवस्थित वर्ण वृत है । श्री जगन्नाथ प्रसाद के मतानुसार छन्द प्रभाकर में इसके 12 भेद माने गए हैं । इसके प्रमुख भेद तीन है — भगणाश्रित, सगणाश्रित तथा जगणाश्रित छः हैं, जगणाश्रित तीन और सगणाश्रित तीन जिनका पारिभाषित स्वरूप निम्नलिखित है :-

(1) भगणाश्रित :-

1. मदिरा	भगण 7+ S
2. मोद	भगण 5+मगण+ सगण+ S
3. मत्तगंयद	भगण 7+ S
4. चकोर	भगण 7+ S1

---

110. रीतिकाल की भूमिका तथा देन और उसकी कविता, पृष्ठ 236.
111. घनानन्द और स्वच्छन्द काव्यधारा, डॉ0 मनोहर गौड़, पृष्ठ180.

5. अरसात	भगण 7+रगण
6. किरीट	भगण 8

(2) जगणाश्रित :-

1. सुखी	जगण 7+I S
2. मुक्तहारा	जगण 8
3. वाम	जगण 7+यगण

(3) सगणाश्रित :-

1. दुर्मिल	सगण 8
2. सुन्दरी	सगण 8+ S
3. अरविंद	सगण 8+I

डा0 नगेन्द्र के विचार हैं कि "इस छन्द की गति और लय एक ही गण अर्थात् ध्वनि योजना की अनेक आवृत्तियों पर आश्रित रहते हैं इसलिए उसमें एक निश्चित स्वर विधान होता है । यह लय राग लय वृत्तियों की श्रृंखला सी बनती है जिसमें एक निश्चित क्रम से झकोरे सी उत्पन्न होती चलती है और अन्त में तुक पर जाकर एक ओर झपेट पड़जाती है । नियमित रूप से राग का यह स्वर पात्र सवैया में एक अनूठी संगति पैदा करता है ।[113]

घनाक्षरी :-

कुछ लोग इसे हिन्दी का छन्द नहीं मानते । कहीं और से आया हुआ विजातीय छन्द स्वीकार करने में सुमित्रा नन्दन पंत का नाम

113. रीतिकाल की भूमिका तथा देव और उनकी कविता, डॉ0नगेन्द्र पृ0-239.

प्रमुख है उनके अनुसार — "कवित्त छन्द मुझे ऐसा जान पड़ता है कि यह हिन्दी का औरस जात नहीं, पोष्य पुत्र है । न जाने यह हिन्दी में कैसे और कहाँ से आ गया है । अक्षर मात्रिक छन्द बंगला में मिलते हैं हिन्दी के उच्चारण की रक्षा नहीं कर सकते । कविता को हम संलापोचित छन्द कह सकते हैं ।[114]

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के मतानुसार —

"यदि हिन्दी का कोई जातीय छन्द चुना जाय तो वही होगा, कारण यह छन्द चिरकाल से इस जाति के कण्ठ का हार रहा है । दूसरे इस छन्द में विशेष गुण यह भी है कि चौताल आदि बड़ी तालों में तथा ठुमरी की तीन तालों में सफलता पूर्वक गा सकते हैं और नाटक आदि के समय इसे काफी प्रवाह के साथ पढ़ भी सकते हैं । इस छन्द में "आर्ट आफ रीडिंग" का आनन्द मिलता है ।" [115]

मधुर भावों की अभिव्यक्ति के लिए यह छन्द उतना उपयुक्त नहीं कहा जा सकता जितना कि ओज पूर्ण रचनाओं के लिए यह समीचीन माना जा सकता है । यद्यपि भिन्न-भिन्न वादियों ने श्रृंगार और वीर इन दोनों रसों केलिए सवैया और कवित्तों का प्रयोग किया है फिर भी श्रृंगार के लिए सवैया और वीर रस के लिए कवित्त ही उपयुक्त सा लगता है ।

प्रस्तुत कृति में मात्रिक छन्द के नाम पर केवल दोहा नामक छन्द प्रयोग किया गया है जिसमें 24 मात्राएँ होती है इसमें चार चरण होते हैं जिनमें 13-11 तथा 13-11 का क्रम होता है । इसके पहिले और तीसरे चरणों में 13-13 और दूसरे तथा चौथे चरण में 11-11 होती

---

114. पल्लव की भूमिका, सुमित्रानन्दन पन्त, पृष्ठ - 26.

115. परिमल की भूमिका, सूर्यकान्त निराला.

﴾3﴿ जे मारे कुब्जीन के ते म्हारे वश नाहिं ।
ऽ ऽऽ ।। ऽ। ऽ ऽ ऽऽ ।। ऽ।।

हचकारे कारे हिरन क्यों पुचकारे नाहिं ।।
।। ऽ ऽ ऽऽ ।।। ऽ ।। ऽऽ ऽ।

सवैया :-

वर्णित छन्दों में सवैया का सफल प्रयोग कवि ने इस कृति में किया है । इसमें कुल चार सवैया प्रयुक्त लिए गए हैं जो छन्द विधान के नियमानुसार अपने में पूर्ण हैं । पुष्टि के लिए कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य है :-

﴾1﴿ भाल महावर लीक लसैं विलसैं अधरान में अंजन लीहैं ।
ऽ। । ऽ।। ऽ। । ऽ ।। ऽ ।। ऽ । । ऽ। ऽ ऽ

त्यों कवि काली किए अँखियान के नींद झलान पला झपकी है ।
ऽ ।। ऽ। । ऽ।। ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ ।। ऽ ऽ

मान भरी गजरान उनै रहीं कामिनी तान कानसी भौं हैं ।
ऽ। । ऽ।। ऽ। । ।। ऽ।। ऽ ऽ। । ऽ।। ऽ ऽ

﴾2﴿ रावण की हहरान सुने भहरान लगी पुर की क्षिति छातैं ।
ऽ।। ऽ ।। ऽ। । ऽ।। ऽ। । ऽ।। ऽ ।। ऽ ऽऽ

काली सुरी असुरी नहूँ की भई एक ही नैन दशावर सातैं ।
ऽ। । ऽ।। ऽ । ऽ ।। ।। । ऽ। । ऽ।। ऽऽ

सांझ सरोज से रानिन के मुरझाय गए दुबरा दुख रातैं ।
ऽ। । ऽ। । ऽ।। ऽ।। ऽ। । ऽ।। ऽ।। ऽऽ

आँसुन की मनौं अखमरै झर्रई अब अंजनी नाम के नातैं ।।
ऽ।। ऽ ।। । ऽ ऽ ।। । ऽ ऽ। ऽ। । ऽऽ

आलोक —

प्रथम सवैया की प्रथम पंक्ति में मैं, द्वितीय में ली, के, तृतीय पंक्ति में है, हूँ तथा चतुर्थ पंक्ति में ही, नी तथा सी दीर्घ होते हुए भी ह्रस्व उच्चरित होंगे ।

द्वितीय सवैया की द्वितीय पंक्ति में ली, ई, ही, तृतीय पंक्ति में से तथा चतुर्थ पंक्ति में नौ, ली तथा के दीर्घ होते हुए भी ह्रस्व उच्चरित होंगे ।

कवित्त (घनाक्षरी) :-

यह वर्णित छन्द है, इसे मनहर छन्द भी कहते हैं । इसमें 31-31 वर्णों के चार चरण होते हैं चरण के अन्त में एक गुरु (ऽ) अवश्य होता है । 16 और 15 पर यति होती है । प्रस्तुत कृति में 53 कवित्त हैं जो छन्द विधान की दृष्टि से अपने में पूर्ण हैं । पुष्टि के लिए दो कवित्त प्रस्तुत है :-

(1) भमर पिडारत से नचत तुरंग जहँ,
मारग मतंग मद जल्न छिकौ भयो ।।
काली कपि नगर पताका पटछाहनतो ।
दरशि दिनेश कौ न तन तनिकौ भयो ।।
डारत झरोखन ते अतर फुहारवारि ।
परत कपिदं पर पवन फिकौ भयो ।।
वल्लरी न रोकत न झोकत पलक नेक,
नागरीन के मुख विलोकत विकौ भयो ।।

§2§ स्वर्गपुर जीना है कुरीना राज संपत को ।
भूषण नवीना भारती के कंठ सुत को ।।
काली कवि काव्य रस रंगत रगीला वाक् ।
भीना पै नगीनायह, कवि करतूत को ।।
मोदका कारण सुधा है हरि भक्तन को,
पुंज कविता को जाहि, मंजु कविता को कुंज ।।
कल्प लता को जो, पताको पौन पूत को ।।

उपर्युक्त दोनों उद्धरणों में 8+8=16 तथा 8+7=15 वर्णों का विधान है । समूचे कवित्त में 31 वर्ण है । इस प्रकार यह मनहर कवित्त हुआ ।

प्रस्तुत कृति में ब्रजभाषा का बाहुल्य है साथ में अवधी, बुन्देली, फारसी और अरबी की ध्वनियाँ प्रयुक्त की गयी हैं । रावण द्वारा की गयी स्तुति में संस्कृत भाषा का प्रयोग भी किया गया है । यत्र तत्र तत्सम, तद्भव, देशज एवं विदेशज शब्दावली का खुलकर प्रयोग किया गया है । प्रसाद, माधुर्य और ओज गुण से सम्पन्न भाषा लिखने में नागर जी सिद्धहस्त है । शब्द शक्तियों का प्रयोग भी प्रशंसनीय है । सर्वत्र भावानुकूल भाषा के प्रयोग से काव्य में विशेष सौन्दर्य आ गया है । चित्रात्मकता एवं भाषा का प्रवाहमयी स्वरूप आकर्षित करने वाला है।

6.6 तुलना :-

संस्कृत साहित्य में हनुमन्नाटक को प्रेरणा स्त्रोत के रूप में लिया जा सकता है किन्तु हनुमत्पताका अलग शैली में लिखा हुआ हिन्दी का

एक पृथक खण्ड काव्य है जिसमें अनेक स्थलों पर कवि ने अपनी मौलिक उद्भावनाओं को जन्म दिया है । वैसे तो हमारे यहाँ प्रवृत्ति चली आती है कि जो भी कोई नवीन कृति साहित्य संसार के समक्ष आती है, उसे पूर्वाग्रहों के कारण यह कह दिया जाता है कि यह कृति तो अमुक का भावानुवाद है । सूरसागर को तो बहुत से विद्वान अब भी भागवत का अनुवादात्मक रूप मानते हैं पर यह सब बातें तभी तक मानी जा सकती है जब तक कि मूल कृति का किसी ने सम्यक् अवलोकन नहीं किया हो । सूक्ष्म पर्यालोचन करने पर कृति की मौलिकता में किसी प्रकार संशय नहीं रह जाता । इस प्रकार किसी भी कृति का तुलनात्मक अध्ययन तो किया जा सकता है जिससे उसके साहित्यिक स्वरूप का निखार हो सके ।

हिन्दी में एक मात्र "जय हनुमान" ही एक ऐसा खण्ड काव्य है जिसकी तुलना हनुमत्पताका से की सकती है । यह खण्ड काव्य महाकवि श्याम नारायण पाण्डेय द्वारा रचित है । इसमें सात सर्ग है ।

हनुमान की पूँछ का तुलनात्मक विश्लेषण इस प्रकार है :-

<u>हनुमत्पताका :-</u>

सागर को पंक है न अंक है कुरंगहू को,
नाहिनै कलंक बंकहूकी मलिनाई है ।।
कालीकवि जाहिर कपिंद इंदु आनन पर,
तेरी पुच्छ जारनकी छारनकी छाई हैं ।।[116]

<u>जय हनुमान :-</u>

नील गगन में इन्द्र ध्वजा सी लम्बी पूँछ फहरती थी,
अगल बगल से हवा निकलकर बादल सदृश गरजती थी ।

---

116. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 111, पृष्ठ 48.

छाया जल पर वायु वेग पर धावित नौका सी चलती,
जिधर-जिधर छाया चलती थी उधर-उधर जल चल पड़ती।।[117]

श्रृंगारिक वर्णन में दोनों ही कवियों का मन रमा है "यथा —

हनुमत्पताका :-

"एकैं पिय तिय पगन में, पावक रहे लगाय ।
एकैं मृगनैनीन की , वेणी गुहत बनाय ।।"[118]

जय हनुमान :-

चन्दन भाल समलंकृत कोई रमणी छविरत था,
कोई हँसता गाता तो कोई संगीत निरत था ।।[119]

सीता की विरह दशा का वर्णन कैसा मार्मिक और हृदय स्पर्शी वन पड़ा है । यह निम्न लिखित उद्धरणों से स्पष्ट है :-

हनुमत्पताका :-

{क} फिरत बाग देखत लखी, जनक सुता अति दीन ।
परीभूमि तल विकल जनु, कमला कमल विहीन ।।[120]

---

117. जय हनुमान, श्यामनारायण पाण्डेय, प्रथम सर्ग, पृष्ठ 13.
118. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 9, पृष्ठ 6-7.
119. जय हनुमान, श्यामनारायण पाण्डेय, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ 25.
120. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 57, पृष्ठ 25.

§ख§ दौज द्विजराजकी अकाश ते तू आज मानों,
राहु भय भाज छूट क्षिति पै कलापरी ।।[121]

जय हनुमान :-

§क§ कपि ने सीता को देखा जब कमल हीन वाणी सी ।
कृशता उच्छवसिता दीना तमधिरे प्राप्त की श्री सी।।

§ख§ कपि ने सीता को देखा श्वानों के बीच मृगी सी ।
विधु क्षीण कला सी मलिना परितप्ता दीन दृगी सी।।[122]

सीता हरण के अवसर के पृथक पृथक दो चित्र देखिये, उनमें कितना साम्य है :-

हनुमत्पताका :-

सूने हरलायो अधम, त्यों तू रघुबरबाल ।
श्वान जान आमिषहरी, ज्यों प्रसून की माल ।।[123]

जय हनुमान :-

ज्यों सूनी मख शाला से कुत्ता हवि ले भगता है ।
त्यों मुझे चुराया अघ से क्या तुझे न डर लगता है ।।[124]

सीता द्वारा पूँछे जाने पर हनुमान रामदूत होने का विश्वास दिलाते हैं :-

121. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 58, पृष्ठ 26.
122. जय हनुमान, श्याम नारायण पाण्डेय, द्वितीय सर्ग, पृष्ठ 28-29.
123. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 104, पृष्ठ 45.
124. जय हनुमान श्याम नारायण पाण्डेय , छन्द 80, पृष्ठ 34-35.

हनुमत्पताका :-

> कौ हो तुम? हौं तौ दूत पीतम तिहारे कौ ।
> देख लघु रूप तब संशय निदान भो ।।[125]

जय हनुमान :-

> डरें ने मैं कोई राक्षस हूँ, मन में तनिक न त्रास करें ।
> रामदूत हनुमान नाम है, मुझ पर कुछ विश्वास करें।।[126]

सीता ने मुद्रिका प्राप्त करने के उपरान्त अपनी चूड़ामणि उतार कर भगवान राम के चरणों में निवेदन करने को कहा :—

हनुमत्पताका :-

> आयो पास जानकी के पायो चारु चूड़ामणि ।
> धायो वेग राम को दिखायो सुखमूल है ।।[127]

जय हनुमान :-

> जगदम्बा ने कहा वत्स, यह ,
> चूड़ामणि लो, जाओ तुम ।।
> मुझे अबला की अश्रु कहानी ,
> प्रभु को तुरन्त सुनाओ तुम ।।[128]

रावण द्वारा हनुमान की पूँछ में अग्नि लगाने के अवसर पर कही गयी इन उक्तियों में कितनी समानता है । देखिये :-

---

125. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 80, पृष्ठ 34-35.
126. जय हनुमान, श्याम नारायण पाण्डेय, तृतीय सर्ग, पृष्ठ 45.
127. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 113, पृष्ठ 49.
128. जय हनुमान, श्याम नारायण पाण्डेय, तृतीय [illegible] पृष्ठ 51.

हनुमत्पताका :-

धरहु वेग धावहु सुभट, धावहु सकहि न जाय ।
मुगतावक की पूँछ में, पावक देहु लगाय ।।[129]

जय हनुमान :-

तभी गरज बोला दशकन्ध,
क्यों-क्या हुआ हुई क्यों देर?
अभी लगा दो दुम में आग,
और इसे लो लट से घेर ।।[130]

महान पराक्रमी पवन पुत्र हनुमान विषयक हिन्दी साहित्यिक में खण्ड काव्यों के अन्तर्गत जो सामग्री अभी तक उपलब्ध हुई है उसमें हनुमत्पताका का स्थान निःसन्देह रूप से उच्च कोटि का है । वीर और श्रृंगार रस से मिश्रित यह कृति निश्चित रूप से हिन्दी साहित्य के भाण्डार को भरने में सफल होगी । इस नाते काली कवि का नाम सदैव अमर रहेगा।

हिन्दी के काव्याकाश में हनुमत्पताका पताका के सदृश्य सदैव लहरती रहेगी युग युग पर्यन्त इसकी कीर्ति कौमुदी दिक्‌दिगंत में मुखरित होती रहेगी, ऐसा मेरा अपना विश्वास है ।

----------0----------

---

129. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द 107, पृष्ठ 46.

130. जय हनुमान, श्याम नारायण पाण्डेय, पंचम सर्ग, पृष्ठ 78.

7.1 रीति काव्य के अन्तर्गत भक्ति काल के अलौकिक आलम्बन को लौकिक धरातल पर उतार कर उसके रूप-सौन्दर्य एवं भाव व्यापार का वर्णन किया गया है । राधा और कृष्ण रीतिकाव्य में सामान्य नायक और नायिका के रूप में चित्रित किए गए और इनके माध्यम से आलम्बन और आश्रयगत विविध चेष्टाओं, मनोभावों और अनुभूतियों की अभिव्यंजना हुई । रीति सम्बन्धी प्रवृत्ति का यहाँ तक प्रभाव पड़ा कि कृष्ण भक्त कवियों की रचनाओं में भी रीतिकाव्य की प्रवृत्तियों का समावेश दिखलायी देता है । अष्टयाम, दिनचर्या, नख-शिख सौन्दर्य, संयोग - वियोग की स्थिति का वर्णन, मान, ऋतु सुलभ उद्दीपन तथा अलंकारिता इस प्रवाह के काव्यंक में प्रचुर मात्रा में मिलती है ।

जहाँ तक नख-शिख परम्परा का प्रश्न है सम्भवतः जब से काव्य का प्रादुर्भाव हुआ यह प्रवृत्ति भी उद्भूत हुई । वीरगाथा काल से लेकर अद्यावधि जब हम इस परम्परा पर दृष्टिपात करते हैं तो प्रत्येक युग में कोई न कोईग्रन्थ उपलब्ध हो ही जाता है जिसमें इस प्रकार की प्रवृत्ति को प्रधानता दी गई है । पृथ्वीराज रासो से लेकर आधुनिक युग के स्फुट काव्यों में नख शिख वर्णन उपलब्ध है ।

संस्कृत में नैषधीय चरित[1] का नख शिख वर्णन उल्लेखनीय ग्रन्थ है । बाण भट्ट की कादम्बरी[2] एवं महाकवि कालिदास के कुमार सम्भव

1. नैषध चरित.
2. कादम्बरी, बाणभट्ट.
3. कुमार संभव, कालिदास.

में भी इस परम्परा का परिपालन भली प्रकार किया गया है । आदि काल से चली आयी नख शिख की क्षीण धारा का वेगवान रूप रीति काल काल में ही उपलब्ध होता है । वैसे तो स्पष्ट रूप से विद्यापति[4] जायसी[5] आदि के ग्रन्थों में भी इसका सम्यक् निर्वाह किया गया है। रीति काव्य में तो यह प्रवृति प्रचुरता के साथ परिलक्षित होती है । श्रृंगारिकता के स्थूल स्वरूप को प्रेरणा देने के लिए उस युग का वातावरण भी था, इसके भीतर नख-शिख सौन्दर्य चित्रण, षट ऋतु वर्णन, हाव-विलास मण्डन आदि का वर्णन एवं विवरण मिलता है । श्रृंगार वर्णन के प्रसंग में काम शास्त्र का भी इस युग के ग्रन्थों में बड़ा व्यापक प्रभाव है । रीतिशास्त्र की अनेक बातों का इस काव्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में आधार या संकेत, इसे सर्व साधारण एवं किशोर बुद्धि के व्यक्तियों के लिए अनुपयुक्त बना देता है । नख-शिख सौन्दर्य वर्णन में अनेक सुन्दर पंक्तियाँ मिलती हैं । रूप-चित्रण इस युग के कवि की सूक्ष्म रूपानुभूति और सौन्दर्य-कल्पना को स्पष्ट करने वाली है । जैसा कि कतिपय उदाहरणों में द्रष्टव्य है :-

§1§ मुख शशि निरख चकोर अरु, तन पानिप लखि मीन ।
पद पंकज देखत भ्रमर, होत नयन रसलीन ।।

§2§ जनु तिय हिय ते राग बढ़, अधरन रंग सरसाई ।
विद्रुम बिम्ब बंधूक की, आभहिं रही बढ़ाई ।।

§3§ अरुण वरुण बरनि न परै, अमल अधर दल माँझ ।
कै धौं फूली दुपहरी, कै धौं फूली साँझ ।।[6]

---

4. विद्यापति पदावली, विद्यापति.

5. पद्मावत, जायसी.

6. हिन्दी साहित्य, द्वितीय खण्ड, सम्पा० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा एवं डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा, प्र०सं० संवत् 2015, पृष्ठ 398.

रीतिकाव्य की दूसरी प्रवृत्ति अलंकारिता मानी जा सकती है जिसमें उक्ति चमत्कार के द्वारा पाठक और श्रोता के मन को आकृष्ट कर लेना ही इस युग के कवियों का लक्ष्य तथा इनकी सफलता का मापदण्ड था । अलंकारिता का ही दूसरा रूप भाषा का श्रृंगार है । इसे रीति काव्य की अन्य प्रवृत्ति के रूप में स्वीकार कर सकते है । इस धारा का कवि भाषा के प्रयोग में अत्यन्त जागरूक है । वर्ण-मैत्री, अनुप्रासत्व, ध्वन्यात्मकता, शब्द गति, शब्द-शोधन, अनेकार्थता, व्यंग्य, आदि की विशेषता इस काव्य में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है । इस धारा का अधिकांश काव्य ब्रज भाषा में ही प्रणीत हुआ, फल स्वरूप ब्रज भाषा में एक विशेष प्रकार का निखार, प्रांजलता एवं माधुर्य का समावेश हो गया है । ब्रज भाषा के इस प्रकार के विकास का ही परिणाम था कि अनेक मुसलमान कवियों ने भी ब्रजभाषा में रचना की । बंगाल के कुछ वैष्णव कवियों ने भी इसका प्रयोग किया । आधुनिक काल में भी जब आवश्यकता वश खड़ी बोली का कविता में प्रयोग का प्रश्न उठा तब काफी दिनों तक ब्रज भाषा के प्रयोग के पक्ष में ही लोगों का मत बना रहा । अतएव रीतिकाल के कवियों में यदि ब्रजभाषा के कुछ प्रयोगों का चमत्कार मिलता है तो आश्चर्य क्या? निःसन्देह इन कवियों ने बड़ी तन्मयता से शब्द साधना की थी । कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य है :-

"गगन अगन घनाघन ते सघन तम सेनापति ने कहूँ न नैन भटकत है ।
दीप की दमक जीगनान की झमक छाँड़ि चपला चमक और सौना अटकत है।।"
रवि गयो दवि मानोशशि सोई धसि गयो तारे तोर डारे ते कहूँन फटकत है।
मानो महा तिमिर ते भूल परी बाट ताते रवि शशि तारे कहूँ भूले भटकतहैं।।[7]

"श्रम जल कन झलकन लगे अलकनि कलित कपोल ।
पलकनि रस झलकन लगे ललकन लोचन लोल ।।

---

7. ऋतु वर्णन, सेनापति, पृष्ठ....

कृतित्व

(प्रकाशित काव्य कृतियाँ)

7.1 छवि रत्नम : मध्य युग में नख शिख वर्णन परम्परा और उसका आधुनिक काव्य पर प्रभाव.

7.2 वर्ण्य वस्तु.

7.3 अनुभूति पक्ष.

7.4 अभिव्यक्ति पक्ष.

7.5 मूल्यांकन.

लहि लहाति तन तरूणयी लचि लगि लौं लफि जाय ।
लगै लाँक लोयन भरी लोयन लेति लगाय ।।
रस शृंगार मंज्जन किए कंज्जन भंजन दैन ।
अंज्जन रंज्जन हू बिना खंजन गंजन नैन ।।[8]

इस धारा के कवि ने जीवन के लिए एक अदम्य वासना जाग्रत कर दी है । सौन्दर्यानुभूति और सुरूचि की एक सुकुमार कसौटी प्रदान की है । रूप विवेचन का विवेक और भावों की परख की दृष्टि हमें इस काव्य से प्राप्त होती है । यह काव्य रमणीय है जो इसे निन्दनीय और उपेक्षणीय समझते हैं वे यौवन के भावों और बसन्त के विकास को भी गर्हित करने की चेष्टा करते हैं । इस काव्य की प्रवृतियाँ विश्व के काव्यों में भी सर्वत्र प्रचुर मात्रा में मिलती है और हिन्दी साहित्य के भी प्राचीन और अर्वाचिन दोनों ही काव्यों में इन प्रवृत्तियों की सत्ता कम या अधिक मात्रा में खोजी जा सकती है । केवल एक चेतावनी इस काव्य के सम्बन्ध में दी जा सकती है और वह यह कि इसे चुने हुए रूप में पढ़ना अधिक श्रेयस्कर है ।

भक्ति काल में भी रीति परम्परा पर लिखने वाले कुछ महत्त्व-पूर्ण कवि हुये हैं जैसे कृपाराम, ब्रह्म, बरबल, गंग, बलभद्र मिश्र, `केशव रहीम, मुबारिक, तोष आदि जिनकी कृतियों में प्रमुख ध्यान काव्य रचना है यदि और कुछ उद्देश्य है तो गौण । कृपाराम की हित तरंगिणी तो रीति शास्त्र की पहली रचना है । रहीम का बरवै नायिका भेद रीति काल का एक और सुन्दर ग्रन्थ है, इसमें नायिका भेद के अतिरिक्त प्रेम और सौन्दर्य के मनोरम चित्र है यथा :-

"लागेउ आई न बेलियहि मनसिज बान ।
उकसन लाग उरोज वा, दृग तिर छान ।।

---

8. बिहारी सतसई बिहारी, पृष्ठ......

बन घन फूलहिं टेसुवा, बागन बेलि ।
चले विदेश पियरवा, फगुवा खेलि ।।
उमड़ि उमड़ि घन घुमड़े, दिसि विदिसि सान।
सावन दिन मन भावन, करत पयान ।।

बलभद्र मिश्र जो आचार्य केशव के बड़े भाई थे, का ग्रन्थ नख-शिख अत्यन्त उल्लेखनीय है । इसके अतिरिक्त रस विलास भी इसी परम्परा का एक और उल्लेखनीय ग्रन्थ माना जा सकता है । आचार्य केशव के "रसिक प्रिया" और "कविप्रिया" भी इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है । सैयद मुबारिक अली की "अलक शतक" और"तिलक शतक" इस परम्परा के गौरव-ग्रन्थ हैं । तोष कवि का सुधानिधि ग्रन्थ इस परम्परा की एक अन्य उल्लेखनीय कृति है । सेनापति का "कवित्त रत्नाकर", बिहारी की बिहारी-सतसई, मतिराम की "मतिराम सतसई", देव का भाव विलास" घनानन्द का "सुजान सागर", रसलीन का "अंग दर्पण, बेनी प्रवीण का "श्रृंगार-भूषण" तथा "नव तरंग" पद्माकर का "जगत विनोद", ग्वाल का "रस रंग" तथा "रसकानन्द" आदि इस धारा की उत्कृष्ट कृतियाँ मानी जा सकती है ।

7.2 वर्ण्य वस्तु :-

छवि रत्नम् नागर जी का शिख नख वर्णन परम्परा में एक उच्च कोटि का ग्रन्थ है जिसमें कुल 89 दोहे उपलब्ध होते हैं । यह ग्रन्थ सम्वत् 1994 में कानपुर रसिक यंत्रालय से प्रकाशित हुआ है । इसमें क्रमशः शिख से नख तक समस्त अंग-उपांगों का वर्णन दोहा शिख से नख तक समस्त अंग-उपंगों का वर्णन दोहा नामक छन्द में लक्षणों सहित किया गया है। उन्होंने "छवि-रत्नम्" का प्रारम्भ निम्नलिखित दोहे से किया है :-

"छकत जहाँ गोपीन के भ्रमर बिलोचन गुंज ।
बिलसत रहैं मुकुंद की हंसन मंद की कुंज ।।[9]

9. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 1, पृष्ठ 1.

इसके अनन्तर वेणी लक्षण, छूटे केश वर्णन, भाल वर्णन, भ्रू लक्षण, पलक लक्षण, बरुणी लक्षण, नेत्र लक्षण, नासिका लक्षण, कपोल लक्षण, तिल वर्णन, अधर वर्णन, दसन वर्णन, स्मित लक्षण, वाणी लक्षण, चिबुक लक्षण, गोदन बिन्दु, लक्षण, सम्पूर्ण मुख लक्षण, कंठ लक्षण, कंठमाल वर्णन, भुजमूल लक्षण, बाहु लक्षण, मणि बन्ध लक्षण, मणि बन्ध लक्षण, करतल लक्षण, अंगुली लक्षण कुच लक्षण, उदर लक्षण, त्रिवली लक्षण, नाभि लक्षण, रोम राजी लक्षण, कटि लक्षण, पार्श्व लक्षण पृष्ठ लक्षण नितम्ब लक्षण, जंघा लक्षण, मुखा लक्षण, गुल्फ लक्षण, एड़ी लक्षण, चरण लक्षण, चरण अंगुली, गति लक्षण, देह द्युति लक्षण, तथा सर्वांग मूर्त्ति लक्षण का परिष्कृत एवं परिमार्जित शैली में वर्णन किया गया है। भाषा विन्यास, पद लालित्य एवं माधुर्य की दृष्टि से यह दोहे अत्यन्त उत्कृष्ट बन पड़े हैं। सम्पुष्टि के लिए कतिपय दोहे दृष्टव्य है :-

"नौतम तम ते मोर ते भौर चौर ते केस ।
मेघ माल जंवाल ते घन तमाल ते वेस ।।[10]

× × × × ×

"पलकैहू न सुहात कछु पलकैहूं नहिं चैन ।
तेरी पलकै हूँ लखै पलकै हूँ लागैन ।।[11]

× × × × ×

"सारी अरकन झलक लखि ललक रहो मनरंक ।
अलन तरुनि के करन के बसीकरन ताटंक ।।[12]

× × × × ×

"कै कपोल अनमोल तिल कै अलि कमल समेत ।
कै सुवर्ण के पर्न मणि नील वर्ण छवि देत।।

---

10. छवि रत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द ४, पृष्ठ ३.
11. ,, ,, छन्द 11, पृष्ठ 4.
12. ,, ,, छन्द 20, पृष्ठ 8.

× × × × ×

आज लड़ैती लाल के ढिग बैठी मुसक्यात ।
भर दुपहरिया में रही छुटक जुन्हैया रात ।।[14]

× × × × ×

कलश कुंभ तिय कुच भये अंकुरा की भय भाग ।
भाग लिखी न मिटी तऊ सहन परे नख दाग ।।[15]

× × × × × ×

पारजात के पात ते सुधा धरे जनु धोय ।
नवल कमल दल अमल ते करतल कोमल दोय ।।[16]

× × × × ×

सर्वांग मूर्ति लक्षण के इन तीन दोहों के उपरान्त ग्रन्थ की समाप्ति की गयी है । अन्त के तीनों दोहे निम्न लिखित है :-

"दीप शिखा चम्पकलता स्वर्ण सलाका सार ।
रति रम्भा रामा रमा सौदामा उनहार ।।[17]

× × × × ×

आज छकी छवि रूप के लखहु छबीले लाल ।
छातन पर छलकत फिरत कनक छरीली बाल ।।[18]

× × × × ×

कवि काली छवि रत्न में निजमति के अनुरूप ।
बरण्यो कहे बनितान के नख शिख अंग स्वरूप ।।[19]

---

14. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 28, पृष्ठ 81.
15. वही, ... छन्द 52, पृष्ठ
16. वही, ... छन्द 47, पृष्ठ 17.
17. वही, ... छन्द 87, पृष्ठ 29.
18. वही, ... छन्द 88, पृष्ठ 29.
19. वही, ... छन्द 89, पृष्ठ 29.

7.3 भाव सौन्दर्य :-

रस :- प्रस्तुत कृति में श्रृंगार रस का वर्णन किया गया है । रति इसका स्थायी भाव है । पंडित विश्वनाथ ने श्रृंगार रस को आदि रस कहा है यथा :-

"यद्यपाधिमा श्रात्यि रस आद्यः प्रवत्तते ।"

रुद्रट ने श्रृंगार तिलक में, भोजराज ने सरस्वती कंठाभरण में श्रृंगार को प्रमुख रस माना है । हिन्दी के काव्य शास्त्र की तो परम्परा ही श्रृंगार की प्रधानता से प्रारम्भ होती है । केशव दास ने श्रृंगार रस को मुख्य और वीर आदि को उसी का अंगभूत रस माना है । तोष की "सुधानिधि", चिन्तामणि का "कवि कल्प तरु", मतिराम का "रसराज", रसलीन का "रस प्रबोध", देव का "रस प्रबोध", आचार्य भिखारी दास का "रस श्रृंगार" तथा पद्माकर का "जगत विनोद" आदि ग्रन्थ श्रृंगार रस की प्रमुखता का उल्लेख करने वाले ग्रन्थ है ।

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी का निम्नलिखित मत इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है :-

"सारतः कह सकते हैं किपूर्व वर्त्तीय काल में रस शब्द का अर्थ श्रृंगार रस ही समझा जाता था । परवर्त्तीय आचार्यों ने यद्यपि इसका दूसरे अर्थ में प्रयोग किया। पहिली अर्थ परम्परा भी लुप्त नहीं हुई । कवियों तथा आचार्यों का एक समूह बराबर इस रस को ही एक मात्र या प्रधान रस मानता रहा । हजारों वर्षों की सुदीर्घ परम्परा में इस समूह के आचार्यों की कभी भी कमी नही हुई ।"[20]

---

20. विश्वभारतीय पत्रिका, "श्रृंगार रस की परम्परा" लेखक- डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, संवत् 1942 खण्ड 3, अंक 3.

सांख्य दर्शन में जिस प्रकार महत तत्त्व का विकास अंहकार सृष्टि का मूल कारण माना जाता है उसी से मिलता जुलता अंहकार इधर मूल रस है । यह काव्य का आत्म धर्म है, समस्त अनुभूतियों का एक मात्र कारण है, इसके द्वारा अनुभूति अपनी उच्चतमावस्था को प्राप्त होती है इसलिए इसका नाम श्रृंगार है । इसे मूल रति कह सकते हैं । इसके दो भेद हैं - एक निर्विषय अहंकार दूसरा सविषय अंहकार ।

भाव की व्यापकता की दृष्टि से देखें तो श्रृंगार का विस्तार सबसे अधिक है । प्राणी मात्र ही नहीं वे वनस्पति वर्ग भी इसके आक्रोड़ में आ जाते हैं जिन्हें हम जड़ समझते हैं । व्यापकता के कारण ही इसके अनेक भेद हो जाते है । अपने प्रभाव से हृदय की संकीर्णता को उदारता में परिणत करने की शक्ति इसी में सबसे अधिक है । एक की बहु रूप में परिणति श्रृंगार से ही होती है, इसी परिणाम को उपनिषदों में "भूमासुख" कहा है । फलतः विशुद्ध सुख स्वरूप भाव जितना श्रृंगार है उतना अन्य नहीं ।

मनोवैज्ञानिकों ने हमारे समस्त विचार व्यापारों के दो प्रेरक तत्त्व माने हैं । वे है अंहत्त्व और वासना । वे अहंत्त्व को छोड़कर केवल वासना को ही सबका मूल तत्त्व मानते हैं, उनकी धारणा है कि बाल्य से लेकर मरण पर्यन्त वासना से ही नियुक्त एवं संचालित रहता है ।

शारीरिक विज्ञान वेत्ता के अनुसार भाव अनुभूतियों की उत्पत्ति हमारी स्नायविक रचनाओं पर निर्भर है जबकि कुछ लोग स्नायु चक्र भावों का उपादान कारण बताते हैं पर इसमें निमित्त कारण वासना या अहमत्व को ही मानना पड़ेगा । डा0 राम प्रसाद त्रिपाठी के अनुसार- "स्नायु जाल तो बिजली के तारों का सा पेचीदा समूह है जिस पर चेतना या उत्तेजना प्रवाहित होती है । अतः भाव सृष्टि सर्वथा स्नायु जाल की क्रिया प्रतिक्रियायों के कारण ही नहीं मूल कारण वासना को ही मानना पड़ता है।" [२१]

पड़ता है ।"[21]

प्रिय और प्रेमी का मिलन दो प्रकार का हो सकता है । सम्भोग सहित तथा सम्भोग रहित । पहले का नाम सम्भोग है दूसरे का नाम संयोग हो सकता है । यह विभाजन, भावनाओं के आधार पर ही है जो प्रेम वासना मूलक है, उसका पर्यवसान भोग में होता है ।पर, जो विशुद्ध आत्मानुभूति के रूप में है उसका पर्यावसान भी प्रेम ही होता है । इस प्रकार श्रृंगार रस के दो भेद, साहित्याचार्यों ने माने हैं । वे हैं संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार ।

इस प्रकार प्रस्तुत कृति में श्रृंगार रस का शिख नख परम्परा के माध्यम से सांगोपांग वर्णन किया गया है । रसानुभूति के निमित्त कतिपय दोहे द्रष्टव्य है :-

"पावस रैन अनन्दिनी मति मलिन्दनी माल ।
रविनन्दिनी फनिन्दनी सेनी वरन विसाल।।[22]

× × × ×

अनीकीली करवाल लौं अधिक बानीली होहि।
छीबी काम कमान सौं मनहुँ भरीली भौंह ।।[23]

× × × × ×

पला रूप धन की तुला प्रेम लता के पत्र ।
जे लोचन छितिपाल के छजत छबीले छत्र ।।[24]

---

21. डॉ० प्रभुदयाल मीतल कृत नायिका भेद की पुस्तक की भूमिका से गृहीत । लेखांश - डॉ० रामप्रसाद त्रिपाठी ।
22. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 2 पृष्ठ 1.
23. ,, ,, छन्द 8 पृष्ठ 4.
24. ,, ,, छन्द 10पृष्ठ 5.

7.4 शिल्प :-

-: भाषा :-

सम्पूर्ण कृति में ब्रजभाषा का सुन्दरतम निर्वाह किया गया है। श्रृंगार की भाषा में संकेत और बिम्ब योजना प्रधान हुआ करती है। शब्दों का चतुर चितेरा कवि इन्हीं प्रतीक माध्यमों से अपने मानस की गहराइयों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। यहाँ श्रृंगार की तन्मयता में वाणी मूक हो जाती है। श्री तुलसीदास के शब्दों में :— "गिरा अनयन नयन बिनु बानी" की स्थिति हो जाती है।

यद्यपि भाषा अभिधा प्रधान है फिर भी कवि ने यत्र तत्र लाक्षणिक भाषा का भी प्रयोग किया है, कहीं-कहीं तत्सम् शब्दावली के अतिरिक्त तद्भव और देशज शब्दों का भी प्रयोग दृष्टि गोचर होता है। माधुर्य गुण से ओत-प्रोत यह कृति निश्चित रूप से इस परम्परा में उल्लेखनीय मानी जा सकती है। भाषा सौष्ठव की दृष्टि ध्यान में रखते हुए निम्नांकित दोहे अत्यन्त पठनीय है :-

"नोकीली कर बाल लौं अधिक नकीली होंहि।
छीलीं काम कमान सीं मनहुं भरीली भौंहि ।।[26]

× × × × ×

भौंहन तैं भागत नई रोदैं रोक कमान।
सहुच समानी म्यान में शरम सिरोही मान।।[27]

× × × × ×

मखमल से मखतूल से गुल गुलाब से मौल।
दलमल कोमल कमल से कहियत अमल कपोल ।।[28]

---

26. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 8, पृष्ठ 4.
27. ,, ,, छन्द 9, पृष्ठ 4.
28. ,, ,, छन्द 22, पृष्ठ 9.

× × × × ×

मदन दुन्दुभी चोवती रति अरगनी अमोल ।

मृदुल गर्राई सी कहौ नवल कलाई गोल ।।[29]

× × × × ×

कंचन तरु से करभ से कलभ सुंड सम सौभ ।

कहियत रम्भा खम्भ से जंघा युगल अलोभ।।[30]

× × × × ×

दीप शिखा चम्पक लता स्वर्ण सलाका सार ।

रति रम्भा रामा रमा सौदामा उनहार ।।[31]

उपमान शैली :-

चूँकि कृति में शिख नख वर्णन है इसलिए कवि ने नायिका के विभिन्न अंगों की उपमा प्रकृति के भिन्न-भिन्न उपमानों से दी है । इसमें कवि को पूर्ण रुपेण सफलता मिली है । इस प्रकार के कथन को उपमान शैली ही कहा जायेगा । इस शैली के कुछ उदाहरण दृष्टव्य है :-

"पारावत के कंठ सो कम्बु सरिस कल वेष ।

सुरन सुराही सो सदा शोभित सहित विशेष।।[32]

× × × × ×

सीतल पल्लव नाह से बरनहु बाहु विशाल ।

साखा शोभा सालि के चित बल्लरी मृणाल।।[33]

× × × × ×

भये न सो भुज से मनहु इन कायलिन मृणाल ।

ताल भरे न मरे जऊ उरझे कंटक जाल ।।[34]

---

29. छविरत्नम, कालीदत्तर नागर, छंद 45. 30. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छंद 69.
31. .. .. छंद 87. 32. .. .. छंद 38.
33. .. .. छंद 43. 34. .. .. छंद 44.

श्रेणी मदन महीप के मन्दिर की उनहार ।
मृग सुत ने नीकी कहौ त्रिवलि त्रिवेणी धार।।[35]

× × × ×

गाले से मखतूल के दल मखमली हमेश ।
गाभे से कल केर के पारस परम सुदेश ।।[36]

× × × × ×

कंचन तरु से करभ से कलभ सुंड सम सौम ।
कहियत रम्भा खम्भ से जंघ युगल अलोम ।।[37]

× × × × ×

सुनत भामती के कहुं कथन सुघर की बात ।
करी परत कर कुंडली कदली हू कंपि गात ।।[38]

× × × × × ×

थल से मन मधुकरन के अति अमोल सुखटोल ।
गफ गह गहे गुलाब गुलाबी गोल ।।[39]

× × × × ×

फीके परत सिताब लखि गोल गुल्फ की आब ।
लखि बहु भाँति प्रभात के महकत गात गुलाब ।।[40]

अंलकार योजना :- शृंगारिक रचनाओं में अलंकारों का बड़ा योग दान रहा करता है । प्रस्तुत कृति में विभिन्न अलंकारों के माध्यम से नायिका

---

35. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 55, पृष्ठ 19.
36. ,, ,, छन्द 63, पृष्ठ 22.
37. ,, ,, छन्द 69, पृष्ठ 23.
38. ,, ,, छन्द 70, पृष्ठ 24.
39. ,, ,, छन्द 73, पृष्ठ 25.
40. ,, ,, छन्द 74, पृष्ठ 25.

श्रेणी मदन महीप के मन्दिर की उनहार ।
मुग तुत ने नीकी कहौ त्रिवलि त्रिवेणी धार ।।[35]

× × × ×

गाले से मखतूल के दल मखमली हमेश ।
गाभे से कल केर के पारस परम सुदेश ।।[36]

× × × × ×

कंचन तरु से करभ से कलभ सुंड सम सौम ।
कहियत रम्भा खम्भ से जंघ युगल अलोम ।।[37]

× × × × ×

सुवत भामती के कहु कथन तथन की बात ।
करी लरत कर झुंडरी कदली हू कंपि जात ।।[38]

× × × × × ×

थल से मन मधुकरन के अति अमोल सुखटोल ।
गफ गह गहे गुलाफ गुलाबी गोल ।।[39]

× × × × ×

फीके परत सिताब लखि गोल गुल्फ की आब ।
लखि बहु भाँति प्रभात के महकत गात गुलाब ।।[40]

अलंकार योजना :- शृंगारिक रचनाओं में अलंकारों का बड़ा योग दान रहा करता है । प्रस्तुत कृति में विभिन्न अलंकारों के माध्यम से नायिका

---

35. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 55, पृष्ठ 19.
36. ,, ,, छन्द 63, पृष्ठ 22.
37. ,, ,, छन्द 69, पृष्ठ 13.
38. ,, ,, छन्द 70, पृष्ठ 24.
39. ,, ,, छन्द 73, पृष्ठ 25.
40. ,, ,, छन्द 74, पृष्ठ 25.

के अंगों का वर्णन किया है, कहीं-कहीं तो बिहारी और केशव नागर जी के पीछे खड़े से प्रतीत होते हैं। इनकी अलंकार योजना सायास और अनायास दोनों ही तरह की मानी जा सकती है।

छवि-रत्न-सिन्धु में अनेक अलंकारों की उर्मियाँ प्रादुर्भूत होकर सौन्दर्य के शशि का चुम्बन करने का प्रयत्न करती-सी दृष्टि गोचर होती हैं। आइये इस सौन्दर्य-सिन्धु में कुछ क्षण के लिए हम भी अवगाहन करते चलें :-

उपमा :-

छकत जहाँ गोपीन के भ्रमर बिलोचन गुंज।
बिलसत रहें मुकुंद की हंसन कुंद की कुंज।।[41]

× × × × ×

मौसम तम से मोर से भौंर चौर से बेस।
मेघ माल ब्याल से घन तमाल से केस।।[42]

× × × × ×

रूप सरोवर की तटी हाटक पटी बिसाल।
परजंक सौ सुहाग कौ अध मयंक सौ भाल।।[43]

× × × × ×

चंचल मीन नवीन से खंजनीन से ऐन।
कहियत अलि से कमल से करसायल से नैन।।[44]

---

41. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 1, पृष्ठ 1.
42. ,, ,, छन्द 4.
43. ,, ,, छन्द 6.
44. ,, ,, छन्द 14.

× × × × ×

रूप राज कुल तिलक सी तिल प्रसून की तौल ।

कीर किशोरी सी कहौ सुकवि नासिका नौल।।[45]

× × × × ×

श्री विलास के सुमन से रूप अयौन रस भौन ।

शब्द सदन के दीप से सुरन सीप से श्रौन ।।[46]

× × × × ×

मखमल से मखतूल से गुल गुलाब से गोल ।

दलमल कोमल कमल से कहियत अमल कपोल ।।[47]

× × × × ×

शारद कुमुद से कुन्द से हीरन कैसे कोष ।

बिकसे विशद अनार से बरनहु दशन अदोष ।।[48]

× × × × ×

प्रेम फन्दसी चाँदनी चैत चन्द सो मान ।

सुधाकन्द से कन्दसी मन्द मधुर मुसक्यान ।।[49]

× × × × ×

कोकिल सी कलबीन सी भरी मोद रस रंग ।

बाचा सुधा समुद्र की कहियत सुमुल तरंग ।।[50]

× × × × ×

नव नागर मिठ बोलनी बोली नतक सुनाय ।

देत सुधा की कान मैं शीशी सी ढ़रकाय ।।[51]

---

45. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 16,

46. .. .. छन्द 19.

47. .. .. छन्द 21.

48. .. .. छन्द 26.

49. .. .. छन्द 28.

50. .. .. छन्द 30.

51. .. .. छन्द 31.

× × × × ×
रूप राज कुल तिलक सी तिल प्रसून की तौल ।
कीर किशोरी सी कहौं सुकवि नासिका नौल।।[45]

× × × × ×
श्री बिलास के सुमन से रूप अथौन रस मौन ।
शब्द सदन के दीप से सुरन सीप से श्रौन ।।[46]

× × × × ×
मखमल से मखतूल से गुल गुलाब से गोल ।
दलगल कोमल कमल से कहियत अमल कपोल ।।[47]

× × × × ×
शारद कुमुद से कुन्द से हीरन कैसे कोष ।
बिकसे विशद अनार से बरनहु दशन अदोष ।।[48]

× × × × ×
प्रेम फन्दसी चाँदनी चैत चन्द सो मान ।
सुधाकन्द से कन्दसी मन्द मधुर मुसक्यान ।।[49]

× × × × ×
कोकिल सी कलबीन सी भरी मोद रस रंग ।
बाचा सुधा समुद्र की कहियत सुमुल तरंग ।।[50]

× × × × ×
नव नागर मिठ बोलनी बोली नतक सुनाय ।
देत सुधा की कान मैं शीशी सी ढरकाय ।।[51]

---

45. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 16.
46. ,, ,, छन्द 19.
47. ,, ,, छन्द 21.
48. ,, ,, छन्द 26.
49. ,, ,, छन्द 28.
50. ,, ,, छन्द 30.
51. ,, ,, छन्द 31.

× × × × ×
नव नागर मिठ बोलनी बोली तनक सुनाय ।
देत सुधा की कान मैं शीशी सी ढरकाय ।।[51]

× × × × ×

तपन तनय तमतम तमौ मसि मणि नील समान ।
रस सिंगार अतसी कुसुम अलि कलि विंद बखान।।[52]

× × × × × ×

मंजु मदन के मुकुर सौ बरणहु बदन विचार ।
प्रफुलित नव अरबिंद सौ चंद सौ चार ।।[53]

× × × × ×

पारावत के कंठ सो कम्बु सरिस कल वेष ।
सुरन सुराही सो सदा शोभित सहित विशेष।।[54]

× × × × × ×

बरतुल फल से शंभु से हेम पिंड सम तूल ।
शांड उतरि से कहौ युग भुजान के मूल ।।[55]

× × × × ×

सौतन पन्नग नाह से बरनहु बाहु विशाल ।
साखा शोभा सालि के विल बल्लरी मृणाल।।[56]

× × × × ×

मदन दुन्दुभी चोवसी रति अरगनी अमोल ।
मृदुल मलाई सी कहौ नवल कलाई गोल ।।[57]

---

51. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 31.
52. ,, ,, छन्द 34.
53. ,, ,, छन्द 36.
54. ,, ,, छन्द 38.
55. ,, ,, छन्द 41.
56. ,, ,, छन्द 43.
57. ,, ,, छन्द 45.

पारजात के पात से सुधा धरे जनु धोय ।
नवल कमल दल अमल से करतल कोमल दोय ।।[58]

× × × ×

अरुण तरणि की किरण सी चम्प कली सी चार ।
सुरन सुराही सी कहैं अंगुरी कवि करतार ।।[59]

× × × × × ×

पौनी ऐसो अतल सुजल सी लोल ।
थल सो पियमन पथिक सो उरखह उदर अमोल ।।[60]

× × × × × ×

श्रेणी मदन महीप के मन्दिर की उनहार ।
मृग सुत ने नीकी कही त्रिवलि त्रिवेणी धार ।।[61]

× × × × × ×

बापी सी सोहत बनी पुखराज की जमीन ।
सुधा सरोवर सी सदा कहियत नाभि नवीन ।।[62]

× × × × × ×

रस सिंगार की बेलसी जमुन लहर सी श्याम ।
मदन जाल सी बाल की रोमावली ललाम ।।[63]

× × × × × ×

केहर सी करभार सी करष कलानिधि रेख ।
कच कंचन सट सी कही कटि तट निपट अदेख ।।[64]

---

58. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द ~~80~~ 47.
59. ,, ,, छन्द 49.
60. ,, ,, छन्द 53.
61. ,, ,, छन्द 55.
62. ,, ,, छन्द 57.
63. ,, ,, छन्द 59.
64. ,, ,, छन्द 61.

× × × × ×
जाय न मिथकी कै लगत लग रावरे कलंक ।
लफत त्वोदर लौं नई लरम लहलही लंक ।।[65]

× × × × ×
गाले से मखतूल के दल मखमली हमेशा ।।
गाभे से कल केर के पारस परम सुदेश ।।[66]

× × × × × ×
पहुली सी पुखराज सी संकहु सुकवि सुडौल ।
पीठ सुभग हाटक पटी कल कदली दल गौल।।[67]

× × × × × ×
चामीकर के कुम्भ से पुल से विपुल अलम्ब ।
तारक मद नद तुम्ब से निरखहु नवल नितम्ब।।[68]

× × × × × ×
कंचन तरू से करभ से कलभ सुंड सम सौम ।
कहियत रम्भा खम्भ से जंघा युगल अलोम ।।[69]

× × × × × × ×
थल से मन मधुकरन के अति अमोल सुखटोल ।
गफ गह कहे गुलाब से गुल्फ गुलाबी गोल ।।[70]

× × × × × × ×
लखियत लाल प्रवाल सी हंसपाल के ढंग ।
पलित पक नारंग सी एड़ी ललित सुरंग ।।[71]

---

65. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 62.
66. .. .. छन्द 63.
67. .. .. छन्द 65.
68. .. .. छन्द 67.
69. .. .. छन्द 69.
70. .. .. छन्द 73.
71. .. .. छन्द 75.

× × × × ×
दल से अमल असोक के किसलय कल्प कुमार ।
अरुण सदल अरविन्द्र से चरणचारु सुकुमार ।।[72]

× × × × ×

बीर बहोटी से अरुण जावक रंग अनूप ।
अति बिसाल नख बाल के लाल चुनी के रुप।।[73]

× × × × × ×

कलहंसन के बंस सी राजहंस सी हाल ।
कहियत समद गयन्द सी मन्द मनोहर चाल ।।[74]

× × × × × ×

कंच कोस गोरोचना केतक केसर रंग ।
चामीकर चम्पक लता वरनहु बनिया अंग ।।[75]

× × × × × ×

आज छकी छवि रुप के लखहु छबीले लाल ।
छातन पर छमकत रिफरत कनक छरीलौं बाल ।।[76]

× × × × × × ×

मालोपमा :-

दीप सिखा चम्पकलता स्वर्ण सलाका सार ।
रति रम्भा रामा रमा सौदामा उनहार ।।[77]

---

72. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 77.
73. ,, ,, छन्द 81.
74. ,, ,, छन्द 83.
75. ,, ,, छन्द 85.
76. ,, ,, छन्द 88.
77. ,, ,, छन्द 87.

उत्प्रेक्षा :-

नौकीलीं कर बान लौं अधिक बकीली होंहि ।
छीलीं काम कमान सीं मनहुँ भरीली भौंहिं ।।[78]

× × × × ×

यह जिय आवत देखि तन करगहि राखहु थाम ।
पीक लीक निगुरी परत परस पातरे वाम ।।[79]

× × × × ×

यौं छवि छाजत बालकी रोमावली विशाल ।
मदन वधिक मानहु रचो जग द्रग खंजन जाल ।।[80]

× × × × ×

थकी मनहु रतरंग की कदली दलपर कोय ।
छूटी रस लूटी नाग खूटी सोय ।।[81]

× × × × ×

वस्तूत्प्रेक्षा :-

यौं सरसावत चिबुक लग गोदन बिंद बिनोद ।
लसत मनहुं बैठी निशा चन्द पिया की गोद।।[82]

× × × × ×

नखन सहित अंगुरीन की यौं लागी छवि होन ।
मनहुं ओस बुंदिया परी चम्पकलिन की टौंन ।।[83]

---

78. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 8.
79. .. .. छन्द 39.
80. .. .. छन्द 60.
81. .. .. छन्द 66.
82. .. .. छन्द 35.
83. .. .. छन्द 50.

× × × × ×

लाल मालती मंजु की कुंज गलिन मैं आय ।
नारि भई ये गुण भरी ईंगुर सी दुरकाय ।।[84]

× × × × ×

होत अरुण अंगुरीन पर नूपुर की झनकार ।
मान्हु कुंज कलीन पर अली करैं गुंजार ।।[85]

× × × × ×

हेतुत्प्रेक्षा :-

तबहीं आवत ती न इत कुच निहार सुकुमार ।
धरत गिनत से पाय अब नव नितम्ब के भार ।।[86]

× × × × ×

सुनत भामती के मन्हु जघन सघन की बात ।
करी करत कर कुंडली कदली हू कंपि जात ।।[87]

× × × × ×

जब जानी मुखान की छवि न बखानी जाय ।
विनय करत कायल भई पायल हू परि पाय ।।[88]

× × × × ×

फलोत्प्रेक्षा :-

बासर निखारन करत बन वारन के वंस ।
मुक्ताफल पारण करत तो गति कारण हंस।।[89]

---

84. छवि रत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 76.
85. .. .. छन्द 80.
86. .. .. छन्द 68.
87. .. .. छन्द 70.
88. .. .. छन्द 72.
89. .. .. छन्द 84.

प्रतीप :-

मोहन तें आगत लई रोंदें रोक कमान ।
लकुच समानी म्यान में शरम सिरोही मान।।[90]

× × × × ×

कुन्द कुन्द लखि दसन द्युति कुमुद 2 अवदात ।
मिल बैठत हू सूत में हीर हार है जात ।।[91]

× × × × ×

नवल मालती जाल के कुच विशाल तट कूल ।
होत हाल के काल के लाल भाल के फूल ।।[92]

× × × × ×

भये न तो भुज से मनहु इन कायलिन मृडाल ।
ताल भरे न मरे जक उरहीं कंटक जाल ।।[93]

× × × × × ×

पाले हू में होइगी नहि गाले की पाह ।
पर है पिहलू पाल में जब गुपाल की वाह ।।[94]

× × × × ×

जान परत कज सी कछु केसर लागी काय ।
क्यों श्रमकर दृग दीजिये त्यों श्रम उपसत जाय।।[95]

---

90. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 9.
91. .. .. छन्द 27.
92. .. .. छन्द 40.
93. .. .. छन्द 44.
94. .. .. छन्द 64.
95. .. .. छन्द 86.

अपह्नुति :-

डरै न कंजमुखी रही मैं देखी बंध खोल ।
चम्पा कलीन सुने कहूँ भोरी भ्रमर अडोल।।[96]

× × × × ×

रसिकन के उर अजिर मैं करहि कलान असंख।
तरुनी की बरुनी न ये दृग खंजन के पंख ।।[97]

× × × × ×

मनरंजन अंजन दियो दृगन दिठौना आज ।
खंजन कंज कुरंग की दीठि चलावन काज ।।[98]

× × × × ×

मदन सदन तें अनत कहूँ जाय न हियैं विचार ।
जनु जग छवि बंदुआ करी नक नथबेड़ी डार ।।[99]

× × × × ×

अकलंकी जग होन हित तो मुख भयो मयंक ।
कस्तूरी मिस देत क्यों स्याही ताहि कलंक *।[100]

* × × × ×

अनुप्रास :-

पला रूप धन की तुला प्रेम लता के पत्र ।
जे लोचन छिपपाल के छजत छबीले छत्र ।।[101]

---

96. छवि रत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द [illegible].3.
97. .. .. छन्द [illegible].
98. .. .. छन्द [illegible].15.
99. .. .. छन्द 78.
100. .. .. छन्द 37.
101. .. .. छन्द 10.

x x x x x
बाल कहा खोली अहै अधर अमोली ज्योति ।
पीले परत प्रवाल री लाल लालरी होति ।।[102]

x x x x x

चिबुक चारू मनकी छिवी शोभासदन की सीव ।
निरखहु नेह निकत की निपट नवेली नींव ।।[103]

x x x x x

यमक :-

हौंही सुधि लावत उतै तू न चलै बलि बाल ।
है है बिरहिन अधससी देख ससी भाल ।।[104]

x x x x x

पलकैं हूं न सुहात कछु पलकैं हूँ नहीं चैन ।
तेरी पलकैं हूँ लखैं पलकैं हूँ लागैन ।।[105]

x x x x x

रूपक :-

कलभ कुंभ गिरि कलस कुच श्रीफल शुभ मंजीर ।
घट कन्दुक मठ दुन्दुभी दुति दाड़िम जंभीर ।।[106]

x x x x x

---

102. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 25.
103. ,, ,, छन्द 32.
104. ,, ,, छन्द 7.
105. ,, ,, छन्द 11.
106. ,, ,, छन्द 51.

भ्रमत फिरै कुच गिरिन पर व्याकुल तृषित शरीर ।
नाभि सरोवर में मिली नैनन को मृग नीर ।।[107]

× × × × × ×

<u>विभावना</u> :-

तो कच घन अंधियार में भूलहिं कबहुं अबूझ ।
अनेक दिए परै न मग सूरज हू कहँ सूझ ।।[108]

× ×× ×× × ×

<u>उल्लेख</u> :-

मोह निशा गरू धूम सी मंत्र मोहनी मांझ ।
बरूनी जाल कलंक कौ काल कुहू की सांझ ।।[109]

× × × × ×

<u>श्लेष</u> :-

सारी सरकन झलक लखि ललक रहौ मनरंक ।
अरून तरूनि के करन के वसीकरन तारंक ।।[110]

× × × × ×

<u>सन्देह</u> :-

कै कपोल अनुमोल कै तिल कै अलि कमल समेत ।
कै सुवर्ण के पर्न मणि नील वर्ण छवि देत ।।[111]

× × × × ×

---

107. छविरत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 58.
108. ,, ,, छन्द 5.
109. ,, ,, छन्द 128.
110. ,, ,, छन्द 20.
111. ,, ,, छन्द 23.

व्यतिरेक :-

नहिं मिलिन्द अरविन्द जंह भमर वृन्द लहराय ।
यह कपोल रपकत इहाँ द्रग पुतरिन की पाय ।।[112]

× × × × ×

फीके परत सितार लखि गोल गुल्फ की आब ।
लखि बहु भाँति प्रभात के महकत गात गुलाब ।।[113]

विषमालंकार :-

आज लड़ैती लाल के ढिग बैठी मुसक्यात ।
भर दुपहरि या मैं रही छुटक जुन्हैया रात ।।[114]

× × × × ×

कलश कुंभ तिय भये अंकुश की भय भाग ।
भाग लिखी न मिटी तऊ सहन परे नख दाग ।।[115]

× × × × ×

अतिशयोक्ति :-

धोखे ही कहुँ छु गई करन कंज दल कोर ।
ये वह चम्पक वरण के गादियन परे दरोर ।।[116]

× × × × ×

मंजु कहा मखतूल है मखमल किलक गुलाम ।
उदर देख लागौं गढ़न मुख माखन को नाम।।[117]

---

112. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 22.
113. ,, ,, छन्द 74.
114. ,, ,, छन्द 29.
115. ,, ,, छन्द 52.
116. ,, ,, छन्द 48.
117. ,, ,, छन्द 54.

काव्य लिंग :-

पियमन मुनि सदा जाहि सुलभ गति जोईं ।
ता मृगनैनी की त्रिवलि क्यों न त्रिवेणी होइ ।।[118]

× × × × ×

अनुज्ञा अलंकार :-

जे न अधासुर उर दवे ना यमुना दह चाल ।
तलफत गौरी के परे ठोढ़ी गड़ी गुपाल ।।[119]

स्वभावोक्ति अलंकार :-

गोल सडौल सुहावने गोरे थुलैरे कूल ।
किहि न चित्त चरै चेरे जे तेरे भुज मूल ।।[120]

निःदर्शनाकलंकर :-

जावंक तुमहिं लगाय के नखन अरुणता हेतु ।
ये चन्दन के लेप ते चन्दहि करवो सेत ।।[121]

स्फुट :- प्रतीप, उत्प्रेक्षा एवं सन्देह :-

निरखि नासिका नारि की बात गनहुं करसीज ।
जानत हीरा की कनी सुक अनार के बीज ।।[122]

अथु

उपमा एवं प्रतीप :-

बिम्बाफल से अम्ब के दल से अधर विशाल ।
कहियत बाल प्रकाल से ललित लाल से लाल।।[123]

---

118. छवि रत्नम, कालीदत्त, छन्द 56.
119. ,, ,, छन्द 33.
120. ,, ,, छन्द 42.
121. ,, ,, छन्द 82.
122. ,, ,, छन्द 17. 123. वही, छन्द 24.

उपमा एवं व्यतिरेक :-

पद्म कली से पेखियत पद्मराग के रूप ।
पद्म पांखुरी से कहौ अंगुरी अधिक अनूप।।[124]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि उपमा लंकार कवि का सर्वप्रिय अलंकार है । इसके उपरान्त उत्प्रेक्षा, प्रतीप, अपह्नुति, अनुप्रास, सन्देह, व्यतिरेक, रूपक, विषमालंकार, अनुमालंकार, काव्य लिंग, अतिशयोक्ति, तथा उल्लेख आदि का भी वर्णन किया गया है ।

7.5 तुलना :-

काली कवि द्वारा प्रणीत "छवि रत्नम" के प्रेरणा स्त्रोत के रूप में संस्कृत के महाकाव्यों को लिया जा सकता है । जिसमें नैषध महाकाव्य और कुमार सम्भव उल्लेखनीय है । नख शिख परम्परा का हिन्दी साहित्य में जो निरूपण हुआ है उनके लिए रीति कालीन कवि विख्यात हैं जायसी और बिहारी को इस क्षेत्र में अत्यधिक सफलता मिली है ।

नागर जी के काव्य में रीति कालीन परम्परा अर्थात् नख शिख वर्णन का सुन्दर निर्वाह किया गया है । कहीं-कहीं तो इन्होंने जायसी और बिहारी से भी कल्पना की ऊँची उड़ान भरी है । आइये इनका तुलनात्मक विवेचन करते चलें :-

केश वर्णन :-

मौसम तम से मोर से भौंर चौंर से केश ।
मेघ माल जंवाल से धन सवाल से केश ।।[125]

124. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 79.

125. ,, ,, छन्द 4.

× × × × × ×
चिकुरप्रकरा जयन्ति ते विदुषी मूर्द्धनि सा बिभुर्त्ति यान् ।
पशुना प्यपुरस्कृतेन तत्तुलनामिच्छतु चामरेण कः ।।126।।

× × × × × ×

सहज सचिक्कन, स्याम-रुचि सुचि सुगंध सुकुमार ।
गनतु न मनु पथु अपथु, लखि बिथुरे सुथरे बार।।[127]

× × × × × ×

भौंर केस, वह मालति रानी । बिसहर लुरे लेहिं अरघानी ।।
कौंवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअंग बैसारे ।।[128]

भ्रू वर्णन :-

गोकीली करवाल लौं अधिक छकीली होहि ।
छीलीं काम कमान सी भनहुं भरीली भौंहि ।।

× × × × × ×

भौंहन तें भागत लई, रोदें रोक कमान ।
सकुच समानी म्यान में शरम सिरोही मान ।।[129]

× × × × ×

धनुषी रतिपंचबाणयोरुदिते विश्वजयाय तद्भ्रुवौ ।
नलिके न तदुच्चनासिके त्वयि नाली कवि मुक्ति कामयोः।।[130]

× × × × × × ×

खौरि-पनिच-भृकुटी-धनुष-बधिकुसमरु तजि कानि ।
हनुतु-तरुन-मृग तिलक-सर-भाल-भरि तानि ।।[131]

---

126. नैषध महाकाव्य द्वितीय सर्ग श्लोक 20.
127. बिहारी सतसई, बिहारी दास, ।
128. पदमावत, मलिक मुहम्मद जायसी।
129. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 8-9.
130. नैषध महाकाव्य,
131. बिहारी सतसई, बिहारी द्वितीय सर्ग श्लोक 28.

भौंह धनुक, धनि धानुक, दूसर सरि न कराइ ।
गगन धनुक जो उगै लाजहि सो छपि जाई ॥[132]

नेत्र वर्णन :-

चंचल मीन नवीन से खंजनीन से ऐन ।
कहियत अलि से कमल से करसायल से नैन ॥

× × × × ×

मन रंजन अंजन दियो सुगन दिठौना आज ।
खंजन कंज कुरंग की दीठि चलावन काज ॥[133]

× × × × × ×

स्तक्षोर्जनयन्ति सान्त्वनां सुरकराडूयनकैतवान्मृगाः ।
जितयोरुदयत्प्रमीलयोस्तदखर्वेक्षणयोर्भया भयात् ॥[134]

× × × × × ×

चमचमात चंचल नयन बिच घूँघट - पट झीन ।
मानहु सुरसरिता-विमल-जल उछरत जुगमीन ॥

× × × × × ×

डारी सारी नील की, ओट अचूक चुकै न ।
मो मन-मृग करबर गहैं अहे-अहेरी नैन ॥[135]

× × × × ×

समुद्र-हिलोर फिरहिं जनु झूले । खंजन लरहिं मिरिग जनु भूले ॥

× × × × × × × ×

सुभर सरोवर नयन वै, मानिक भरे तरंग ।
आवत तीर फिरावहीं, काल भौंर तेहि संग ॥[136]

---

132. पद्मावत, जायसी.
133. कविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 14-15.
134. नैषध महाकाव्य.
135. बिहारी सतसई, बिहारी दास.
136. पद्मावत, जायसी.

अमिय हलाहल मद भरे, सेत स्याम रतनार ।
जियत मरत झुकि झुकि परत, जेहि चितवत इक बार ।।[137]

नासिका वर्णन :-

रूप राज कुल तिलक सी तिल प्रसून की तौल ।
कीर किशोरी सी कहौ सुकवि नासिका नौल।।[138]

× × × × × ×

निरखि नासिका नारि की घात मनहुं करबीज ।
लागत हीरा की कनी सुक अनार के बीज ।।[139]

× × × × × × ×

नलिके न तदुच्च नासिके त्वयि नाली कविमुक्तिकामयोः ।।[140]

× × × × × × × ×

जटित नील मनि जगमगति सींक सुहाई नाक ।
मनो अली चंपक कली बसि रसु लेतु निसाँक ।।[141]

× × × × × × ×

नासिक खरग देउँ कह जोगू । खरग खीन, वह बदन-सँयोग ।
नासिक देखि लजानेउ सुआ । सूक आइ बेसरि होई उआ ।।[142]

---

137. नेत्र वर्णन, रसलीन.

138. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 16.

139. ,, ,, छन्द 17.

140. नैषध महाकाव्य, श्लोक, 28.

141. बिहारी सतसई, बिहारी, पृष्ठ

142. पदमावत, जायसी.

अधर वर्णन :-

बिम्बाफल से अम्ब के दल ते अधर विशाल ।
कहियत बाल प्रबाल से ललित लाल ते लाल ।।

× × × × ×

बाल कहा खोली अहै अधर अमोली ज्योति ।
पीले परत प्रवाल री लाल लालरी होति ।।[143]

× × × × ×

अधर खलु बिम्बनामंक फलमस्मदिति भव्यमन्वयम् ।
लभते धरबिम्बमित्ययः पदमत्या रदनच्छदं वदत्।।[144]

× × × × ×

हुरति हुराये हुरति नहीं, प्रकट करति रति रूप ।
छुटे पीक औरै उठी, लाली अधर अनूप ।।[145]

× × × × ×

अधर सुरंग अमी-रस-भरे । बिंब सुरंग लाजि बन फरे ।
हीरा लेई सो बिद्रुम-धारा। बिहँसत जगत होइ उजियारा।।
भए मँजीठ पानन्ह रँग लागे । कुसुम-रंग थिर रहै न आगे ।।[146]

मुख वर्णन :-

मंजु मदन के मुकुर सौ बरणहु बदन विचार ।
प्रफुलित नव अरविंद सौ चंद सौ चार ।।

× × × × ×

---

143. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 24-25.

144. नैषध महाकाव्य, श्लोक 24.

145. बिहारी सतसई, बिहारी.

146. पद्मावत, जायसी.

× × × × ×

अकलंकी जग होन हित तो मुख भयो मयंक ।

कस्तूरी मिल देत क्यों एरी ताहि कलंक ॥[147]

× × × × ×

धृतलांछनगोमयांचनं विधुमालेपनपाण्डुरं विधिः ।

भ्रमयत्युचितं विदर्भजानननीराजनवर्द्धमानकम् ॥[148]

× × × × ×

छिप्यौ छबीलौ मुँह लसै नीलैंअंचर चीर ।

मनौ कलानिधि झलम,लै,कालिंदी के नीर ॥

× × × × ×

पत्रा ही तिथि पाइयै वा घर कैं चहुँ पास ।

नित प्रति पून्यौई रहै, आनन-ओप-उजास ॥[149]

× × × × ×

मुख तँबोल-रंग-धारहिं रसा । केहि मुख जोग जो अमृत बसा ।
राता जगत देखि रंगराती । रुहिर भरे आछहि बिहँसाती ॥[150]

कुच वर्णन :-

कलभ कुंभ गिरि कलश कुच श्रीफल शंभु मंजीर ।

वट कन्दुक मठ कुन्दन द्युति दाड़िम जंभीर ॥

× × × × ×

कलभ कुंभ तिय कुच भये अंकुश की भय भाग ।

भाग लिखी न मिटी तऊ सहन परे नख दाग ॥[151]

---

147. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 36-37.

148. नैषध महाकाव्य, द्वितीय सर्ग, श्लोक 26.

149. बिहारी सतसई, बिहारी.

150. पद्मावत, जायसी.

151. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 51-52.

अपि जम्भरिपुं दमस्वसुर्जित कुम्भः कुचशोभयेश्वराद् ।।[152]

× × × × ×

चलत न पावत निगम मग, जग उपजी अति त्रास

कुच उतुंग गिरिवर गह्यौ, मीना मैन मवास ।।[153]

× × × × ×

हिया थार कुच कंचन लारू । कनक कचोर उठे जनु चारू ।।

कुंदन बेल साजि जनु कूँदे । अमृत रतन मोन दुइ मूँदे ।।

बेधे भौंर कंट केतकी । चाहहिं बेध कीन्ह कंचुकी ।।

जोबन बान लेहिं नहिं बागा । चाहहिं हुलसि हिये हठ लागा ।।[154]

जंघा वर्णन :-

कंचन तरु से करभ से कलभ सुंड सम सोम ।

कहियत रम्भा खम्भ से जंघा युगल अलोम।।

× × × × ×

सुनत श्रीमती के गनहु जघन सघन की बात ।

करी करभ कर कुंडली कदली हू कंपि जात ।।[155]

× × × ×

तरुमुरुयुगेण सुन्दरी किमु रम्भां परिणाहिना परम् ।

तरुणीमपि जिष्णुरेव तां धनदापत्यतपःफलस्तनीम् ।।[156]

× × × × × ×

---

152. नैषध महाकाव्य, श्लोक 33.

153. बिहारी सतसई, बिहारी.

154. पदमावत, जायसी.

155. छवि रत्नम्, कालीदत्त नागर, छन्द 69-70.

156. नैषध महाकाव्य, श्लोक 37.

कंज कुसुम लोचन निरै, करै मनो विधि गैन ।
केलि तरुन दुख दैन ये, केलि तरुन सुख दैन ।।[157]

× × × × ×

सुरे [illegible] सोभा अति लाए । केरा-खम्भ फेरि जनु लाए ।।[158]

× × × × × ×

चरण वर्णन :-

दल से अमल असोक के [illegible] कल्प कुमार ।
अरुण बारुन अरविन्द से चरण चारु सुकुमार ।।

× × × × ×

जो हम विधि होते कहूं रचते अपने हाथ ।
तौ बलि तेरे चरण से लव प्रवाल में पात ।।[159]

× × × × ×

जलजे रविसेवयेव ये पदमेतत्पदतामवापतुः ।
ध्रुवमेत्य रुतः सहस्रकीकुल सरतै विधिपत्रदम्पती ।।[160]

× × × × ×

पग पग मग अगमन परत, चरन-अरुन द्युति झूलि ।
ठौर ठौर लखियत उठे, दुपहरिया से फूलि ।।[161]

× × × × × ×

कमल चरण अति रात विसेखी । रहैं पाट पर पुहुमि न देखी ।
देवता हाथ हाथ पगु लेहीं । जहँ पगु धरै सीस तहँ देहीं ।।[162]

---

157. बिहारी सतसई, बिहारी.
158. पद्मावत, जायसी.
159. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 77-78.
160. नैषध महाकाव्य, श्लोक 38.
161. बिहारी सतसई, बिहारी.
162. पद्मावत, जायसी.

नितम्ब वर्णन :-

चामीकर के कुम्भ से पुल से विपुल अलम्ब ।
तारक मद नद तुम्ब से निरखहु नवल नितम्ब ।।
xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx
तबहीं आवतती न इस कुच निहार सुकुमार ।
धरत गिनत से पाय अब नव नितम्ब के भार ।। 163
x x x x x x
पृथुवर्तुलतन्नितम्बकृन्मिहिरस्यन्दनशिल्पशिक्षया ।
विधिरेकचक्रचारिणं किमु निर्मित्सति मान्मथं रथम् ।। 164
x x x x x x x x
बरनौं नितम्ब लंक कै शोभा । औ गज-गवन देखि मन लोभा ।। 165

कपोल वर्णन :-

मखमल से मखतूल से गुल गुलाब से गोल ।
दलमल कोमल कमल से कहियत अमल कपोल ।।
x x x x x x x
नहिं मिलिन्द अरविन्द जहं भ्रमर बृन्द ठहराय ।
यह कपोल रपकत इहां दृग पुतरिन की पाय ।। 166

---

163. xxxxxxx ,xxxxxxxx छविरत्नम ,कालीदत्तनागर,छन्द 67-68
164. नैषध महाकाव्य,श्लोक 36
165. पद्मावत,जायसी ।
166. छवि रत्नम ,कालीदत्त नागर ,छन्द 21-22

× × × × ×

परसत पोंछत लख रहत लगि कपोल के ध्यान ।

कर ले पी पाटल विमल, प्यारी पठये पान ।।[167]

× × × × ×

पुनि बरनौं का सुरंग कपोला । एक नारँग दुइ किए अमोला ।।

पुहुप-पंक रस अमृत साधे । केई यह सुरँग खरौरा बाँधे ।।[168]

श्रवण वर्णन :-

श्रुति विलास के सुमन से छवि अधीन रस भौन ।

शब्द सदन के दीप से सुख सीप से श्रौन ।।

× × × × ×

सारी झरकन झलक लखि ललक रहौ मनरंक ।

अलन लसनि के करन के वशीकरन तांटक ।।[169]

× × × × ×

लसुत सेत सारी ढप्यौ, तरल तरयौना कान ।

परयौ मनौ सुरसरि, सलिल रवि-प्रतिबिंब विहान ।।

अजौं तरयौना ही रह्यौ, श्रुति सेवत इक रंग ।

नाक-बास बेसरि लह्यौ, बसि मुकुतन कै संग ।।[170]

× × × × ×

श्रवन सीप दुइ दीप सवारे । कुंडल कनक रचे उजियारे ।।

मनि-कुंडल झलकै अति लोने । जनु लौंकहि दुइ कोने ।।

दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहि जाहीं ।।[171]

---

167. बिहारी सतसई, बिहारी.

168. पद्मावत, जायसी.

169. छविरत्नम् कालीदत्त नागर, छन्द 19-20.

170. बिहारी सतसई, बिहारी.

171. पद्मावत, जायसी.

स्मिति वर्णन :-

प्रेम चन्दसी चाँदनी चैत चन्दसो गात ।
सुधाचन्द से कन्दसी मन्द मधुर मुसक्यात ।।
आज लड़ैती लाल के ढिंग बैठी मुसक्यात ।।
भर दुपहरिया में रही छिटक जुन्हैया रात ।।[172]

× × × × ×

नैकु हँसौंही बानि तजि, लख्यो परत मुख नीठि ।।
चौंका चमकनि चौंध में परत चौंधि सी डीठि ।। [173]

× × × × × ×

जहँ जहँ बिहँसि सुभावहि हँसी । तहँ तहँ छिटकि जोति पकासी।।
दामिनि दमकि न सरवारि पूजी।पुनि ओहि जोति और को दूजी।।[174]

कटि वर्णन :-

केहर सी करभार सी लख्य कलानिधि रेख ।
कच कंचन मठ सी कही कटि तट निपट अदेख ।।
जाय न सिमकी है लगन लग रावरे कलंक ।
लफत त्योदर लौं नई लरज लुहलुही लंक ।।[175]

× × × × ×

लह लहात तनतरुणाई, लचि लगि लौं लफजात ।
लगी लाक लोयन भरी, लोचन लेत लगाय ।।[176]

एड़ी वर्णन :-

लखियत लाल प्रवाल सी हंसपाल के ढंग ।
फलित पक्क नारंग सी एड़ी ललित सुरंग ।।

---

172. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 28-29.
173. बिहारी सतसई, बिहारी.
174. पद्मावत, जायसी.
175. छविरत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 61-62.
176. बिहारी सतसई, बिहारी.

×　　　×　　　×　　　×　　　×

लाल मालती मंजु की कुंज भलिन में आय ।

नारि नई ये गुण भरी अंगुर सी दरकाय ।।[177]

×　　　×　　　×　　　×　　　×

पाय महावर देन को नाइन बैठी आय ।

फिर फिर जात महावरी एड़ी भीड़त जाय ।।[178].

7.6 निष्कर्ष :-

दोहा नायक छन्द में लिखी गयी बिहारी सतसई शृंगार का अभूत पूर्व ग्रन्थ है । इसकी अनेक टीकाएँ टीकाएँ इसका एकमात्र ज्वलन्त उदाहरण है । दोहा जैसे छोटे से छन्द में सब कुछ भर देना कुशल कवि की बात होती है । बिहारी शृंगारार्णव के कुशल और सशक्त कैवर्त्त हैं । "काली कवि भी दोहा लिखने में सिद्धहस्त है । शिख-नख वर्णन परम्परा में उनका अप्रतिम योग दान है । उनके वर्णन स्वाभाविक, सरस, सरल, एवं अत्यन्त मधुर है" । छवि रत्नम के प्रणेता ने सौन्दर्य लोक में मनोरम चित्रों की चित्रशाला प्रस्थापित की है । इसमें सौन्दर्यानुभूति की व्यापकता, विशदता, सूक्ष्मता एवं मार्मिकता की झाँसकी अवर्णनीय है । वास्तव में नागर जी ने काव्य-कामिनी के कलित-कलेवर का जो शृंगार किया है, वह अत्यन्त श्लाघनीय है ।"[179]

---------------0---------------

177. छवि रत्नम, कालीदत्त नागर, छन्द 75-76.
178. बिहारी सतसई, बिहारी. पृष्ठ...
179. कालीकवि, प्रो० रामस्वरूप खरे के लेख से उद्धृत.

कृतित्व

(प्रकाशित काव्य कृतियाँ)

8.1 गंगा गुंजनमंजरी : मध्य युगीन स्तुति परक काव्य परम्परा.

8.2 सम्पूर्ण वस्तु.

8.3 अनुभूति पक्ष.

8.4 अभिव्यंजना पक्ष.

8.5 मूल्यांकन.

8.1 मध्ययुगीन स्तुति परक काव्य परम्परा :-

प्राचीन कवियों का ऐसा नियम था कि अपनी कृति को निर्विघ्न पूर्ण करने के लिए कृति के प्रारम्भ में मंगलाचरण के माध्यम से अपने इष्ट अथवा किसी अन्य देवी देवताओं की स्तुति किया करते थे, यह परम्परा संस्कृत से हिन्दी में आयी । इसी प्रकार स्तुति परक काव्यों का विकास हुआ, जहाँ तक पुन्यतोया गंगा जी का प्रश्न है संस्कृत साहित्य में अनेक ग्रन्थ ऐसे हैं जिनमें गंगा महिमा का गुणानुवाद हुआ है ।

कृष्ण द्वैपायन महर्षि व्यास ने श्रीमद् भागवत्[1] में गंगा की महिमा का उल्लेख किया है । इसके अनुसार ब्रह्म वैवर्त्त पुराण के पूर्वार्द्ध में भी शंकर जी की एक तान, एक लय होकर देवताओं के जल रूप द्रवीभूत हो जाने से गंगा की उत्पत्ति मानी गयी है । यथा -

> "रुद्र रूपः सुवार्त्तं विद्युयात् हरिण्ड्स्दाः
> नारायणश्च रूमशिच गायकाश्च शिवः स्वयं
> जल पूर्ण च बैकुण्ठ इष्ट वाञ्छतो भैरवी ।।"[2]

पद्मपुराण[3] में भी गंगा महिमा की वर्णन का उल्लेख है। श्री बाल्मीकि द्वारा प्रणीत रामायण में गंगा स्तुति है जो 39वें

---

1. श्रीमद्भागवत, वेद व्यास.
2. ब्रह्म वैवर्त्त पुराण, पूर्वार्द्ध, अध्याय, 34.
3. पद्मपुराण, वेद व्यास.

अध्याय से प्रारम्भ होकर 44वें अध्याय तक पूर्ण होती है । भवभूति के उत्तर रामचरित[5], कालीदास के रघुवंश[6] तथा पण्डित राज जगन्नाथ की गंगा लहरी[7] और शंकराचार्य की गंगा स्तुति[8] में गंगा महिमा का काव्यात्मक उल्लेख हुआ है । इसे संस्कृत साहित्य में स्तुति परक काव्य का विकास कहा जा सकता है । संस्कृत साहित्य की यह पुण्यधारा हिन्दी काव्य की वसुन्धरा पर भी प्रवहमान हुयी जिसने संतप्त मानसों को सांत्वना दी । जिस प्रकार दिव्य लोक से भगवती देवी गंगा का अवतरण इस मृत्युलोक में हुआ, ठीक उसी प्रकार संस्कृत साहित्य से समुद्भूत होकर हिन्दी काव्य-कानन में भगवती भागीरथी की पवित्र धारा प्रबल वेग से प्रवाहित हुई ।

महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने अपनी विनय पत्रिका में गंगा को स्वर्ग सोपान, विज्ञान और ज्ञान की प्रदायिनी तथा मोह-मद को नष्ट करने वाली माना है । वे लिखते हैं :-

"स्वर्ग सोपान विज्ञान ज्ञान प्रदे ।
मोह मद मदन पाथोज हिम यामिनी।।
× × × × ×
देहि रघुबीर पद प्रीति निर्भर मातु ।
दास तुलसी त्रास हरणि भव भामिनी।।[9]
× × × × ×

---

4. बाल्मीकि रामायण, बाल्मीकि, अध्याय 39-44.
5. उत्तर रामचरित, भवभूति.
6. गंगालहरी, आचार्य, जगन्नाथ.
7. रघुवंश, कालिदास.
8. गंगा स्तुति, शंकराचार्य.
9. विनय पत्रिका, गोस्वामी तुलसीदास.

स्तुति करते हुए वे गंगा को भागीरथी तथा मुनि रूपी चकोरों के लिए चन्द्रवत स्वीकार करते हुए नर, नाग, और देवताओं द्वारा वंदित जह्नु-तनया मानते हैं। वे गंगा का प्रादुर्भाव विष्णु के चरण कमल से मानते हैं। भगवान शंकर अपने शीश पर इन्हें धारण करते हैं। यह पुण्य की राशि और पापों की विनाशिनी है।
तथा :-

"जय-जय भगीरथ नन्दिनि, मुनि चय चकोर-चन्दिनि,
नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु- बालिका ।।
बिस्नु-पद-सरोज जासि ईस - सीस पर बिभासि,
त्रिपथगासि पुन्य रासि पाप - छालिका ।।[10]

मैथिलि कवि विद्यापति ने भी गंगा वाक्यावली लिखकर इस परम्परा के विकास में अपना योग दिया है उदाहरण के लिए निम्नलिखित पंक्ति द्रष्टव्य है :-

"स्वस्त्यस्तु वस्तुहिनरश्मिभृतः प्रसादादेकं वपुः स्थितवतो हरिणा समेत्य।"[11]

इस क्रम में पद्माकर की गंगा-लहरी नामक छन्द में तथा 54 घनाक्षरी हैं। इसमें गंगा का उद्भव, विकास तथा उसकी महिमा का काव्यात्मक शैली में निरूपण किया गया है। गंगा उद्भव को कवि ने कितने सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है। यथा :-

"दई ती विरंचि भई बामन पगन पर,
फैली फैल फिरी ईश शीश पै सुगति की।

---

10. विनय पत्रिका, गोस्वामी तुलसीदास.
11. गंगावाक्यावली, विद्यापति.
12. गंगालहरी, पद्माकर, छन्द 2.

आइ कै जहान जहु जंघा लपटाई फिरी,

दीमन के दीन्हें दौरि कीन्हें तीन पथ की ।

कहे पद्माकर सु गहिमा कहाँ लौं कहैं,

गंगा नाम पायो सही सबके अरथ की ।

चारयो फल फली फूली गह गही वह गही,

लह लही कीरति लता है भगीरथ की ।।"

इसके उपरान्त हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि जगन्नाथ दास रत्नाकर जी ने दो काव्य पुष्प-"गंगा लहरी" तथा "गंगावतरण" नाम से माँ भारती के चरणों में समर्पित की । गंगा लहरी मुक्तक काव्य परम्परा में परिगणित किया जाता है । पौराणिक परिवेश में इन्होंने कितना सुन्दर निरूपण किया है भगवती भागीरथी का :-

"संभु की जटा तैं कढ़ि, चन्द की छटा सी फैली,

हिम के घटा पै प्रभा-पुंजनि पसारै है ।

कहै रतनाकर तिमिष्ट वहँधा तैं पुनि,

छोटे-बड़े सोतनि के गोत सै दरारै हैं ।।

मिलि मिलि सोतनि तैं धारें बहु वेगि बनैं,

धार है अपार धुनि घोर शोर पारै हैं ।।

सगर-कुमारनि के तारन कौं धावा किए,

मानहु भगीरथ कौ पुन्य ललकारै है ।।"[13]

सुप्रसिद्ध खण्ड काव्य गंगावतरण में विस्तृत रूप से आपने गंगा की महिमा का बखान किया है । यह 13 सर्गों में लिखी गयी एक सफल काव्य कृति है । यह ब्रजभाषा में लिखी गयी है । इसका रचना काल सं0 1921-23 है । प्रारम्भ मंगला चरण से है । इसका प्रारम्भ रोला

13. गंगालहरी, जगन्नाथदास रत्नाकर, पद 8.

छन्द एवं अन्त उल्लाला छन्द में है, समाप्ति तिथि दोहा में है ।
यथा :-

"निकसि कमण्डल ते उमगि नभ मण्डल खण्डति ।
धाई धार अपार वेग सों वायु विहण्डति ।।"[14]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी गंगा महिमा के वर्णन को अपने काव्य का विषय बनाकर सुन्दर एवं मनोहारी उद्भावनाएँ की हैं । गंगा की महिमा का दिग्दर्शन कराते हुए वे कहते हैं कि यह स्वर्ग का सोपान तथा त्रिविध ताप नाश करने वाली है और यह भगवान विष्णु के चरण कमलों से समुद्भूत है । यथा :-

"श्री हरि पद नख चन्द्रकांत मनि-द्रवित सुधारस,
ब्रह्म-कमंडल मंडन भव खंडन सुर-सरबस ।।
शिव-सिर मालति-माल भगीरथ-नृपति पुन्य फल,
ऐरावत-गज गिरि-पति-हिम-नग-कंठहार कल।।
सुंदरि ससि मुख नीर मध्य इमि सुन्दर सोहत,
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत ।।
दीठि जहीं जहं जात रहत तितही ठहराई,
गंगा छवि हरिचंद कछू बरनी नहिं जाई ।।
× × × × × × × × ×
सुभग-स्वर्ग-सोपान-सरित सबके मन भावत ।
दरसन-मज्जन-पान त्रिविध-भय दूर मिटावत।।[15]

इस काव्य-धारा के विकास में नागर जी का अप्रतिम योगदान है । इन्होंने "गंगा गुण मंजरी"[16] नामक खण्ड काव्य लिखकर भगवती

14. गंगावतरण, जगन्नाथदास,रत्नाकर, सप्तम सर्ग, छन्द 16.
15. गंगावर्णन, भारतेन्दु हरिश्चन्द.
16. गंगागुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 21.

भागीरथी के सुयश का विस्तार किया है । इस प्रकार स्तुति परक काव्यों में प्रस्तुत कृति का विशेष योग दान है । यह परम्परा आधुनिक युग में भी विकसित हुई है । आधुनिक युग के विभिन्न कवियों ने मुक्तक रूप में गंगा के सुयश का काव्यात्मक शैली में वर्णन कियाहै । यथा-

"मान सनमानन सै बैठ है बिमानन मैं,
पायन तैं पदवी पुरन्दर की ठेल है ।
हूहै देवतान की समान मैं महानभाय,
आन अम्बुजासन की आसन पछेल है ।।
काली कवि ऐसे पद पाय है विशेष जोपै,
गंग तोर एक रेणुका कौं सुख मेल है ।
पापन की पेल है पहेल है सरापन कौं,
आनद सकेल है रमा की गोद खेल है ।।

× × × × ×

ऐसौं इक पातकी बडौ तौ ब्रह्म घातकी,
न सेवा पितु मात की बिवादन बिरत है ।
कोपन कपोतौं छल छापन छयौ तौ तीन,
तापन तयौ तौ रहो पापन घिरत है ।।
काली कवि ता नै गंग तेरौ जलपान कियौ,
तातै पद एतै पाय देवन फिरत है ।
ताहि इन्द्र राडत की साइत सुधाइवे कौं,
वपुरो बिरंचित आज पकरौ फिरत है ।।[17]

× × × × ×

संग सुख सैजन मै मैन की मजेजन मैं,
कामानन के जनै कौतिक किला गये ।
अम्बु अलि बेलिन मै नागरी न बेलिन मैं,
कुंज कलि केलिन मैं खेलन खिला गये ।।

---

17. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 30.

काली कबि कासमीर कदम कलेलन मैं,
हेलन हिलाय फेर मेलन मिला गये ।
परम उमंगन मै राखे पौष अंगन मैं,
गंग तरंगन मैं पातक खिलागये ।।[18]

8.2 वर्ण्य वस्तु :-

यह काली कवि द्वारा प्रणीत तीसरी प्रकाशित कृति है । इसका प्रारम्भ निम्नलिखित दोहे से होता है -

हरन तीनहूँ तापकी, करन दोष दुख भंग ।
कलि के कलुष नसावनी, विश्व पावनी गंग ।।"

इसके अतिरिक्त इसमें 58 घनाक्षरियाँ संग्रहीत है । अन्त में फिर एक दोहा दिया गया है । इस प्रकार समूची कृति में दो दोहा और 58 कवित्त है' ।

कवि ने इस कृति में गंगा की महिमा का वर्णन किया है । वे गंगा को समस्त दोष भंग करने वाली, कलिकलुष नष्ट करने वाली, त्रिताप हरने वाली तथा समूचे विश्व को पुनीत करने वाली मानते हैं।

गंगा के स्वरूप का वर्णन अलंकारिक शैली में किया गया है। यथा :-

"मुकता के पुंज्जन तैं मुकत अंभग भई,
अवली मतंगन की भ्रंग भहरैनी है।
काली कवि तुंगन तरंगन के संगतरी,
मृगमद रंगन कुरंगन की सैनी है ।।

18. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 88.

कोमल से करन गनीले मंज्जु कंगन तैं,
तौं लगौ भुजंगनहूं पार कियो बैनी है।।
जौलौं जलपात तैं दिखात जात गोरेगात,
हाथ दै उरोजन नहात मृगनैनी है ।।[19]

गंगा महिमा का वर्णन करता हुआ कवि लिखता है कि जिसने गंगा में स्नान कर लिया, वह ससम्मान विमानों में बिराजकर इन्द्रासन को तुच्छ समझकर पुण्य लोक को प्राप्त करता है । वह विधाता से बढ़कर हो जाता है, जिसने गंगा के तीर चलकर उसकी रज अपने शरीर पर लगायी । वह सहज रूप में ही पवित्र हो जाता है । गंगा रज में इतना प्रताप है कि वह समस्त पापों और श्रापों को समाप्त कर सकती है । यथा -

"काली कवि औसे पद पाय है विशेष जोपै,
गंग तीर एक रेणुका कौं मुख मेल है ।
पापन की पेल है पहेल है सरापन कौं,
आनद सकेल है रमा की गोद खेल है ।।"

पतित उद्धारिणी गंगा के तट पर देह त्यागने की महिमा का वर्णन करते हुये नागर जी ने एक सुन्दर अन्तरकथा गढ़ी है । किन्हीं चार पापियों ने गंगा तट पर प्राण त्यागे । उनमें से छण मात्र में ही एक को इन्द्र पद प्राप्त हो गया, दूसरा शम्भू बन गया, तीसरा विष्णु बना और चौथा स्वयं विधाता बन बैठा । इसको देखकर के और तेरी महान महिमा को समझकर बेचरा इन्द्र भ्रमित हो गया है तथा चतुरानन चौंक करके इधर-उधर देखने लगा । यथा :-

---

19. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या, 7.

"कोउ चार पापी महा गंग तट त्यागे प्राण,
लागी ना बिलम्ब एक इन्द्र पद ले रहौ ।
एक भयौ शम्भु एक आन अम्बुआई भयो,
एक ब्रह्म आसन पर आनन्द हितौ रहौ ।।
काली कबि देख यह महिमा महान तेरी ।
भूल भ्रम भारौ इन्द्र शम्भु हर है रहौ ।।
चोर सौ चपोसा चुपकौसौ चिमकाई साध,
चौंक चक्वानौ चतुरानन चितै रहौ ।। [20]

सत्ताईस,[21] अट्ठाइस,[22] उन्तीस[23] एवं तीसवें[24] कवित्त में कवि ने बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है । इसमें उनकी आपनी मौलिक सूझ के दर्शन होते है ।

पतित पावनी गंगा जिस दिन से स्वर्ग लोक छोड़कर इस बसुन्धरा पर अवतीर्ण हुई । उस दिन से बेचारे चित्रगुप्त शोक संतप्त हैं । उनका दफ्तर सूना पड़ा हुआ है । तख्त खाली है । उनकी बैठक भयप्रद लग रही है क्योंकि गंगा की पावनता के कारण धरती के सारे पापी पतित होकर तर गए है । न कोई अधम बचा, न कोई सुरापायी । बेचारे यमदूत भी मारे-मारे यमराज के द्वारे यतस्ततः फिर रहे हैं, उन्हें कोई काम ही नहीं रहा गया है । गंगा की पावनता का यह कैसा अनूठा और अनुपम प्रताप है । यथा :-

---

20. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 26.

21. परौ एक पापी शव दुयर धरा की संधि,
जाके बन्द बन्द निन्द गंध बगरत है ।
काली कवि छैंव डारौ गंग तीर ताहि,
पाये दिव्य अंग जे अनंग निदरत है ।।
आये विज लोकन लिवाइवे कौ बाहन है,
कर पद बेचा गहि-गहि झगरत है ।।

घर-घर शुजान आन देव समुझावैं तऊँ,
हर हर विरंचि आज लर-लर परत है।।

गंगा गुण मंजरी, द्वि०सं० पृ०-15.

22. "गंग नीर तेरे जिन कीन्हें जलपान तेतौ,
पापिन के वृन्द इन्द्र आसन रचे फिरै ।
एकन से एक एक एकन तैं रार करै,
लैबे कह राज जौम जोरन जये फिरै ।।
कालीकवि ऐसे पति अमित अनेक सुन,
सुनकै सर्वा के लोल लोचन लयें फिरै ।।
बगरे विमानन मैं सिगरे सुरेश आज,
नगरे पुरन्दर के बगरे भये फिरैं ।।"

गंगा गंण मंजरी, द्वि०सं० पृष्ठ 14.

23. औसो इक पातकी बड़ौतो ब्रह्म घातकी,
न सेवा पितु मातकी विवादन विरत हैं ।
कोपन कपोतो छल छापन छपौती तीन,
तापन तपौ तौ रहौ पापन पिरत है ।।
काली कवि तानै गंग तेरौ जलपान कियौ,
ताते पद ऐसे पाय देवन धिरत है ।।
ताहि इन्द्र राइत की साइत सुधाइवे कौं,
सुपुरी विरंचि आज मकरौ फिरत हैं ।।

गंगा गुण मंजरी, द्वि० सं०, पृष्ठ 15.

24. धेनु द्विज घातकी सुधरम सुघात की,
तापातकी की कोउ गति कैसे के बरन है ।
कालीकवि एहे रिधि जन्हु तन जाता तिहि,
तेरौ पयपान कियो पातक हरन है ।।
ईस सीस दाबें उमा बीजरी डुलावैं,
उरकन्त कमला कौ सहरावत करन है ।।
चाँप चाँप युगलान चारहु भुजान गहि,
चतुर चतुरानन सुचापत चरन है ।।

गंगा गुण मंजरी, द्वि०सं० पृष्ठ 15.

"जा दिन तैं जक्त गंग तरल तरंग आई,
ता दिन तैं शोक चित्रगुप्त हू विचारे मैं ।
सूनै डरै तखतन पर दफ्तर बिछूनै डरै ।
बैठका बिहूने डरै भौन बिनतारे मैं ।।
काली कवि पापिन सुरापिन के नाउ येक,
रोमहूँ न ढूढे मिलै नर्कन के नारे मैं ।।
रंक से बिचारे जमदूत फिरैं मारे उर,
शंक से बिआत जमराज के दुआरे मैं ।।"[25]

जो लोभ मोह आदि के फन्दे में फंसे हुए हैं, काम क्रोध के घेरे हैं, जिनमें एक भी गुण विद्यमान नहीं है, जो सदैव वेदों की निन्दा करते रहते हैं, ऐसों का उद्धार करने में गंगा माँ सकुचती नहीं है । कवि के अनुसार तो जिन्हें नर्क में भी ठौर उन्हें भी पुन्य सलिला भागीरथी अपनी शीतल गोद में लेकर परम शान्ति प्रदान करती है । यथा —

"काली कवि ऐसे अप कीरति करैयन की,
ऊँच नीच ताई हूँ न मन मै विचारतीं ।।
साज है न और धरैं पापन के मौर जिनै,
नर्क हूँ न ठौर तिन्है गंगा तुम तारती ।।[26]

गंगा का उद्भव का वर्णन करते हुए कवि ने ऐसी कल्पना की है कि जिस दिन से आपने विधाता के कमण्डल में निवास किया है उसी दिन से सारा संसार पुनीत हो गया । भगवान शंकर ने विष-पान की जलन को शान्त करने के लिए अपने मस्तक पर धारण किया । इस प्रकार आपकी कीर्ति दिनानुदिन बढ़ती चली गयी ।

---

25. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 38.
26. ,, ,, छन्द संख्या 48, द्वि0सं0 पृष्ठ 24.

आपने विष्णु चरणों से प्रवाह रूप में जन्म लेकर उनको भी पूजा के योग्य बना दिया है । इस प्रकार यत्र-तत्र सर्वत्र हे गंगा तेरी ही महिमा फैल रही है । भला आपके सुयश का वर्णन कौन कर सकता है? यथा :-

"विधि के कमंडल निवास कियौ जा दिन तै,
ता दिन तै हो गयौ बिरंचि विश्व कारी है।
काली कवि भक्त युक्त ईश सीस धारी तोहि,
जगती में जगती सी कीरति निहारी है ।।
चरन सरोज तै प्रवाह कियौ तातै कहूँ,
सीस तौन पूजौ पग पूजत मुरारी है ।।
ऐसे जस जगत अनेक हो कहाँ लौ कहौं,
जहाँ देखौ तहाँ गंग महिमा तिहारी है ।"[27]

अन्त में अपनी अभिलाषा का वर्णन करता हुआ कवि याचना करता है कि गंगा महारानी मुझे अपने तट वर्त्तीय निकुंज की लता बना दें अथवा तट पर स्थित वृक्ष बना दें जो आपके जल बिन्दुओं से सदैव अभिसिंचित होता रहे । मेरा शरीर भले ही कृश हो जाय पर मुझसे कभी अपना तट न छुड़ाना । आपके पुनीत तट पर पर्ण कुटी में निवास कर मैं महान आनन्द का अनुभव करूँगा । यदि यह सम्भव न हो तो हे पुत्र वत्सला देवी मुझे चक्रवाक अथवा बलाक अथवा वारिज अथवा शैवाल अथवा मदक प्रसून ही बना दें । यदि यह भी सम्भव न हो तो मुझे अगाध जल में निवास करने वाली मीन ही बना दें और यह भी सम्भव न हो तो माँ कृपा करके मुझे अपने तीर का पाषाण तो बना ही दें । यथा:-

---

27. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 96 द्वि०सं०पृ० 28.

" ~~चित्रित=के=कमंडल=निवास=किवाई~~

"कीजे कच्छ कुंजन की गुलम लताकौं,
तरू तुखित निवैया जल प्रभ्त समीर कौं ।
काली कवि कुशित शरीर पुनि कीजै,
अति निकट बसैया च न परण कुटीर कौं ।।
कीजे चक्र बाक के बलाक वर वारिज कै,
सरद सिवार गुल गंदक गंभीर कौं ।।
अधिक अधीर नीर नित कौं पिवैया कै,
कीजै मोहि मैया बिज पाहन प्रतीर कौं ।।"[28]

8.3 भाव सौन्दर्य :-

समूची कृति में भक्ति रस की धारा का प्रबल प्रवाह दृष्टव्य है । यत्र-तत्र-श्रृंगार, शान्त आदि रसों की फुहार भली सी प्रतीत होती है । कवि की भावानुभूति अत्यन्त मार्मिक एवं मधुर है । सुर बालाओं के स्नान की कैसी मनोरम झाँकी कवि ने प्रस्तुत की है । देखते ही बनती है । आइये, संधःस्नाता-सौन्दर्य की छटा का अवलोकन करते चलें । यथा-

"चपला की चेलीं सीं काम कीं सहेली सीं,
अति अलबेली है गतिन मराला सी ।।
चन्द्रसीं चमेली सीं चामीकर बेली सीं,
निपट नबेली जे जौं जोत जालासीं ।।
काली कवि आलासी चंपक रसालाकी,
नीरन अन्हाती गंग तीरन विसालासीं।।
देवन की बाला फिरैं फूली फूल मालासीं,
मालासीं महव गुलाब गुल्लाला सीं ।।"[29]

---

28. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त, छन्द संख्या 58 पृष्ठ 29 द्वि0सं0
29. ,, ,, ,, पृष्ठ 2 द्विसं0.

एक और सुन्दर भाव चित्र देखिये :-

"कोमल से करन मनीले मंजु कंगन तैं,
तो लगै भुजंगनहूं पार कियो ैनी है।।
जो जौ जलपात मैं दिखात जात गोरे गात,
हाथ दै उरोजन महान मृगनैनी है ।।"

कला कौशल :-

§1§ शब्द योजना

विषय के अनुरूप शब्द चयन करने में नागर जी अत्यन्त निपुण हैं । ऐसा लगता है मानो भाषा उनके भावों की अनुगामिनी हो । वीर-रस के अवतरण में भाषा स्वतः टवर्ग से युक्त तथा ओजमयी हो जाती है तो श्रृंगाररस के वियोग वर्णन में भाषा का मार्दव रूप पाठक के मन को बलात् आकर्षित कर लेता है । शान्त रस के वर्णन में भाषा का प्रवाह इतना संयत और शब्द-चयन इतना सुन्दर होता है, लगता है जैसे भावों के अगाध सिन्धु में शब्दों के हंस मन्द-मन्द गति से संतरण कर रहे हो । गम्भीर भावों की अनुभूति में शब्द विन्यास में जहाँ गाम्भीर्य है वहाँ दूसरी ओर काव्य के कला के उद्घाटन में भाषा स्वतः ही कलात्मकता की ओर उन्मुख हो जाती है ।"[30]

शब्द बिन्यास और भाषागत सौन्दर्य के कतिपय चित्र देखिये :-

30. कासी कवि, लेखक प्रो० रामस्वरूप खरे का लेखांश.

वीर रस :-

"भ्रमत फिरैगो देख निर्झर दरीन बीच,
पथि सकरीन बीच शिशिर उतंग मैं ।
वन्य फल खैहैरे अथन्य मरजैहै कहूँ ,
सैहै कवि काली शीत आतप सुअंग मैं।।
समय न पैहै फेर तकत कहा है अब,
कूंद परस पद कंलगी मार गंग मैं ।।
छांडगिर कन्दर वनिन्दर गुहान आन,
खेलत न बन्दर पुरन्दर उछंग मैं ।।"[31]

× × × ×

छूटी ब्रह्म भाजन तैं जब अविलंब अम्ब,
सुन कै धुकार धुनि अचल सचलते ।।
कठिन कुलाहल हलाहल परो तो भूमि जीव,
जल थल के सब अखल खलल ते ।।
काली कवि ताही समै जूटन जटा हलाइ,
गंग के प्रवाह भूत नाह जो न झिलते ।।
छोनी के छांह के न कैहूँ नाग नाह के,
न कच्छप बराह के सु टूटै हाड़ मिलते ।।"[32]

शान्तरस :-

"कीजे कच्छ कुंजन की गुलम लताओं,
तरू सुखित लिवैया जल प्रपत समीर कों ।
काली कवि कवित शरीर मुनि कीजें,
अति निकट बसैया च न परण कुटीर कों ।।

---

31. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द 21, पृ० 11 द्वि०सं०.
32. " " छन्द 32, पृ० 16 द्वि०सं०.

कीजै चक्र वा॰ कै बलाक वर वारिज कै,
सरद सिंगार गुल मदक गंभीर कौ ।।
अधिक अधीर नीर नित कौ पियैया है,
कीजै मोहि मैया निज पाहन प्रतीर कौ।।[33]

मृदु :-

"छहरै छरौली छाम किरनै कलानिधि कीं ।

× × × × ×

चपला कीं चेलीं सीं काम कीं सहेलीं सीं,
अति अलबेलीं है गति न मराला सीं ।।
चन्द्रसीं चमेली सीं चामीकर बेली सीं,
निपट नवेलीं जे ज्यौं जोत जाला सीं।।
काली कलिं आलासी चपक रसाला सीं,
नीरन अन्हाती गंग तीरन विसाला सीं ।।[34]

× × × × ×

जौं लौं जलपात मैं दिखात जात गोरे गात,
हाथ दै उरोजन नहात मृगनैनी है ।।[35]

× × × × ×

अैन मैन चैन न चैन सुख सेजे मैं ।।[36]

× × × ×

डर-डर दूर तैं तिहारी गंग धारा धुन,
घर-घर सुनैतै पाप घर-घर कपत हैं ।।[37]

---

33. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 58, पृ0-29 द्वि0सं0.
34. ,, ,, ,, 4 पृ0-2 ,, ,
35. ,, ,, ,, 6 पृ0-3 ,, ,
36. ,, ,, ,, 34 पृ0-17 ,, ,
37. ,, ,, ,, 43 पृ0-22 ,, ,

"ब्रज की सुवासी सुरतारक की सारकता,
चंद्रताई चंद्रका की चारु चमकार सी ।
मारतंड ताकी मार कला फकूर सी,
अरुण अभीसताई राउ के ज्ञार सी ।।[38]

सन्तरण करने के निम्न उदाहरण द्रष्टव्य है :-

"यह गंगा गुण मंजरी, काम कल्प कौ कन्द ।
कवि कुल मन मधुकरन कौं, भरी मोदमकरन्द।।[39]

8.4 अलंकार योजना :-

प्रस्तुत पुस्तिका में अलंकारों की झाँकी झाँकी दृष्टिगोचर होती है । कहीं कहीं तो अलंकार सहज रूप में व्यक्त हुए है और कहीं उन्होंनें कलात्मक पक्ष को उभारने के लिए अपना योग दिया है। यथा :-

उपमा :-

"मौतिन की मालसौ मरालसौ मुनी मनसौ,
सुन्दर मनीसौ मालती के मंजु सुदसौ, ।
काली कवि शारद सुधासौ शारदासौ सुद्ध,
शिवसौ शिवासौ सुत संदल समुदसौ ।।
जाग जगती पै रहौ जान्हवी तुम्हारौ जस,
अमल अबीर छीर फेन बुद बुदसौ ।
कन्दसौ कालिन्दी की कलीसौ कंज,
कंदल सौ कम्बुसौ कुमोदिन सौ कुन्दसौ कुमुदसौ ।।"[40]

38. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 54, पृष्ठ 27 वि0सं0.
39. .. .. .. 59, पृष्ठ 30 .. .
40. .. .. .. 1 पृष्ठ 1 .. .

× × × × ×

"चपला कीं चेलीं सीं जाम कीं सहेली सीं,
अति अलबेली है गतिन मराला सीं ।
चन्द्रसीं चमेली सीं चामीकर बेला सीं,
निपट नवेली जे कीं जोत जाला सीं ।।
काली कवि आलासी चंपक रसाला सीं,
नीरन अन्हातीं गंग तारन विसालासीं ।
देवन की बाला फिरैं फूली फूल मालासीं,
गालीसीं गहब गुलाब गुल्लाला सीं ।।[41]

डाँकत सी झूठ मन नाखत सी मूढताई,
काँखत कुकर्म चरम चुगली चबात सी ।
रोवत से रोख दोष दसन दिखोवत से,
सोवत से शोक पाप पंगत पिरात सी ।
काली कवि गंग पय पैठतहीं आज भाज,
बैठी दूर बध की बरात पछितात सीं ।
तापत सी ताप ताप तापत सी आप रही,
कांपत सी आपदा अघात अकुलात सी ।।[42]

अतिशयोक्ति :-

"मुदित मनोज मणि मुकुर सिताब लीन्है,
अतर गुलाब आब अमर अमान लै ।
काली कवि तैसरी न जाक गिजान सज,
फिरत सुरेशहू सुराहिन सुरान लै, ।।
गंग तुव दासन कीं कनक छरीसी खरी,
रहत पुरन्दरी परी हू पीकदान लै ।।

---

41. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 4 पृ0 2 द्वि0सं0.
42. ,, ,, ,, 5 2पृ0 26 द्वि0सं0.

चौरी लिये चन्द औ गुबिन्द हू गिलौरी लियैं,
मौरी लिए महादेव गौरी गजरान लै ।।[43]

× × × × ×

उतर सिंहासन तैं संग पथ गामी के,
पद की धराई रज इन्द्र अलकन तै ।।[44]

अनुप्रास :-

"कन्दसौ कालिन्दी की कलीसौ कंज,
कंदलसौ कम्बुसौ कुमोदिनसौ कुन्दसौ कुमुदसौ ।।[45]

× × × × ×

छारा छार छींटन के छातिन छरा के लेत,
छोरन छराके लेत बचन करारा के ।।[46]

रूपक :-

"विषय बयार तैं करार तैं कृतघ्नताई ।[47]

× × × × ×

चरन सरोज तै प्रवाह कियौ तातै कहूँ ।"[48]

बीप्सा अलंकार :-

"चाबुक चलाकन कुबाकन कौं माख 2,
हाँक-हाँक राहन मैं प्रभुता जनाय है।।[49]

---

43. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 23 पृ0-12.
44. ,, ,, ,, 24 पृ0-12.
45. ,, ,, ,, 2 पृ0- 1.
46. ,, ,, ,, 3 पृ0-2.
47. ,, ,, ,, 53, पृ0-27.
48. ,, ,, ,, 56 पृ0-28.
49. ,, ,, ,, 16 पृ0-8.

सांग रूपक :-

"केहरि गिरासी सुन सूखत गयन्द जैसे,
सुन के पहल्वा धुन चौर से चपत है ।
दीरघ दराज पछराज की अवाज सुन,
फिरत लवा से ठौर ठौरन छपता है।।
काली कवि चौक 2 उठत कुरंग जैसे ।
लौट 2 भागत न राहन रुपत हैं ।।
डर 2 दूर तैं तिहारी गंग धारा धुन,
धर 2 सुनै तैं पाप धार 2 कपत हैं ।।"[50]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है इसमें प्रमुखतः उपमा एवं अतिशयोक्ति की है ।

व्यंग्योक्ति का भी कवि ने सुन्दर निरूपण किया है । यथा-

"सूनौ निज लोक देख गंग महिमाई पेख,
उर मै विशेष सेख तेह की प्रजारी है ।।
गंगाधर जूपै गयौ गंग की फिरादै ,
महादेव की सभा मै लगौ बोलन गमारी है ।।
काली कबि कौन रे कहा कों इत आयौं कहाँ,
हाथ लै भगौठा उठे रूद्रगण गारी है ।
जैसों जमराज कौ निरादर निहार हँसे,
देत सब तारी है अदेत किलकारी है ।।"[51]

छन्द योजना :-

इसमें केवल घनाक्षरी और दोहा नामक छन्द प्रयुक्त किया गया है । इस कृति का प्रारम्भ और अन्त दोहा से किया गया है, इस

50. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 43 पृ0 22 हि0सं0.
51. ,, ,, ,, 38 पृ0 19 हि0सं0.

प्रकार इसमें कुल दो दोहे और 58 घनाक्षरी है । इनकी घनाक्षरी छन्द शास्त्र सम्मत और उच्च कोटि की बन पड़ी है ।

चित्र योजना एवं बिम्ब योजना :-

समूची कृति देखने से ऐसा लगता है कि कवि चित्र और बिम्ब उतारने में अत्यन्त कुशल है । इनके कुछ वर्णन तो ऐसे सजीव है मानों उनका प्रत्यक्ष दर्शन और अनुभव कवि ने स्वयं किया हो । कतिपय उदाहरण देखिये :-

"छहरैं छरौलीं छाम किरनै कलानिधि कीं,
कहरै करैं वे और भहरैं भरीं उमंग ।
फहरैं फनीलि नाग जहरी जटालौं घोर ।।
घहरै घटा लौं लैहि लहरैं तिहारी गंग ।। [52]

× × × ×

शंकर जटान तैं छटान छू छपाकर कीं,
उचट चटान पै परै ते कुञ्ज परा के ।
तारा से तिरकत रारा लै हजारा फुल,
द्वारा बाँधि छूटत फुहारा राग धारा के ।।-[53]

× × × ×

काली कवि आलासी चंपक रसाला सीं,
तीरन अन्हाती गंगतीरन विसाला सीं ।
देवन की बाला फिरैं फूलीं फूल मालासीं,
गालासीं महब गुलाब गुल्लाला सीं ।।-[54]

× × × ×

देप दुलहीन के अमोल कुच मंडल पर,
करहि कलोल लोल लहरैं तिहारी वै ।।-[55]

---

52. वही, छन्द 2. 53. वही, छन्द 3.

54. वही, छन्द 4. 55. वही, छन्द 5.

"जौ लौं जलपात मैं दिखात जात गोरे गात,
हाथ दै उरोजन नहात मृगनैनी है ।।"[56]

× × × ×

भौंहैं भामिनी की कामकर की कमानै भई,
तानै भई मधुर अलानै कोकलान के ।।"[57]

× × × ×

"पेखबे कौं प्रेम पद पंकज परेखबे कौं,
देखने की कीं ललना ललाती है ।।"[58]

× × × × ×

"छांड गिर कन्दर बनिन्दर गुहान आन,
खेलत न बन्दर प्रुरन्दर उछंग मैं ।।"[59]

× × × × ×

"आये चिज लोकन लिवाइवे को वाहन लै,
कर पद केवा गहि गहि झगरत है ।।"
घर घर भुजान आन देव समझावैं तऊं,
हर हर विरंचि आज लर लर परत हैं ।।"[60]

× × × × ×

"छूटी ब्रह्म भाजन तै जब अविलंब अम्ब,
सुन कै धुकान्धुनि अचल सचलते ।
कठिन कुलाहल हलाहल परौ तौ भूमि जीव,
जल थल के सब अखल बलते ।।"[61]

× × × ×

---

56. अंगगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्दांश 6.
57. ,, ,, ,, 7.
58. ,, ,, ,, 11.
59. ,, ,, ,, 21.
60. ,, ,, ,, 27.
61. ,, ,, ,, 32.

"काली कवि तांडव बनाइकै विचित्र,
चित्रगुप्त हू बिचारे को दिखात रूख रूखौसौं ।
पूरवा सौ सोच मैं बिछुओं सौ बिराजे,
सब दूखा सौं समाज जमराज मुख सूखौसौं ।।"[62]

× × × × ×

"हार हीर हीरन पै दैहि चोर चोरन पै,
गंगा तीर तीरन पै भीरन भरी हती ।।"[63]

× × × × ×

"काली कवि पापिन सुरापन के नाउ पेक,
रोगहूं न छूटै किल क्र नर्कन के नारे मैं ।।"[64]
रंक से बिचारे जमदूत फिरै मारे उर,
अंक से बिआत जमराज के दुआरे मैं ।।[64]

× × × × ×

"काली कवि गंग पय पैठतहीं आज भाज,
बैठी दूर वध की बरात पछितात सी ।।"
तापत सी ताप ताप तापत सी ताप रहीं,
कांपत सी आपत अथात अकुलात सी ।।"[65]

× × × × ×

"केहरि गिरासी सुन सूखत गयन्द जैसे,
सुबके पहल्वा धुन चोर से चपत है ।
दीरघ दराज पखराज की अवाज सुन,
फिरत लबासे ठोर ठोरन छपत है ।।

---

62. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्दाशं 21.
63. ,, ,, ,, 37.
64. ,, ,, ,, 52.
65. ,, ,, ,, 52.

"काली कवि चौंक चौंक उठत कुरंग जैसे,
लौट लौट भागत न राहन लपत है ।
डर डर दूर तैं तिहारी गंग धारा धुन,
धर धर धुनतैं पाप धर धर कपत है ।।"[66]

8.5 तुलना :-

समान कृतियों की तुलना ही उपयुक्त एवं विशिष्ट तुलना कहलाती है । वैसे हिन्दी के भिन्न-भिन्न कवियों ने गंगा के सुयश का वर्णन किया है । नागर जी की "गंगा-गुण-मंजरी" और पद्माकर की "गंगा लहरी" घनाक्षरी में लिखी गयी तुलना के लिए श्रेष्ठ कृतियाँ है । इनमें भाषा-सौन्दर्य, भाव-चित्र, तथा अलंकारिक -वर्णन-प्रायः एकसा हुआ हैं । दोनों कवियों ने पैराणिक परिवेश को अपनाने का प्रयत्न किया है । सम्पुष्टि के लिए कतिपय उद्धरण दृष्टव्य है :-

"गंगा तुव दासन कौं कनक छरीबी करी,
रहत पुरन्दरी परी हू पीकदान लै ।
चौरी लिये चन्द औ गुबिन्द हू गिलौरी लियै,
मौरी लिए महादेव गौरी गजरान लै ।।[67]

× × × × ×

सारपि गुर्विद दीप दान वारे,
भानु होत पंखा वारे, पाक शासन से सुर हैं,
खौर वारे वरून तमोर बारे तारापति,
चौर वारे चारू चतुरानन चतुर है ।।[68]

---

66. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 43.
68. .. .. .. 23.
68. गंगा लहरी , पदमाकर |, ..

"काली कवि सावहू बनाइकै विचित्र,
चित्रगुप्त हू विचारै कौं दिखात स्त्रु स्त्रौतौ ।
पूछौ सौ सोच मै विछुरौ सौं विराजै,
सब दूखौ सौं समाज जगराज सुख सूखौतौ ।।[69]

× × × × ×

"जकि से रहे हैं जम, थकि से रहे हैं दूत,
दूनी दूनी पापन के उठि तन ताप है ।।
बाँचि बही बाकी गति देख कें, विचित्र रहे ।
चित्र के से लिखे चित्रगुप्त चुपचाप है ।।"[70]

× × × × ×

"काली कवि ऐसे अप कीरति करैयम की,
ऊँच नीचताई हूँ न मन मै विचारती ।
लाज है न और धरैं पापन के गार जिनै,
नर्क हूँ न ठौर तिन्हे गंगा तुम तारतीं ।।"[71]

× × × × ×

"सुजन सुधारे करे पुण्य उपचारे अति,
पतित पति तक तारे भव सिन्धु ते उतारे हैं ।
काहू ने न तारे तिन्हे गंगा तुम तारे और,
जे ते तुम तारे ते ते नभ मैं न तारे हैं ।।"[72]

भावात्मक सौन्दर्य तथा चित्रात्मकता का यह सुन्दरतम छन्द द्रष्टव्य है :-

"चपला की चेली सी काम की सहेली सी,
अति अलबेली हैं गतिन मराला सी ।

---

69. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्दांश 33.
70. गंगा लहरी, पद्माकर.
71. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्दांश 40.
72. गंगा लहरी, पद्माकर.

चन्द्रसीं चमेली सीं चामीकर बेली सीं,
निपट नवेली जे ज्यों जोत जाला सी।।
कालीं काम आनासी चंपक रसाला सीं,
नीरन अन्हाती गंग तारन विसाला सीं।
देवन की बाला फिरें फूली फूल आलासीं,
गाला सीं गहब गुलाब गुल्लाला सीं ।।[73]

× × × × ×

गोरे गात तुहात स्वच्छ कल धौत छटीरे,
तिन में चलकरव चम चमात सुन्दर सफरीरे ।
मनु जग जीतन काज साँह सब सबल बनावत,
मीन केतु निज केत मीन शुभ जल विचरावत ।।[74]

× × × × ×

"धोवत सुन्दर बदन करन अति ही छवि पावत,
वारिज नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत ।
सुन्दर ससिमुख नीर मध्य इमि सुन्दर सोहत,
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत ।।[75]

उपमालंकार की एक छटा देखिये :-

चपला कीं चेलीं सीं काम कीं सहेली सीं,
अति अलबेली है गतिन मराला सीं ।
चन्द्रसीं चमेली सीं चामीकर बेली सीं,
निपट नवेली जे ज्यों जोत जाला सीं।।[76]

× × × × ×

---

73. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्द 4.
74. गंगा अवतरण, रत्नाकर.
75. गंगा गुण मंजरी, कालीदत्त नागर, छन्दांश 4.
76. गंगा वर्णन, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र.

छोही सी छली सी छीण लीनी सी छकि सी छीन,
जकी सी टंकी लगी थाकी थहरानी सी ।
बाँधी सी अँधी विष बूड़ी सी विमोहित सी,
बैठी वह बकनि बिलोकत बिकानी सी ।। " 77

× × × × ×

गंगा की महिमा के सम्बन्ध में निम्न लिखित छन्द 78
अवलोकनीय है :-

"विधि के कमंडल निवास कियौ जा दिन तै,
ता दिन तै हो गयौ विरंचि विश्व कारी है ।
काली कवि भक्त धुक्त ईश सीस धारी सोहि ,
जगती में जगती सी कीरति निहारी है ।।
चरन सरोज तै प्रवाह कियौ ता तै कहूँ ,
सीस तौन पूजौ पग पूजत मुरारी है ।
जैसे जस जगत अनेक हौं कहां लौं कहौं ,
जहां देखो तहां गंग महिमा तिहारी है ।।

× × × × × × ×

"निकसि कमण्डल तै उमण्डि नभ मण्डल खण्डति ।
धाई धार अपार बेग सों वायु विहण्डति ।।" 79

× × × × × × ×

" नव उज्ज्वल जल धार हार हीरक सै सोहति ।
बिच 2 छहरत बूँद मध्य मुक्ता मन मोहति ।। " 80
गंगा की भक्ति के सम्बन्ध में निम्न लिखित छन्द द्रष्टव्य
है :-

"काली कवि जैरे अरे पातक हमारे है ।
सागुहौं पर हौं तब सा हसतजत है" ।

---

77. गंगावर्णन , देव ।
78. गंगा गुण मंजरी , काली दत्त नागर, छन्द 56 ।
79. गंगा अवतरण, रत्नाकर ।

लख-2 गंग की धुरंधर धरा नै अब ,
कैसे अकुलानै विललानै ककरा हौं । ।" 81

× × × × × × ×

"मेरे गंग तैने अति गरब गरूरी करी ,
ते अब तिहारी बन 2 कै निकारो गौ ।
आप अपघाती अरे तुनरे कुजाती ,
अब तेरियै कजाकी जे तिहारे गरे पारो गौ ।।
काली कवि साथ चल भाग भत आधे मग ,
गजब गुनाही आज मीड 2 डारौ गौ ।
येरे अघ मेरे दुख दायक घनेरे तोहि,
गंगा की रेत मैं सुरेतरे तम रौंगो ।। " 82

× × × × × × ×

"जैसे तैं न मोसौं कहूँ नैक हूँ न डरात हुतो,
तैसे अब तोसौं मौहूँ नेकहु न डरि हौं ।
कहै पदमाकर-प्रचण्ड जो परेगो तौ,
उमंडि कर तोसौं भुजदण्ड ठोकि लरिहौं ।
चलो चलु चलो चलु बिचलु न बीच ही तें
कीच बीच नीच तो कुटुम्ब को कचरिहौं ।
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहि ,
गंगा की कछार में पछार छार करि हौं ।। " 83

निष्कर्ष :-

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि भाव,

---

81. गंगा गंग मंजरी ,कालीदत्त नागर, छन्द संख्या 44 ।
82. वही, ... छन्द संख्या45 ।
83. गंगालहरी ,पदमाकर ।

भाषा और कलात्मकता की दृष्टि से नागर जी का काव्य निश्चित रूप से उत्कृष्ट कोटि का है । भावात्मक चित्रों में आपकी भाषा मृदुऔर मधुर शब्दों से संयुक्त होकर प्रवहमान होती है तो श्रृंगार वर्णन में श्रुति-सुखद एवं मधुर शब्दों की सृष्टि द्वारा पाठक को बरबश अपनी ओर आकर्षित कर लेती है । वीर रस की अभिव्यंजना में पाठक के मन में ओज की भावना प्रादुर्भूत करने में कवि को निश्चय ही सफलता मिली है ।

नागर जी के पास भावों की अपार रत्नराशि है जिनका दर्शन करने मात्र से ही पाठक उनकी प्रदीप्ति से आलोकित होउठता है । वास्तव में काव्य-गगन के प्रभापूर्ण नक्षत्र हैं ।

भाषा का अध्ययन :-

कवि की भाषा उसके भावों की अभिव्यक्ति का साधन है । भावों की अभिव्यक्ति की आकांक्षा कितनी गहरी होती है,इसे केवल कवि ही समझ सकता है । कवि निरन्तर इस बात का प्रयास करता है कि वह अपनी अनुभूतियों का यथा रूप वर्णन कर सके । वर्णनों को प्रभावशाली तथा मर्मस्पर्शी बनाने के लिये कवि को सशक्त भाषा की आवश्यकता होती है जिसके विनाउसका कवि-कर्म असफल रह जाता है । अतएव यह समझा जा सकता है कि भाषा का कवि केलिये कितना अधिक महत्व है । नागर जी का काव्य कला प्रधान है । कला प्रधना काव्य के लिये भाषा सौष्ठव से बढ़कर दूसरा कोई तत्व नहीं हो सकता । कवि की भाषा में वह सौष्ठव विद्यमान है । जो पाठक के मन को मुग्ध करता है, बुद्धि को उत्तेजना देता है और हृदय को छू लेता है ।

लाक्षणिकता की दृष्टि से नागर जी की भाषा बहुत कुछ प्रौढ़ है । इनकी भाषा पर सूर, बिहारी और पद्माकर जैसेभाषा-

धिकारी कवियों की स्थान स्थान पर दृष्टि गोचर होती है। भाषा के सौन्दर्य को उजागर करने में प्रभावशालिता और शब्द-चयन का विशेष महत्त्व है। कवि की सफलता इसी में है कि वह छोटे से छोटे भाव अभिव्यक्त करने के लिये स्वतन्त्र शब्दों का उपयोग करे। ये शब्द तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी वर्ग से ग्रहण किये जाते हैं और इनका प्रयोग रसों के अनुकूल परुष अथवा कोमल शैली का निर्माण करने के लिये होता है। यथा——

"" अब विभात आए इतै रसिक सिरोमणि राज।
दीपक उत्तारन लगीं सैज संवारन काज ॥
× × × × × × ×
जागत ही यों गुरु निरख तकत रहत एक टांक।
सोवत हू बसि बकि उठत अरि न टांक न टांक ॥" 84

आपके काव्य में भाषा की प्रान्तीयता तथा साहित्यकता दोनों विद्यमान हैं। नागर जी बुन्देल खण्ड में अधिकतर रहे हैं। अतएव उनके काव्य में यत्र-तत्र बुन्देली भाषा के शब्दों का प्रचुर प्रयोग हुआ है। यथा :-

"चित चकचौंधो परे रतन दिरौंधो देख।
× × × × × ×
पहक पिरागन की पिलक भरीं रहीं।
× × × × × × ×
घांघरे हरे के भरे मुकुत गुच्छन से।
× × × × × × ×

---

84. स्फुट दोहे, कालीदत्त नागर, प्रो0 रामस्वरूप खरे के व्यक्तिगत पुस्तकालय से साभार।

ऐसै कहूँ नारिन मिलत मिलत जुगनू जोत ।

× × × × × ×

"डारदई अवसर निरख मणि मुँदरी हनुमान ।" 85

काव्य में अलंकारों का प्रयोग भाव की स्पष्ट अभिव्यंजना के लिये किया जाता है । नागर जी ने उपमा, रूपक, अपहृति, श्लेष, अतिशयोक्ति आदि बहु प्रचलित अलंकारों का सफल प्रयोग अपने मुक्तकों में किया है । अलंकारों की सहायता से उन्होंने अपने काव्य में एक विशेष आकर्षण तथा हृदय ग्राहिता उत्पन्न कर दी है । कवि की अलंकारिक कला का एक सुन्दर उदाहरण अवलोकनीय है । यथा:-

"पुहुप परागन की पगरी परी है छूट,
उधर परे हैं दल दामन किनारे के ।
फहर फबे हैं फल फुंदने मलायन के,
हगन दबे हैं बादल मदन कारे के ।।
काली कवि लाली के समूहन छिके है मग,
झूमत झुके है मद घूमत घुमारे के ।
मन्द मन्द आवत समीरन सुगन्ध अन्ध,
देखौं फल फंद लै बसन्त मतवारे के ।।" 86

ऋतु वर्णन के अन्तर्गत कवि की शब्दावली एक मनोरम संगीतात्मकता उत्पन्न करती है । बसन्त के वैभव का वर्णन कितने

---

85. हनुमत्पताका, कालीदत्त नागर, छन्द संख्या, 77 पृ० सं० 33

86. ऋतु राजीव, कालीदत्त नागर (अप्रकाशित काव्य संकलन से) रामस्वरूप खरे के सौजन्य से प्राप्त ।

सरस ढंग से कवि ने निम्नलिखित छन्द में प्रस्तुत किया है:—

"बोलन ही चाहत है कोकिल कुंजन पै,
अम्बन की औरन पै, भौंरे भिहराने हैं ।
काली कवि फलन ही चाहत पराग रज,
बागन में गुल्लु तमाल नियराने हैं ।
फूलन ही चाहत सरोज का तालन में,
बनिता बितान में मनोज नियराने हैं ।
पान पियराने औ समीर सियराने,
हियराने हिय कंत के कान्त नियराने हैं ।।" 87

× × × × × × ×

उनका यह संदेह अलंकार से परिपूर्ण एक सरस और अलंकारिक कवित्त द्रष्टव्य है:-

" भौरन की श्रृंगी औ जटा है अम्ब मौन के,
गहब गुलाबन की गुदरी गलन्त है ।
काली कवि आस पास आसन पलासन के,
सायरी तमालन की कायरी बसन्त है ।
तूंबी दाड़ मीन औ करीलन की धूनी लगी,
त्रिविध समीरन की सांसन ससंत है ।अंग—अंग — अंग भसम लसन्त है परागन की,
बागन बसन्त है, बसन्त है कि सन्त है ।। " 88

× × × × × × ×

"झूम झूम नाचत सी नाचत अनंग — रंग,
माचत उमंग सुर तालन के पुंन्ज की ।
काली कवि वदत विहंग वर वाणी बीन,
नूपुर नवीन धुनि होत अलि गुंज की ।

---

87. मधु राजीव, कालीदत्तनागर, अप्रकाशित काव्य संकलन से साभार ।
88. वही. " " " " " ।

राज ऋतु राज करत बिहारा वारी,
हारावती [illegible] राज साज सुमन सुमंजु की ।
पद रमिता है कै पतान की पता है कै,
यै धार बांनता है कै लता है वन कुंन्ज की ।। " 89

आपकी भाषा की प्रशंसा करते हुए गौरीशंकर द्विवेदी 'शंकर' ने जो अपने विचार व्यक्त किए हैं निःसन्देह अक्षरशः सत्य हैं । वे लिखते हैः-"कविता सुबोध,सुन्दर और मनोरंजक है । अलंकारों की छटा पदक और शब्दों तथा भावों के सौष्ठव से कविता में चार चांद लग गए हैं । " 90
पाठक कुछ उदाहरणों का रसास्वादन करें:-

" अंगन आय मनोभव की अब ,जाय परेगी पराग के धूलन।
टूक करेजन के करि है यह,कोकिल कूक की हूक की हूलन की।
काली भला उनसे कहिहो अब,आय बसंत गयो वन फूलन ।
सांस उसासन ही कढ़ जायेगी,लाल जरेगी पलास के फूलन।। " 91

× × × × × × × ×

लाल कहाँ री गुलाल कहाँ, और लाल कहाँ अकुलाय लगीहै ।
रंग कहाँ री उमंग कहाँ,इक संग पै [illegible] आय लगी है ।
बीन कहाँ री प्रबीन कहाँ,कवि [illegible] सरवीन रिसाय लगी है ।
बाय लगी बकवाय लगी अब,बाय बसन्त की बाय लगी है ।।" 92

× × × × × × ×

शब्द चित्र उतारने में नागर जी बड़े ही प्रवीण हैं । ग्रीष्म के भीष्म ताप का वर्णन करते हुए वे ऐसे प्रतीत होते है ,

---

89. वही, कालीदत्त नागर, अप्रकाशित काव्य संकलन से साभार ।
90. दैनिक जागरण झाँसी लेख श्री गौरीशंकर द्विवेदी 4 जून1967।।
91. .. ..।
92. .. ..।

मानो बुन्देलखण्ड की भीषण गर्मी का उन्होंने भली प्रकार अनुभव किया था । कैसा यथार्थ और स्वाभाविक चित्रण है यह :-

"चाँदनी के अंक ते कहूँ परयंक ते न,
चन्दन के पंक ते न पंकज गदेली ते ।
नीर के सरीर ते न नीर भीजे चीर ते न ।
शीतल समीर न उसीर की हवेली ते ।
काली कवि आई यह ग्रीषम सराह नाह,
नाहक गहे हो नेह नीरस नवेली से ।
घोर घनसार ते न घटि है घनेरी दाह,
चन्दन से चन्द ते न चम्पक चमेली से ।।" 93

x x x x x x x

"तरसावत तावत अवनि, सवन सुखावत नीर,
हुलसावत आवत बढ़े, पावक दहे समीर ।
वन उपवन ये लतिन के, लखियत निरझर पात,
सूखे सर सरितान ते, पथिक पियासे जात ।
व्याकुल रहे जहाँ तहाँ, कीच बीच सब मीन,
उदासीन कला दिनेश की, अंतरिक्ष आसीन ।
मृग विहंग जंगल फिरत, तपत साँवरी देह,
नर अकुलातिन के भये, गुहा कन्दरा गेह ।।" 94

x x x x x x

"सन्दल को आब दै गुलाब गुल नीरन को,
अतर उसीरन की शीशी ढोरे हैं ।
काली कवि ताते खस कानन के आस पास,
लहर नदी सी उठे कहर झकोरे हैं ।।
डाटी यहुँ ओर ते अंगूरन की टाजी तऊ,
लपट लंगूरन की झपट झकोरैं है ।

---

93. बहु राजीव, कालीदत्त नागर [अप्रकाशित काव्य संकलन से साभार]
94. बहु कालीदत्तनागर [अप्रकाशित काव्य संकलन से साभार]

तखत नदाजिन के, गाजनी हसीनन के,

सीनन ते छूटती पसीनन की धौरें हैं ।। [95]

संक्षेप में नागर जी की भाषा सब प्रकार से साहित्य रचना के अनुकूल है, उसमें सूक्ष्म अभिव्यंजना शक्ति, कलात्मकता, संगठन तथा प्रवाह एक साथ विद्यमान है ।

---

95. वही, कालीदत्त नागर ।(अप्रकाशित काव्य संकलन से)

अप्रकाशित काव्य कृतियाँ

9.1 वर्ण्य वस्तु.

9.2 अनुभूति पक्ष.

9.3 अभिव्यक्ति पक्ष.

9.4. मूल्यांकन.

9.1 क कवि की तीन प्रकाशित कृतियाँ "हनुमत पताका", "गंगा गुण मंजर" एवं "छविरत्नम्" प्रकाशित हो चुकी है थी। जिनका वर्ण्य विषय क्रमशः बल बुद्धि हनुमान के यश का वर्णन, गंगा महात्म्य और श्रृंगार परक नख-शिख वर्णन था।

अप्रकाशित कृतियों में "रितु राजीव, रसिक विनोद कवि कल्पद्रुम तथा स्फुट दोहावली हिन्दी काव्य की शोभा हैं। यह कृतियाँ मैंने परमादरणीय श्री नारायण चतुर्वेदी सम्पादक "सरस्वती" के पास देखी थी। शेष चार कृतियाँ चिदम्बर रहस्य, हनुमत अष्टकम्, उद्दीश तंत्र और गणपति खड्ग माला संस्कृत की कृतियाँ है।

रितु राजीव - यह एक प्राचीन काव्य शैली में लिखी गई विभिन्न ऋतुओं से सम्बन्धित कृति है। इसमें लगभग 51 छन्द थे। जैसा संस्कृत काव्य और तत्पश्चात् रीतिकालीन का य में प्रकृति का ऋतुओं के माध्यम से वर्णन किया गया है, ठीक उसी प्रकार इस कृति में भी अत्यन्त काव्यात्मक एवं भावात्मक शैली में ऋतुवर्णन प्रशंस्य है।[1]

---

1. "पुहुप परागन की पगरी परी है छूट,
   उधर परे हैं दल दावन किनारे के।
   फहर फबे हैं फैल फूँदने गुलाबन के,
   दृगन दबे है मद मदन दुवारे के ।।
   काली कवि काली के समूहन छिके हैं भ्रम,
   झूमत झुके हैं मग घूमत घुमारे के।
   मन्द-मन्द आवत समीरन सुगन्ध आन्ध,
   देखो फल फन्द से वसन्त मतवारे के ।।"

वसन्त सभी ऋतुओं का नरेश है । इसकी छटा तो निराली ही है । जिस प्रकार प्रियतम के शुभागमन पर सारे उपालंभ समाप्त हो जाते हैं और कुछ कहते नहीं बनता जबकि वियोगावस्था में न जाने कितने संकल्प-विकल्प उठकर मनोरम कल्पना किया करते हैं । आगमन की अपेक्षा प्रतीक्षा में कितनी मधुर अनुभूति होती है । वसन्त की निकटता के माध्यम से यह छन्द कैसा सरस, हृदयहारी और चित्ताकर्षक बन पड़ा है ।[2]

न कवि में केवल सरस भावानुभूति विद्यमान है वरन् कलात्मक अभिव्यक्ति भी पदे-पदे परिलक्षित होती है । सन्त एवं आम्रबाग के सांगरूपक[3] से कवि ने कैसा उत्कृष्ट चित्रण प्रस्तुत किया है । छन्दान्त में सन्देहालंकार सरस छटा छिटकाकर पाठकों को विभ्रम में डाल देता है कवि । कोई भी कवि हो उसे अपनी अभिव्यक्ति के लिये अलंकारों का आश्रय लेना ही पड़ता है । भावानुभूति में जब तीव्रता, उत्कण्ठा और उदात्तता होती है तब कलात्मकता स्वयमेव आ जाती है । यह

---

2. "बोलन ही चाहत है कोकिल कदम्बन पै,
अम्बन की झौरन पै भौंर भिहराने हैं ।
काली कवि फैलन ही चाहत पराग रज,
बागन में तुमुल तबाल जियराने हैं ।।
फूलन ही चाहत सरोज बन तालन में,
वनिता वितान में मनोज जियराने हैं।।
पान पियराने औ, समीर सियराने,
हियराने हिय कन्त जे वसन्त नियराने हैं।।"

3. "भौंरन की सुंगी औ जटा है अम्ब मौन की,
गहब गुलाबन की गुदरी गसन्त है ।
काली कवि आस-पास आसन पलासन के,
सायरी तमालन की कायरी कसन्त है।।
धूंधी दाइ मीन औ करीलन की धूनी लगी,
त्रिविध समीरन की सांसन ससन्त है ।।
अंग-अंग भसम लसन्त है परागन की,
बागन वसन्त है, वसन्त है कि सन्त है ।।"

यह कलात्मकता अनायास होती है सायास नहीं । यही कल्पना पाठकों को भाव विभोर करती है, गुदगुदाती है और मनोरम लोक का भ्रमण कराती है । कालीदत्त नागर के काव्य में यह कल्पना, यह कला पूरी तरह से विद्यमान है । काली कवि की कला की प्रशंसा में कवि "गीतेश" की उक्ति द्रष्टव्य है :-

"मुग्ध मधुमास में मधुप मन संभ्रमित,
हो प्रशस्ति कुंज की कि यत्नसिद्ध माली की ।
सुयश प्रकाश दे सुगौर करता त्रिलोक,
हो प्रशस्ति तेज की कि भव्य अंशुमाली की ।।
कविता कला को दिये शोभन सिंगार नव,
हो प्रशस्त लेखिनी या प्रतिभा निराली की ।।
उरई के उर की सुगंधि है दिगन्त व्याप्त,
काव्य की प्रशस्ति स्वयमेव कवि काली की ।।"[4]

रसिक विनोद :-

"यथानाम तथा गुण" की उक्ति इस कृति के नामकरण पर अक्षरशः चरितार्थ होती है ।[5] सहृदय एवं रसिकों के मनःतोष के लिये ही कवि ने इस कृति की सरंचना की थी । नव-रसों का समुद्र दोहा जैसे छोटे- से छन्द में लहरें मार-मार कर सबको अवगाहन करने का सुअवसर देता है ।

काव्य, शास्त्र, ज्योतिष, साहित्य, कला आदि विभिन्न विषयों पर कवि ने अपनी कल्पना की उड़ान भरी है । इस उड़ान में

4. श्री परमात्मा शरण शुक्ल "गीतेश" द्वारा काव्यांजलि समारोह में पठित छन्द से.
5. सुकवि, सम्पादक गया प्रसाद शुक्ल "सनेही" वर्ष 4 संख्या 8, पृष्ठ 56 कानपुर अगस्त 1931.

यत्र-तत्र कहीं यदि अहात्मकता के दर्शन होते हैं तो उसके साथ ही साथ गंभीरता, अर्थ गौरव, भाषा-प्रयोग, कारयित्री एवं भावयित्री प्रतिभा का निदर्शन भी इसमें उपलब्ध होता है । इन दोहों को पढ़ कर हम बिहारी सतसई के दोहों का स्मरण कर उठते है । इसमें एक हजार दोहा संकलित है ।

कलात्मक दृष्टि से यह कृति अत्यन्त अनूठी एवं अलंकारिक छटा से परिपूर्ण है । संकेतमयी भाषा में अपनी बात कहने में कवि पटु है ।

कवि कल्पद्रुम :-

पूर्व कृति की भाँति यह संकलन भी कवि ने दोहा नामक छन्द में ही प्रस्तुत किया है । इसमें 208 दोहों का संकलन है । इसमें समकालीन कवियों की कला से सम्बन्धित दोहे तथा विभिन्न विषयों से अनुप्राणित दोहे हैं ।इन सभी दोहों में अभिव्यक्ति एवं अनुभूति पक्ष का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है ।

स्फुट दोहावली :-

इस कृति में मात्र 80 दोहे संकलित हैं । भिन्न-भिन्न पर्वों एवं अवसरों पर अनेकानेक विषयों पर लिखे गये दोहे कवि की उत्कट प्रतिभा के परिचायक हैं । भाव एवं कला-पक्ष दोनों ही दृष्टियों से यह कृति भी साहित्य-क्षेत्र में कीर्ति अर्जित करेगी ।

सुप्रसिद्ध विद्वान नलिन के शब्दों में " रीतिकालिक प्रभाव वंश वाली ने श्रृंगार प्रधान कई महत्वपूर्ण कृतियों का प्रणयन किया । नायिका भेद, समग्र अंग प्रत्यंग का नख-वर्णन करना उस युग की प्रमुख विशेषता थी । कवित्त, सवैया, घनाक्षरी, दोहे और पद-रचना उस काल के सफल रचनाकार की परीक्षा और विशेषता थी । अलंकार

छन्द, रस, पिंगलबद्ध रचना उस काल के महाकवि का काव्यिक अलंकरण थी । महान कवि कालो ने उस परम्परा को आगे बढ़ाया और युगीन श्रेष्ठता की कसौटियों पर पूर्ण खरे उतरे ।"[6]

कवि की अप्रकाशित कृतियाँ प्रकाशित हों, यह अत्यन्त आवश्यक है । इससे साहित्य जगत के सामने अनेकानेक भाव एवं कलात्मक छवियाँ जिनसे रसज्ञ पाठकों का मन आप्लावित होगा ।

-------------0-------------

---

6. राष्ट्रभाषा संदेश, हिन्दी साहित्य स0, प्रयाग, भाग 20, अंक 23, 15जून 1985 पृष्ठ 2 पर उल्लिखित चक्रधर नलिन के लेख का अंश.

10.1 हिन्दी काव्य को कवि की देन

I

10.1 किसी भी उस कवि की कृति महान नहीं हो सकती है जिसमें महान धारणाओं की क्षमता नहीं है । इस सन्दर्भ में एक सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान का मत समीचीन है[1]। "यह संभव नही है कि जीवन भर क्षुद्र उद्देश्य और विचारों में ग्रस्त व्यक्ति कोई स्तुत्य एवं अमर रचना कर सके । महान शब्द उन्हीं के मुख से निःसृत होते हैं, जिनके विचार गहन और गंभीर हो ।"[2] काव्य का रचना विधान अत्यन्त गरिमामय एवं भव्य होना चाहिए । रचना-विधान के अन्तर्गत शब्दों, विचारों, कार्यों, सुन्दरता तथा राग के अनेक रूपों का संगुफन होता है । वास्तव में रचना का प्राणतत्व है सांमजस्य जो उदात्त शैली के लिए अनिवार्य है । भारतीय एवं पश्चात्य दोनों ही विद्वानों ने इसे उत्कृष्ट माना है । जिस प्रकार शरीर के विभिन्न अवयवों का अलग-अलग रहने पर कोई महत्व नहीं, सब मिलकर ही वे एक समग्र और सम्पूर्ण शरीर की रचना करते हैं इसी प्रकार उदात्त शैली के सभी तत्व जब एकान्वित कर दिये जाते है, तभी उनके कारण कृति गरिमामय बन पाती है । जेम्स के अनुसार "सुन्दर शब्द ही वास्तव में विचार को विशेष प्रकार का आलोक प्रदान करते है ।"[3] इस प्रकार कोई भी दिव्य एवं भव्य काव्य वही हो सकता है जो आनन्दातिरेक के कारण हमें इतना निमग्न और तन्मय कर दे कि हम अपना भान भूल जायें और ऐसी उच्च भाव-भूमि पर पहुँच जायें जहाँ निरी बौद्धिकता पंगु हो जाती है और वर्ण्य विषय विद्युत प्रकाश की भाँति आलोकित हो उठता है ।

1. ऑन द सब्लीमेट, लाँजाइनस, 3001.
2. काव्य में उदात्त तत्व, डा0 नगेन्द्र, पृ0 52.
3. दि मेकिंग ऑफ लिटरेचर, स्काट जेम्स, पृष्ठ 87.

काव्य और कला का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । कला अन्तरात्मा की सत्य-सौन्दर्य-सम्पन्न अभिव्यक्ति है और उसका चरम लक्ष्य शिवत्व की साधना है । वह मानव हृदय के गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन है । मानव के चेतनशील हृदय पर बाह्य प्रकृति का जो-जो प्रभाव पड़ता है, कला में उसी का प्रस्फुटन होता है । अतः मनोभावों को व्यक्त करने की शाश्वत एवं उत्कट भावना ही कला की जननी है ।[4] कला की प्रेरणाओं के सम्बन्ध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहा है । अरस्तू और दान्ते कला को मूल मानव की अनुकरण करने की प्रवृत्ति में मानते हैं । कलाकार प्रकृति का अनुकरण करता है । टॉल्सटॉय कला की प्रेरणा भावना-संप्रेषण की इच्छा में स्वीकार करते हैं । अपनी अनुभूतियों को दूसरों तक संप्रेषित करने की इच्छा मानव मन की मूल प्रवृत्ति है । इसी के लिये वे कलाओं को माध्यम बनाते हैं और आत्माभिव्यक्ति द्वारा संतोष प्राप्त करते हैं । मार्क्स की दृष्टि भौतिकवादी है । वे व्यक्ति की चेतना को सामाजिक परिवेश से प्रभावित मानते हुए उसे सामाजिक जीवन की देन समझते हैं । सामाजिक जीवन में वे अर्थ और वर्ग-संघर्ष को प्रधान तत्व समझते हैं और कला को आर्थिक स्थिति एवं वर्ग-संघर्ष से प्रभावित मानते हैं। वे कला में रमणीयता, अन्तः सौन्दर्य और भावात्मक विच्छित्ति को अस्वीकार कर अर्थ और वर्ग संघर्ष में कला के मूल बीज देखते हैं । और कला-निर्माण को वर्ग-स्वार्थ से प्रेरित सामाजिक कर्तव्य मानते हैं । फ्राइड मानव-चेतना का प्रणाधार काम{लिबिडो}मानते हैं और कहते हैं मनुष्य जब सामाजिक मर्यादा और प्रशासनिक बन्धनों के कारण अपनी कामनाओं को व्यक्त नहीं कर पाता, तो वे दमित वासनाओं और कुंठायें या तो स्वप्नों में अथवा कलाओं में अपनी अभिव्यक्ति पाती है । अतः फ्राइड की दृष्टि में कला द्वारा मानव अपनी दमित वासनाओं का उन्नयन करता है । कुछ लोग जीवन से पलायन की भावना को कला

---

4. साहित्यिक निबन्ध, डॉ0 शान्ति स्वरूप गुप्त, पृष्ठ 188.

के मूल में बताते हैं, तो कुछ लोग कला को भावों का उन्मोचक और व्यक्तित्व से मोक्ष मानते हैं । क्रोचे के मत में कला एक अखण्ड अभिव्यक्ति है, इसलिये उसका विभाजन असंभव है । उपर्युक्त मतों के विवेचनानुसार हम कह सकते हैं कि मनुष्य इस अपार विश्व में सौन्दर्य के दर्शन करता है, उसके साक्षात्कार से जो चिरन्तन आनन्द की अनुभूति उसे प्राप्त होती है, उसी को व्यक्त करने के लिये कला का जन्म होता है ।[5]

आली कवि की समस्त उपलब्ध कृतियाँ खण्डकाव्य या मुक्तक काव्य ही कही जायेंगी । यह परम्परा नितान्त अर्वाचीन नहीं, वरन् अत्यधिक प्राचीन है । जिस युग के कवि प्रबन्ध रचना में अभिरुचि दिखाते हैं, उस युग में मुक्तक रचना ह्रासोन्मुख हो जाती है । दोनों प्रकार की xxx रचनायें समान रूप से एक ही युग में नहीं चल सकतीं । प्राकृत xxxxxxxxxx में मुक्तक रचना अधिक है और प्रबन्ध रचना कम । संस्कृत के कवियों ने प्रबन्ध रचना के क्षेत्र में विशेष अभिरुचि प्रदर्शित की इसलिये मुक्तक रचना कम हुई । अपभ्रंश में मुक्तकों का प्राधान्य है । भक्तिकाल में प्रबन्ध विशेष रूप से लिखे गये, इसलिए मुक्तक रचना को विशेष प्रोत्साहन नहीं मिला । रीतिकाल मुक्तकों ही काल है । आज भी प्रबन्ध रचना की अपेक्षा कविगण मुक्तक रचना में ही अधिक प्रवृत्त हैं । सामान्यतः कहा जा सकता है कि मानव के व्यक्तित्व में साहित्यिक चेतना के उदय के काल से ही ‖लोक और ललित साहित्य दोनों में‖मुक्तक काव्य की रचना होती आरंभ हो गई थी और आज भी हो रही है । उसका अबाध है ।[6]

---

5. साहित्यिक निबन्ध, डॉ० शान्ति स्वरूप गुप्त, पृ०-189.
6. ,, ,, पृ०-245.

काशी कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समकालीन थे । काव्य के क्षेत्र में उन्होंने ब्रजभाषा को ही अपनाया था । "भारतेन्दु युग में खड़ी बोली में उच्चकोटि की रचना नहीं मिलती । इसका कारण स्पष्ट ही ब्रजभाषा की माधुरी पर उस युग के कवियों की रीझ है। भारतेन्दु जी ने खड़ी बोली में कविता करने का प्रयत्न किया पर कर न सके । वस्तुतः उस युग में भाव व्यंजना का प्रधान माध्यम ब्रजभाषा ही रही ।"[7] इसीलिये विवेच्य कवि की समस्त रचनाओं में ब्रजभाषा का प्राधान्य है । कवि ने नवीन छन्दों का न तो निर्माण किया और न ही प्रयोग । उसे काव्य परम्परा से जो छन्द प्रयुक्त होते मिले, उन्हें ही स्वीकार कर लिया । दोहा, कवित्त, सवैया, छन्द और श्लोक ही उनकी अभिव्यक्ति के माध्यम बने । किन्तु उनकी अभिव्यक्ति में निःसन्देह अनुरणन विद्यमान है ।

प्रत्येक कवि के काव्यात्मक सृजन में वैयक्तिक प्रेरणा रहती है, इससे अस्वीकार नहीं किया जा सकता, किन्तु वैयक्तिक प्रेरणा से उद्भव साहित्य भी दो क्षेत्रों में अपनी कृत कार्यता प्रकट करता है । साहित्यकार बाहरी रूप से मन की तरंगों पर खेलता है । इस निर्माण में वह अपनी व्यक्तिगत अभिरुचि की तृप्ति ~~क्ष~~ का आनन्द प्राप्त करता है । इस आनन्द को उससे छीनने का अधिकार किसी को नहीं है । सृजन के क्षणों में वह चक्रवर्ती सम्राट के समान एक छत्र शासन का सुख लेता है । यह परम सुख उसका जन्म सिद्ध अधिकार है । अन्तरंग रूप से साहित्यकार का एक दूसरा भी दायित्व होता है जिसकी वह उपेक्षा नहीं करता। वह दायित्व है अपनी कृति के माध्यम से लोकाचार और लोकनीति का निर्धारण, धर्म, नीति, दर्शन आदि गंभीर समस्याओं का अपनी कृति के माध्यम से समाधान प्रस्तुत करना तथा जिस समाज का वह अंग है । उसकी आस्था, धारणा, भावना, विचार और इच्छा आकांक्षाओं को

7. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डॉ० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, पृ०-367.

अभिव्यक्ति देना । जो साहित्यकार केवल वैयक्तिक अभिव्यक्ति तक ही अपने को सीमित बनाये रखते हैं, उनके साहित्य को न तो सामाजिक स्वीकृति मिलती है और न ही वह स्थायित्व को प्राप्त होताहै ।"[8]

वास्तव में--------"साहित्य का बीज अंबर में ---ज्ञात और जीवन से तटस्थ होकर पनपता नहीं है । उसके अंकुरित और पल्लवित होने के लिये समाज की उर्वर भूमि ही अपेक्षित है । अतः मैं साहित्य को समाज-निरपेक्ष मानने के पक्ष में नहीं हूँ । साहित्य में राजनीति, अर्थनीति, समाजनीति आदि सभी आवश्यक तत्वों का सम्मिश्रण रहता है और रहना चाहिए ।"[9] हनुमत्पताका, गंगा गुण मंजरी आदि में काली कवि ने भी इन सबका ध्यान रखा है । उन्होंने भाव एवं पात्रानुकूल भाषा के माध्यम से कथा को एक सहज गति प्रदान की है ।

वे अपने क्षेत्र के अप्रतिम कलाकार थे । उन्होंने जहाँ सहृदय-हृदय पाया था वहीं वे राजनीति पटु और बहुज्ञ भी थे । प्रो0 श्री द्विवेदी के अनुसार "कालीकवि भक्त कवि थे पर इनमें रीति की परम्परा अपने इहड़हे रूप में मिलती है हनुमत्पताका का काव्य सौष्ठव चमत्कार पूर्ण वर्णनों पर ही आश्रित है । शब्द छन्दों की दृष्टि की यह रचना उत्कृष्ट कोटि की है । इसमें मुद्राओं, चेष्टाओं, प्रकृति के झूमते, गमकने, फूलने तथा डहडहाने आदि के सुन्दर चित्र मिलते हैं । इनमें अनुभावों, भावों और गत्यात्मक चित्रों की योजना अच्छी है।"[10] कविवर सेनापति पद्माकर और रत्नाकर की भाँति ही कालीकवि अपने शुद्ध छन्दों के लिये प्रसिद्ध रहेंगें । उनके काव्य में भाव-व्यंजना के

---

9. साहित्यिक निबन्ध, प्रो0 विजयेन्द्र स्नातक के लेख से उद्धृत पृ0-498.
10. दैनिक स्वदेश, गणतंत्र विशेषांक, डॉ0 रामशंकर द्विवेदी पृ0-120.

साथ-साथ सुन्दर निम्न योजना भी है जिसमें वे सिद्ध हस्त हैं ।
डॉ0 मदनगोपाल गुप्त के मतानुसार "कालीकवि कृति" गंगा गुण
मंजरी" को दोहों और अट्ठावन कवित्तों की एक मुक्तक रचना है।
इसके छन्दों में गंगा विषयक पौराणिक मान्यता पद्माकर की भाँति
प्रस्तुत हुई है किन्तु उनमें महात्म्य वर्णन न होकर तटवर्ती प्रकृति
चित्रण तथा स्नान करने वाले नर-नारियों के अत्यन्त आकर्षक तथा
मनोहर शब्द चित्र उभारे गये है । भाव और वस्तु का चित्रण कवि
का अनूठा तथा मौलिक है ।"[11]

काव्य के कैलाश-शिखिर से जो भक्ति और सौन्दर्य की
कल्लोलिनी कालीकवि ने प्रवाहित की उसमें अनेक सहृदय विज्ञ एवं रसज्ञ
पाठक अवगाहन करके युग-युग तक जीवनदायी प्रेरणा पाकर सुखानुभूति
प्राप्त करते रहेंगे ।

--------------0--------------

11. अखिल नवनीत मासिक, सम्पादक - गिरिजा शंकर त्रिवेदी
वर्ष 34, अंक 12.

11.0 उपसंहार

हिन्दी साहित्य में नागर जी का स्थान

किसी भी कवि की कसौटी उसकी प्रभावशालिनी शक्ति के ऊपर निर्भर रहा करती है। उसका दूसरा आधार यह भी हो सकता है कि उसने अपने काव्य के द्वारा युग को क्या संदेश दिया। यदि इन दोनों बातों के आधार पर नागर जी के काव्य की परीक्षा की जाय तो वे पहिले तत्व के पूर्ण अधिकारी हैं किन्तु दूसरे तत्व को ये प्रत्यक्षतः लेकर नहीं चले हैं। नागर जी हिन्दी साहित्य की विभिन्न युगों की परम्पराओं को लेकर अवतीर्ण हुए। वीर काव्य, भक्ति काव्य तथा रीति काव्य की परम्परायें अपना-अपना प्रभाव साहित्य क्षेत्र में छोड़ चुकीं थीं, इन सब प्रवृत्तियों का समन्वय करते हुए उनके काव्य का सरल स्रोत आधुनिक युग की वसुन्धरा पर प्रवाहित हुआ।

नागर जी का युग भारतीय समाज में विषमता का युग था। आंग्ल शासन का दुष्परिणाम वर्ग भेद के रूप में व्यक्त हो रहा था एक ओर जमींदारों और ताल्लुकेदारों की सम्पन्नता और विलासता थी तो दूसरी ओर जन साधारण की बुभुक्षा और पीड़ा। शिक्षा का स्वरूप संस्कृति के आधार पर निर्मित नहीं हुआ था परिणाम स्वरूप नवीन शिक्षा हमें अपनी संस्कृति से विमुख कर रही थी। धर्म के क्षेत्र में भी यही दशा थी। ऐसी स्थिति में प्राचीनतावादी कवि अथवा-कलाकार रूढ़िगत मार्ग को पकड़े हुए एक ही रास्ते से चलता जाता है।

नागर जी इसी प्रकार के कवि थे, वे भक्ति कालीन रीतिकालीन परिस्थितियों से प्रभावित थे। भक्त कवियों में सूर, नन्ददास, रसखान तथा घनानन्द जैसे कवियों के समकक्ष इन्हें रखा जा सकता है। भारतेन्दु तो इनके समकालीन कवि थे ही, उनके युग की प्रवृत्तियों का प्रभाव और समन्वय इनके काव्य में उपलब्ध होता है। महोपाध्याय श्री श्याम सुन्दर बादल के अनुसार — "काली महाराज एक सफल साधक थे और यदि ऐसा साधक कवि भी हो तो फिर सोने में सुगन्ध ही समझिए। उनकी साधना में यदि औघड़ों की कठोर वृत्ति स्थान न पाती तो वे निश्चय ही ब्रज-भाषा के कवि-कलाधर महाकवि कालीदास ही होते। फिर भी उन्होंने जितना लिखा है उतना ही क्या कम है। राष्ट्र भाषा के वैभव-वर्द्धन में उनकी रचनाएँ बड़ा महत्व रखती है। उन्होंने जिन जनपदीय शब्दों का प्रयोग किया है वे राष्ट्र भाषा के भण्डार में महती वृद्धि कर सकते हैं।"[1]

यह तो निर्विवाद सत्य है कि नागर जी अपने युग के सुप्रसिद्ध तांत्रिक थे जाने कितने दुःखी संतप्त और अभाव ग्रस्त मनुष्यों के जीवन को उल्लसित करके, उन्हें पीड़ामुक्त करके सुखी बनाया। वे कभी किसी को दुखी नहीं देख सकते थे, परहित में अपने जीवन को उत्सर्ग करने वाले ऐसे विरले पुरुष इस स्वार्थी संसार में शताब्दियों बाद हुआ करते हैं इसलिये उनके काव्य में बौद्धिकता और कलावादिता के गुण दृष्टिगोचर होते है। इसके साथ ही साथ वे अपने इष्ट के प्रति अनन्य निष्ठा रखने वाले महापुरुष थे। वे उच्छिष्ट गणपति के निष्ठावान साधक और अनन्य आराधक थे। भगवती भागीरथी पर उनकी अगाध श्रद्धा थी, यही कारण है कि गंगा गुण मंजरी में उनकी यह श्रद्धा काव्य धारा के रूप में प्रवाहित हुई। यह उनकी भक्ति भावना की विमल पुष्पांजलि है।

---

1. रीतिकालीन परम्परा के महान कवि स्व० पं० कालीदत्त नागर नामक लेख से.

प्रो० रामस्वरूपखरे के शब्दों में —— "कासी कवि ब्रज भाषा के सफल प्रयोक्ता थे उनकी भाषा में भावानुकूल शब्द विन्यास, सामाजिकता और प्रभावशीलता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। उनका वाक्य विन्यास बड़ा ही परिष्कृत और सुगठित है उनमें मध्य कालीन भक्त कवियों जैसी परिमार्जित ब्रज भाषा के लक्षण विद्यमान हैं।"[2]

नागर जी ने जहाँ शैली की प्राचीनता की रक्षा की वहाँ साथ ही साथ आधुनिक युग की शैलियों से भी प्रभावित हुए हैं। बुद्धिवादी होने के पर भी उनके काव्य में सरसता है। यही उनके व्यक्तित्व की विशेषता है। भावुक होने पर भी वे असन्तुलित नहीं हुए है। इस प्रकार हिन्दी साहित्य में क्षेत्र में उनका एक महत्वपूर्ण स्थान है।

किसी भी कवि के काव्य में युग के लिए नवीन सन्देश का होना अपेक्षित है, यह प्रवृत्ति उसके काव्य को यशस्वी बनाकर कवि को गौरव प्रदान करती है। नागर जी के काव्य में प्रथम तत्व प्रभावशालिनी शक्ति के हमें पदे-पदे दर्शन होते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से उनकी अन्य कृतियों में युगीन सन्देश के सूत्र भी उपलब्ध हो जाते हैं।

मध्ययुगीन काल में वासनामय श्रृंगार की अभिव्यक्ति प्रत्येक कवि अपने काव्य में मुक्त रूप से करना अपना कर्तव्य समझता था। समाज में इस प्रकार की विलासता सर्वत्र दृष्टि गोचर होती है थी इसलिए तत्कालीन कवियों ने यदि वासना पूर्ण श्रृंगार के चित्र उभारे है तो कोई अनुचित नहीं क्योंकि साहित्य समाज सापेक्ष हुआ करता है। सामाजिक परिस्थितियों का प्रतिबिम्ब साहित्य में पड़ेगा ही। कवि उन परिस्थितियों में तटस्थ नहीं रह सकता। नागर जी ने अपने

---

2. कासी कवि नामक निबन्ध से.

काव्य में रीतिकालीन परम्परा का पालन करते हुए शिष्ट और मर्यादित श्रृंगार का वर्णन किया है, यह उनकी एक दूसरी विशेषता है ।

जहाँ हनुमत्पताका और गंगा गुण मंजरी इन दोनों कृतियों में उनकी भक्ति कालीन प्रवृत्ति के दर्शन होते है वहाँ रसिक विनोद, बहु राजीव, छवि रत्नम् आदि रचनाओं में उनकी श्रृंगारिक प्रवृत्ति एवं सौन्दर्य अनुभूति के दर्शन होते हैं ।

नागर जी जहाँ भावुक कवि थे सुप्रसिद्ध तांत्रिक भी थे, इसके साथ ही साथ वे संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे । हनुमत अष्टकं, उद्दीश तंत्र तथा गणपति खड्ग मालाx ये तीनों कृतियाँ इसका प्रमाण है । सम्पुष्टि के लिए कतिपय उद्धरण अवलोकनीय है -

"विनिद्रसत्तरंगिणी तरंग भंग संगम प्रकम्पमान-कुन्तलावली विलोलपन्नगे।।
नगाधिराज नन्दिनी मुखेन्दु कौमुदी क्षणप्रफुल्लदक्षिकैके शिवेनिवेशितं मनः।।

× × × × × × × × ×

परस्परम्पुरन्दर प्रभृत्यदेव मण्डली कुरंगशावकेक्षणाचरित्रचित्रितांगणे ।।
ललाटचन्द्र चंद्रिका सुधावधौत मन्दिरे मृगशिमन्मथे निमग्नमस्तु मे मनः।।

× × × × × × × × ×

स्वभक्त वैर योषितां करप्रतालताडनैः
पलाण्डुपककापाटली कृताशुगण्डमण्डलः।।
सुरेन्द्र मालचन्दन प्रलिप्तपादपंकजः,
प्रभुर्जगद्वशांकरवशं करोतु शांकर ।।

× × × × ×

उमा कपोल दर्पण प्रवेश दीर्घ तामसं,
स्वकीय कण्ठकालता मलिप्रवेश वारयन ।।
प्रिया प्रहास दंतकच्छटावकाश चन्द्रिका,
चकोर शावकीकृतः पुनातु नो हसन हर ।।

x यह तीनों कृतियाँ क्रमशः सेठ कन्हैयालाल माहेश्वरी तथा पं० परशुराम

× × × × ×

हलि प्रियां रसाल सांकुलायमानालिकावली,
विशाल बाल मालती प्रसून जात मालिका ।।
पराग पुंज मंजुलेन रंजितांघ्रिपङ्कजं,
समस्त दोष शोषणं मुकुन्द भूषणं भजे ।।

× × × × ×

सदाशिवाय शङ्कराय शाश्वताय शूलिने,
भवाय भैरवाय भूतभावनाय भास्वते ।।
विभावरीशखण्ड भूषिताय कृत्तिवाससे,
मृडाय माधव प्रियाय मुक्तिदाय ते नमः ।।

रीतिकालीन युग की परिसमाप्ति तथा आधुनिक युग की प्राची बेला में इस कवि प्रतिभा ने बुन्देलखण्ड की वीर वसुन्धरा पर अवतरित होकर जो काव्य-किरणें प्रस्फुरित कीं, उनसे वीणा पाणि का मन्दिर सदैव आलोकित रहेगा ।

परिशिष्ट - 1

(1) वंशावली.

(2) हस्त लिखित कविताओं की फोटो स्टेट प्रति.

(3) कवि का चित्र.

श्री काली दत्त नागर (काली कवि)

प रि शि ष्ट - 2

कवि की प्रकाशित कृतियाँ

(मूल रूप में)

(1) हनुमत्पताका.

(2) गंगा गुण मंजरी.

(3) छवि रत्नम्.

** श्रीः **

हनुमत्पताका

-----0------

श्रीयुत पं० कालीदत्तरचित

जिसमें

अंजनी नन्दन हनुमानजी का लङ्कागमन,

सीतामिलन इत्यादि कथायें रोचक

पद्यों में वर्णित हैं ।

-------0--------

वही

खेमराज श्रीकृष्णदासने , बम्बई

निज " श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-मुद्रणालय में

मुद्रितकर प्रसि. किया ।

§§§---------------

संवत् 1966

श्रीः ।

अथ

हनुमत्पताका ।

दोहा ।

वंदि चरण रघुनंद के, वह कपिंदकुलवीर ।
बलसागर पहुँच्यो तुरत, जल सागर के तीर।।

कवित्त ।

उच्चकर अच्छन तत्च्छन विलोको वीर,
पायो कलकच्छन सुगंध मधु मल्लीको ।
काली कवि तडित उताल तन तीरन पै,
ताक तमतमको तमाल तरु तल्लीको ।।
पिच्छल पछेल पगढेल वन वल्लभने,
वल्लभ नदी को कियो एकही उछल्लीको।।
तुच्छनकर कुछन भुजान बल स्वच्छकर,
गुच्छकर शिरपै समच्छ पुच्छबल्लीको ।। ॥2॥

दोहा

असुर मार सुरसाहि छल, दार लंकिनीदार ।
लखत भयो कपि लंकको, नभचुंबित पुर द्वार ।। ॥3॥

कवित्त

चित चकचौंधी परे रतन दिरौंधी देख,
कौंधी जोत जालको रहोधौं चंदलसतो ।
काली कवि झुलत बयार लग बार-बार,
वारिद सवारिके उबार अतलसतो ।।

इन्द्रधनु सुंदर परंदमणि तोरणाते,
परत प्रमोद कुंदमंगल हुलसतो ।।
शारपुर द्वारके बलंद दर मंदिर पै,
छिपत दिनेश वेश कुंदन कलससो ।। ४ ।।

दोहा ।

चलो पैठ शंका न कछु, रंकारत रघुबीर ।
लंका ते गढ़ हुगे मैं, बंकावानरवीर ।। 5 ।।

कवित्त ।

भमर विहारतते नचत तुरंग जहँ,
मारगमतंग मद जलन छिको भयो ।।
काली कवि नगर पताका पटछाहनते,
दरशि दिनेशको न तन तनिको भयो ।।
डारत झरोखनते अतर फुहारवारि,
परत कपिंदपर पवन फिको भयो ।।
वल्लरी न रोकत न झोकत पलक नेक,
नागरीन के मुख विलोकत विको भयो ।। 6 ।।

दोहा ।

नचत शंभु शिरमणि गिरो, दिनमणि गयो हिराय ।
तमन ताहि खोजन चली, भूतभीर भहराय ।। 7 ।।

कवित्त ।

एकै पिय लाइली तिलाई ततरीन वीच,
लाई पानवीरी सज तिजिलमाला मैं ।।
काली कवि तबज तुरग सुखतेजन पै,
आबू छिरकावती गुलाब गुलमाला मैं ।।
एकै तजमज कल गावती झरोखन मैं,
एकै रहीं हालभर सुभर पियाला मैं ।।

एकै नवमाला गुहैं किंकिणी रसाला गुहैं,
एकै फूलमाला गुहैं बाला चित्रशाला मैं ।।8।

दोहा

एकैं पिय तिय पगन मैं, जावक रहे लगाय ।
एकैं मृगनैनीनकी, वेणी गुहत बनाय ।।9।

कवित्त ।

एकैं पुर सुंदरी पुरंदरीन लावैं लाज,
मृगन दिखाय वनमृगन मृगावती ।
काली कवि कंजदल आमल कपोलनको,
खोल मुख गोलनके अलिन टिगावती ।।
एकैं कुचकोरनपैं चारुवद छोरन तै,
घन घन ओरनते ओरन गिगावतीं ।।
तनक उघारकै सुचन्दकरलेती मुख,
चंदरस खोरन चकोरन चिंगावती ।। ।10।

दोहा ।

तब लग नभ अरविंदसौं, उदित भयो छबिछंद ।
सुंदर चंदनबिंदु सो, सुधाकंद सो चंद ।।।11।

कवित्त ।

कोकनद वृंदनको मंदन महानमद,
कुमुद मलिंदनको करन मुदै भयो ।।
कालीकवि गगन वितानवर कुंदन सुबंद,
नवनीत को पयोदधि उदै भयो ।।
कोकगन कुंदन निकंदन सुमान कंद,
पंदित सुधा को बुंद निदंन बुदै भयो ।।
वंदन सुजानको चकोर चित चंदन,
सुनंदन महीको सिंधुनंदन उदै भयो ।।।12।

दोहा

नीलकसीं भ्रमरीनके, कुमुदिनि किये शृंगार ।
चपल चंचुकर चंदरस, चखहि चकोरीचार ।।13।।

कवित्त ।

खोलकर वदन गद्दल गुल गोलनके,
कमल अगोलनके दलन दलाकरैं ।।
काली कवि ग्राक दिल चक्खन चोरुन के,
चखन चकोरनके अतुल ललाक ललाकरैं ।।
याम यामिनी में काम योगिन जगावैं देत,
बलि सों वियोगिनको भोगिन भला करैं ।।
छहर छरीलीं छूट छितिके छलापै आज,
निरषें कलाकरकी कोरन कला करैं ।।14।।

दोहा ।

धवल सिंधु लहरीन में, फेन भये उतरात ।
निजमणीन जलविंदु से, इन्दु किरण हैजात ।।15।।

कवित्त ।

हेलिन पै हिलक हवेलिन पै वेलिन पै,
नगर नवेलिन पै नजर नटागई ।।
काली कवि उमगलटासी क्षीरसागर, की,
अमल अटान छाय शारद घटागई ।।
पागन पै पीवके सुहागिल सुहागन पै,
बागन पै वगर परागन पटागई ।।
अंबरते छुटक छपाक छितिमंण्डल पै,
छपक छपाकरकी छहर छटागई ।।16।।

दोहा

आल बाल शशिते चली, पाय सुधाजलमेल ।
गई भुवन किरियालपर, छबल चाँदिनी बेल ।।17।।

कवित्त ।

गगन सरोवर को हँसत सरोज ऐसो,
ओजकर लसत मनोज रथ चाकसो ।।
काली कवि अतुल अनूप बल्लरीको फल,
सुरग तरंगिनी तटीको चक्रवाकसो ।।
कंदुक अमोल है चकोर, चित्त नंदन को,
दिपत बलंद रतिमंदर चिराक सो ।।
रूप गुण सुंदरी पुरंदरी दिशाको यह,
उदित अमंद इन्दु सुंदर सुलाकसो ।।§18§

दोहा

सोहत परे कलंकके, शशि महँ श्यामलबिंद ।
शोभ कुंडली पै मनो, सोवत परे सुबिंद ।।§19§

कवित्त ।

छोरतपै कंदुक चकोर कुच कोरन को,
करन पसार के उधार तम सारीको ।।
काली कवि अमर तरंगिनी इजारी खोल,
जारी कर हसन गदूल गुलजारी को ।।
चाँदनी को चंदन चढ़ाइ सब अंगन मैं,
तारन के हारन सम्हार सुकुमारी को ।।
दाबकर अंबर अगार परयंक पर,
अंक भर भैटत मयंक निशि नारी को ।।§20§

दोहा

थकित करीर तहुंग मैं, पुपति यामिनी इन्दु ।
झलकरहे तारा मनहुँ, श्रम जल शीतल बिन्दु ।।§21§
या विधि चंद्रोदय निरख, हरष वीर बलधाम ।
धाम धाम कौतुक लगो, राम बाम अभिराम ।।§22§

कवित्त

झलक रहीं हैं झुक झालरैं हिरागन की,
चहक चिरागनकी चिलक भरीं रहीं ।
काली कवि तनित वितान जरतारिन कीं,
पदर किनारिनकीं लहक लरीरहीं ।।
देतकर अहह मृदंग मुकतालनपै, मदमतवारनिनकीं,
मदमतावारिनकीं फरक फरीं रहीं ।।
दमक दरीनके सुबीच बींजुरीसीं कहूँ,
कनक छरींसी छूट छमक परीं रहीं ।। [23]
छापकर छपन चलॉक चितचोरन को,
कुँवर किशोरनको भुजन भरै लगीं ।।
काली कवि शारद मयंक मुख मोर मोर,
मोर सिसकारिनके सरस करैं लगी ।।
उसक उसासनसीं कसक कराह आह,
मसक मसोसनसों कसम सरै लगीं ।।
लहक लपेट कट चुंबन चहक चाह,
महँक सुगंधन सौं गहक गरैं लगीं ।।[24]
फुंद मुखचंद्रपै परे हैं इन्द्र नीलनके
छकित छबीलिन के छहर छरे परे ।।
काली कवि गिलिम गुलाब गुलगादिनपै
सबज सराबी जामदकन ढरे पेर ।।
मदृयमद गलित पंलग तट पाटिनते,
कहूँ गोरिनके लटक गरे परे ।।
घाँघरे हरेके भरे मुकुत झकेलन ते,
कमर तरेलौं छरे निपक नरे परे ।।[25]

सवैया

भाल महावर लीक लसैं चिलसैं अधरान मैं अंजनछौहै ।।
त्यौं कविकाली लिये अँखियानके नींद झलान पला दुपकौं है।।
सोहैं न हेरत सौहैं करैं कहूँ किंकिणीसे बंधे कंत तिसौं है ।।
मान भ्रमरी गजरान उनै रहीं कामिनी तान कमानसी भौहैं।।§26§

दोहा

या विधि पुर कौतुक लखत, देत सबन तन पीठ ।
पहुँची पवनकिशोरकी, राज पौंर पर दीठ ।।§27§

कवित्त ।

दुग्धहि सरोवरकी लहर छटासी छूट, ईकरस=अदइकै
फिरत अटापै शशि शारद उदौ करै ।
काली कवि छकत चकोर सुख सौंहैं होत,
कुमुद हसौंहैं होत कमल मुदौ करै ।।
प्रथम चकौपै जकौ देत मुदरीकौ हतौ,
विरह व्यथाकी कपि खबर खुदौ करैं ।
लंक पटरानी यह परख गयौहै जिहि,
जनकसुतातैं सुख हरष जुदौ करैं ।।§28§

दोहा ।

तिलते डरपत केश हैं, केशनते सुखशीर ।
सुखते सुख देखे दुखित, सुखित भयो कपिवीर ।।§29§

कवित्त ।

झर शारद सरोजमुख कुमुद विकाश हास,
दशान विलास कुंदकलिन समी सयौ ।।
कालीकवि चारु चंपहारवरनीकेरही,
चिबुक चमेलीपर फिरत नयौ नयौ ।।
अधर अमंद बंधु जीव गुल आ वनपै,
गुलफ गुलाबनपै कानरली रयौ ।।

असुर धनाके तन सुमन धनामैं पैठ

पवनतनयको मन भ्रमन भले करौ ॥30॥

दोहा ।

फिरत विलोकत जानिकिहि, गये तहाँ हनुमान ।

जहाँ सुरतहारीं करहिं, सुरनारी अस्नान ॥31॥

कवित्त ।

देखे तट नाभिको सरोवर अतुल्य और,

तुल्य त्रिवलीनहूके सुरन सिढ़ीन हैं ॥

कालीकवि कायन मृणाल भुज नालनतैं,

लोचन विशालनतैं घायल सुमीन हैं ॥

वारनतैं सकुच सिवारन गई हैं पैठ,

हारनतैं सुमुल तरंग तरलीन हैं ॥

क्षीण छवि मधुप महीन मधु बोलनतैं,

अमल कपोलनतैं कमल मलीन हैं ॥32॥

दोहा ।

उकसावत कुवलय विपिन, अरु सरोज संघात ।

हेला कुच रैनानके, खेला लौं बढ़ जात ॥

प्रियपतनी लंकेशकी, जिहि निकेत नितजाय।

पूजत शशिधर शंभु को ॥

तनख उरोज दुराय ॥34॥

तिहिमंदिर आई सकल, मजन कर ततकाल ।

लगीं सम्हारन दीपकन, हेमदीपकन बाल ॥35॥

कवित्त ।

चारु चहुँओरनते चन्द्रधर मंदिर मैं,

चटुल चकोरनको मचत चुहाँ चुहाँ ॥

कालीकवि कुंदकन चन्द्रमणि हारन कौ,
अतरफुहारनको परत फुहौ फुहौ ।।
झूम झूक आरत उतारहीं औजनतें मदन,
उरोजनतें परत द्रुहौ द्रुहौ ।।
कुशित कलंक पंक बदन मंयकिनके,
लरमल पंक लंक लपत द्रुहौ द्रुहौ ।।§36§

दोहा ।

स्वसन धूप दीपक हसन, सुधा निवेदन वैन ।
कर कंजन नख अक्षतन, पूजे पुजे त्रिनैन ।। §37§
तिहिअवसर आयो तहाँ, मुनि पुलस्त्यकुलदीप।
दीपमालिकासी लगी, मंदोदरी समीप ।। §38§
निज शिरीश पंकजनतें, जिनहिं पुज लेखा ।
कीन्हें अरि वनितानकें, कुसुम विहीने केश।।§39§
तिन शिवको पूजन कियो, सहित विभव विस्तार।
लगो बहुरि अस्तुति करन, छंद प्रबंध प्रचार ।।§40§

रावण उवाच ।

विनिद्रसत्तरंगिणीतरंगभंगमप्रकम्पमानकुन्तलावलीविलोलपन्नगे ।।
नगाधिराजनन्दिनीमुखेन्दुकौमुदीक्षणप्रफुल्लदधिकैरवे शिवे निवेशितंमनः§41§
परस्परम्पुरन्दरप्रमुखदेवमण्डलीकुरंगभावकेक्षणाचरित्रचित्रितांगणे ।।
ललाटचन्द्रचंद्रिकासुधावधौतमन्दिरे दृगग्निभस्मितमन्मथे निमग्नमस्तु मे मनः§42§
स्वभक्तवैरयोषितां करप्रताललाडनैः पकाण्डपक्कपाटलीकृतागण्डमण्डलः ।।
सुरेन्द्रभालचन्दनप्रलिप्तपादपंकजः प्रभुर्जगद्भशंकरश्शुभं करोतु शंकरः ।।§43§
दिने प्रियस्य मन्दिरे दिनेशरश्मिरंजिताः पिबन्ति चन्द्रिकारसं चिरकोरपंक्तयः
जटाघटापि यस्य संनदन्मयूरतोरणा तनोतु मंगलम्मुदे नतां स मे हरो हरः§44§

उमाकपोलदर्पणप्रवेशदर्शितामलं स्वकीयकण्ठकालागलिभ्रमेण वारयन् ।।
प्रियाप्रहासदन्तकच्छटापकाशचन्द्रिकाचकोरशावकीकृतः पुनातु नो हतान् हरः ।।45।।
हलिप्रियारसालसालकाकुलायलालिकावलीविशालभालमालतीप्रसूनजालमालिका।।
परागपुंजमंजुलेन रंजितांघ्रिपङ्कजं समस्तदोषशोषणम्भुजङ्गभूषणं भजे ।।§46§
नखाङ्कितेन मंजुरंजितेन चन्दनाम्बुना विभूतिपिण्डपाण्डुरेण माण्डितेन सद्भुवा।।
जटाशितानेन स्वेदितेन सुन्दरीप्रियापयोधरेण हेपितः चन्द्रशेखरः ।।§47§
सदाशिवाय शङ्कराय शाश्वताय शूलिने भवाय भैरवाय भूतभावनाय भास्वते।।
विभावरीशखण्डभूषिताय कृत्तिवाससे मृडाय माधवप्रियाय पुष्पितदाय ते नमः।।§48§

दोहा ।

भवहिं वन्दि मन्दिर गयो, रावण सहित समाज ।
लगो लखन रनिवासको, प्रति अवास कपिराज ।।§49§

कवित्त ।

झूल भरकीसी सरकीसी केश पासन ते,
लिलार कीसी नैन नोकन नुकाहकी ।
कालीकवि रानिनके छपटी कपोलन पै,
छाई कुच बोलनपै चोट चट काड की।।
चिथ चिच कीसी तीनविबिली तरालन में
दूदत बधीसी नाभि भमर भगाहकी,।।
आहकर उडकी कराहकै विभीषणके,
तिलक तिराह पै निगाह कपिनाहकी।।§50§

सवैया ।

आनँदके उँमगे अधावा पुलके सब अंग परैं पिघलैले ।।
त्योंकविकाली मिटीर मनो मर्याद सनेह समुद्र ।।
मोद भरे हुलसे हियरे पुग ओरसे लोचन कँज खिलैले।।
कीशो इते मिली जानकीसीउतै आगे विभीषणो राममिलेले।।§51§

दोहा

कुशल प्रश्नकर भीषणाहि, पूँछी हरि शिरमौर ।।
रघुकुल की जीवनलता, जनकसुता किहिठौर ।।{52}

दोहा

संपति लोचन लोककी, जाय विलोकहु आप ।।
तरू अशोकतरवसतहै, भरी शोक संताप ।। {53}

दोहा ।

तिहि अशोकतरू कुंजमहँ, कपि आयो ततकाल ।।
जहँ रसालकी मौरपर, भौरै भौंर उताल ।।{54}

कवित्त ।

गहब गुलाब गल चटक चमेलिन के,
बेलनके विदल दुकूलन दला परैं ।।
कालिकवि सघन रसालद्रुम कुंजनमैं,
कोकिला कलापनके हहलहला परैं ।।
प्रसरत मंजु मृदु मारूत मलयमंद,
सरस सुगंधनकी सकल कला परैं ।।
मोद मद मंथर अलिंद मतवारिनके,
मधु मकरंदनपै चपक चलापरैं ।। {55}
रम लफीलेलपलोलहेलबोदन की,
ललन लदाउ लौद लदलतरी फिरै ।।
काली कवि कंज प्रति कोकिला किशोरिनके,
कलह कुलाहलते कलन करी फिरै ।।
सुरभिसुगंधित पिशंगित पराग राज,
पवन तरंग वन भवन भरी फिरै ।।
गौरन पै गहब गुलाब गुल औरनपै,
लदबद भौंरनकी पदर परी फिरै ।।{56}

दोहा ।

फिरत बाग देखत लखी, जनक सुता अतिदीन ।
परीभूमितल विकलजनु, कमला कमल विहीन ।।§57§

कवित्त ।

भौंर भर अंजित अशोक तरु पुंज कुंज,
वंजुलकी मंजरी सुगंध कमला परी ।।
काली कवि तोरतरु मरुत मरोर जोर,
घोर घनमंडलते चूक चपलापरी ।।
तिनही अराजके अराममें दशाननके,
तामरस दाम छाम रामअबलापरी ।।
दौजछिजराजकी अकाशते सु आज मानों,
राहु भय भाज छूट छितिपै कलापरी ।।§58§

दोहा ।

आनन अरुण प्रवालतन, वरण सुरण सम तूल ।
परण पुंज कपि छपद्यौ, जनु अशोकको फूल ।।§59§

दोहा ।

सुंदर दरशान योग तब, दशकंधर धर रूप ।
आयो हर हर करत तिय, थर थर कँपी अनूप।।§60§

रावण कवित्त ।

डारकर अतर सुगंध सुलताजनके, गंध गजराजनके गौहरन गूनेहैं ।।
काली कवि मागनपै देय नर नागन के, बागनके पुहुप परागनतैं पूने हैं।।
नील मन नवल तमालवन मालनतैं, व्याकुल तैं वाल मधु पालिनतै दूनेहैं।।
परम सुदेशकेरा कामिनी हजारिनके, चुडामणि वरण तिहारे बिन सूनेहैं।।§61§

दोहा ।

कत कीजत दुचितौं हियौं, पाय हत नहीं रैन ।
हितकटिसौ नखसे वचन, अधरन ऐसे नैन ॥62॥
आननमें राखौ न विधि, अधर खुलनकौ नेत ।
तोली यह संदेह जु, दूरकरनके हेत ॥63॥

जानकी कवित्व ।

हीन तन अधिक अलीन आसुहीन कौसु, तिमिर मलीन धनकेशनको वेश है।
काली कवि चूड़ामणि चरण हमारे योग, रावण तिहारी यह भणति भदेशहै।।॥
तबसौं तिहारे मुख कथन बखाने मोहि, यह अपराध क्षमिबेको करनेश है।
चरण सरोजनको निरख धराकी ओर, रुकत न रौको नित सुकतदिनेश है।।॥64॥

दोहा ।

रघुपति हित आतपबिना, हिय नवनीत द्रवैन ।
रामचन्द्र बिन होय क्यौं, हसन चाँदनी रैन ॥65॥

रावण दोहा ।

वेर कहा राखी सुकर, दुगभ्रमरनकी वेर ।
देत क्यौंन नीरज नयनि, एक वेर हँसहेर ॥66॥

जानकी दोहा ।

देखी रावण नृपनकी, मतमतवारी होत ।
सुनै कहूँ वारिज विमल, विकसत जुगनू जोत ॥67॥

रावण कवित्व

मंदकर कुमुद कदंब सुरवृंदनको मुनि मुख चन्दनको करन कलेशको ।
काली कवि असुर अंगद अरविंदनको मुदमकरंदनको हरष हमेशको।।

उदित उदंड भुजदरन मयूखनते भार तम टारन है शिखरमहेशको ।।
देखो देश देशान दिशान दीपदीपनमें दमक रहोहै तेज रावण दिनेशको।।§68§

दोहा ।

बरषत मो घनभुजनतें, असिधारा को नीर ।।
रा हँस सो जाय उड़,तेरे श्वास समीर ।।§69§
मास दिवस वधु अवध कर, ।
तारमहि संग लिवाय ।। §70
दशकंधर मंदिर गयो, सीय गईससियाय।।§70§
कनक कुंभ यौवन युगल, ननके ज वोर ।
चन्द्रमुखी बोली दुखित,निरखचन्दकी ओर ।।§71§

कवित्त ।

पूरबको भागहै सुहाग गजगामिनीको यामिनीको राग अनुराग कुमुदीनको ।
सागरको पूत दूत काम नटनागरको तिलक उजागर है गिरिश प्रवीनको ।।
काम कि काम कामिनीकी किंकिणीको नग चिंतामणि चोकस चकोर तरुणीनको।
सारहैसुधाको वसुधाको सरदार दार पूनोको शृंगार है अंगार विरही नको।।§72§

दोहा ।

तम विरोध कछु सुखमिलो, हर सुत हँसे अघाय ।।
हर्षि मार जरा जकी,धर्मध्वजा फहराय ।। §73§
~~कहे=कहे=कुकुमा=मके=कहे=व=कुकहर=कुब~~ ।।
यदपि विरहमसि मलिन मुख, निशिपति न भूल ।।
लाख लटे मुकुति लकमि=ला तऊ,घटे न शुकता तूल§74§
गगन सरोवर सुभग महँ, तबलग परे लखाय ।।
विकसे कुमुद कदंबसे, तारनके समुदाय ।।§75§

कवित्त ।

मंद मंद दीपत अमंद नभ कानन मैं मलय फनिंदनके फेन फुनगारेहैं ।
कालीकवि रैननैं वियोग पिय वासरके नैननतें अश्रुजल विद्रुंउनगारेहैं ।।
मारकर लखन पिदार शशिके हरनेहार विरहीनके हजारन लगारेहैं ।
डारेहैं मारतंड किरन किनारे रहे छूट नभ तारेहैं कि बरत अंगारेहैं।।§76§

दोहा ।

डारदई अवसर निरख, मणि मुँदरी हनुमान ।
लई मगनमन जानकी, गगन अगिनकण जान ।।§77§

कवित्त ।

आवत उरोज ऐसो बाढ़त वियोग दुख मनकी भईहै गति लोचन चमरसी।
कालीकवि भौंहसों विलोकिकैं विलासीविधि जीवनकी आश अब लागतकामरसी।।
उरसों उसासकेश तमसों तमाम जग देखे विन रामश्याम मूरति समरसी ।।
वैसेही थकीती पार पावती न तापै भई विरह समुद्रबीच मुंदरी भवँरसी।।§78§

दोहा ।

परम पियारी रामकी, मणि मुंदरी किहि तौर ।
हर आई यह लंकमें, जनकसुतासी और ।।§79§

हनुमान–कवित्त ।

कंजकरकोमलकी मुंदरी न मातु यह भानुकुल भूषणको भूषण भुजानभौ ।
कालीकवि विरह तिहारे अब रावरेको मलय समीर तीरहूतें खरसानभौ।।
को हौ तुम? हौं तो दूत पीतम तिहारेको देख लघुरूप तव संशय निदानभौ।।
लंकपुर कंदर समुंदर मथनकाज बंदर बलंद मेरु मंदर समान भौ ।।§80§

जानकी-दोहा ।

चिरजीवहु रघुनाथ प्रिय, भेंट तुमहिं यह देत ।
तनफलही भोजन यहूँ अतिथि तिहारे हेत ।।§ ।।§

कवित्त ।

शालभ परंबसौ प्रियाल द्रुम वृंदन कौ मंद पिचु मंदन अमंद अतिधारसौ ।
कालीकवि तड़ित समान तरु तालनकौ तरुण तमालनकौ गुग्गुल तुसारसौ।।
पवनकुमार भौ दिमाससौ न मेल्न कौं केरनकौं बेरनकौं विकट क्वारसौ।।
कठिन कुठारसौ कदंब क्वनारनकौ आम नकै आरसौ अनारन अंगारसौ।।§82§

दोहा ।

पाणि पाय कपिराजकौ, तीरथराज अनूप ।
नु अशोक तरु सेवकन लही मुक्ति सारूप ।।§83§

कवित्त ।

तोर तरु लतान शरीर जर बेलिनकी विपट नवेलिनकी डारत क्षई करैं ।
~~कार्विहच=नवेर्लिवकी=डारत=क्षई=~~
काल कवि सजर ढजार फुलवारिनकौं मार रखवारिनकौं कलह मई करैं।।
रक्ष पति रावण सौं पुकारे जाय चाहत कहा धौं अब अगति दई करैं।।
आललौं न ऐसो भई लंकपुर वासिन पर यह कपि जात नाथ निपट नई करैं।।84§

दोहा ।

दशकंधरकी नगरतें, बाहिर अधिक अधीर ।।
कढ़ी सैन्य सुतसंगहीं, मेघ गिरा गंभीर ।।§85§

कवित्त ।

घूमत घटासे धनराजके किरीटपै छीटन छबीले करि छायले उछालैं हैं ।
कालिकवि दिग्गज मतंग मतवारिनके भालन पै परहिं तुरंगखुर तालैं हैं।।
रमाकी रमाकैं परछालतीं रमाके कान मेघनमें सालतीं पताकनकी नालैं है।।
फूटी परैं फुनगैं फणीश फणमंडलकी टूटी परैं नभतैं सितारनकी मालैं हैं ।।§86§

दोहा ।

रथ रनकत फहरात ध्वज, बजत दुंदुभी धीर ।
हय हींसत चिग्घरत गज करत कुलाहल वीर ।।§87§
लख विपक्ष मुख रथपति, आयको रूखपाल ।।
हाँकै गजिन गंयद सब, धुवके धका चाय ।।§88§
कटकटाय शिशुक टकपर, परो झपट झट भूप।।
आयगयो निशिचरनको, काल मनो कपिरूप ।।§89§

कवित्त ।

गिरिन करंडकर रंडकर राक्षसीन वदन विहंडकर असुर अनंतके ।
कालीकवि तुंड विन वाहन वितंडकर छंडकर झुंड मंडलीकनके पंतके ।।
चंड कर धुंगल चपेट खल मुंडनको खंडकर गंडन गंयद गलदंतके ।
मंडकर मंडित उमंड रणमंडलमें उदित उदंड भुजदंड हनुमंतके ।।§90§

दोहा ।

रही तोइ रणतेज पर, विकल करी कपिनाह ।
सैन प्रिया जनु अच्छकी, गधिपच्छकी छाँह ।।§91§
मार विटप कपि असुरकी,आदि वरणके संग ।
कियो मनोरथ भंग नहिं,कियो मनोरथ भंग ।।§92§

छेहक सवैया ।

रावणकी हहरान सुने भहरान लगीं पुरकी क्षिति छातें ।।
कालीं सुरी असुरी नहूं की भई एकही नैन दमावर मातें ।।
सांझ सरोरूहसे रानिनके मुरझाय गये मुखरा मुखरातें ।।
आंशुनकी सनौं अब मैरे हुई अधीन अंजली नामके नातें ।।§93§

दोहा ।

लेत नगर नारीनके, नैन नीरको स्वाद ।
रथ निकरो धननादको, मुक में खलावाद ।।§94§

सवैया ।

गरि गंभीर महारणधीर सुवीर धुरीननको शिरताजसों ।
त्यों कविकाली सुरावत आवत बाज दबावत टूटत बाजसों । ।
लै तरुराज तराज महा धुन गाज विराजत जोम जहासो ।
मेघगराजनके रथपै कपिराज दराज परो गिरि गाजसों ।।§95§

दोहा ।

भयौ विरथ आयुध रहित, महारथी बलवान ।
फुल्ल बाहु लाग्यौ करन, मल्ल युद्ध संधान ।।§96§

कवित्त ।

बेठकर वायें तर बगलतरसे पैठ कमर समेट करबल भरपूर में ।
कालीकवि गोट पर पकर लँगोट पट पींडकर मीडत मिलाये देत धूरमें ।।
घूमकर चक्करकी निकर तरे तैं वीर भूमि पर वाहत पछारो कपिसूरमें ।
झूमकर झपक झपेटत भुजान बीच लूम कर लपक लपेटत लँगूरमें ।।§97§

दोहा ।

मारो वारिदनादने, कपिहि कियो परतंत्र ।
ब्रह्म अस्त्र वगलामुखी, रिपु भुज तंभन मंत्र ।।§98§

कवित्त ।

बाँध हजरंगको अकेले रंगभूमहीते संगमें राकेलैं तैन धारा लिये जात है ।
कालीकवि बति पिताको लोक लोकन मैं ठोकलेकौं अयश नगारा लिये जात है।।
फूले पाप फूलन पलाशगल फारिवेकौं पवनकुमार है न आरा लिये जातहैं ।।
पवनकुमार है न आरा लिये जात है ।
हाहाकार परेको नगर उजरा बैकौं जारवेकौं नगर अंगारा लिये जातहै।।99।।

दोहा ।

प्रतिबिंबित मणिभवन महँ, प्रतिखभनके देश ।।
हनुमत अति श्रम कीन्ह तब, चीन्ह परो लंकेश।।।।100।।

कवित्त ।

अटल अटूट लूटलूट धन बौकनको खलन लगाई नील रतन कगार है ।
कालीकवि मार बेसुमार सुर वंदिलके विरह दमारके धुवाँको धुंधकार है।।
बीत कर सकल समाज शशि सूरज को कैधौं राज पावै विराजो अंधकारहै।
विज्जुल लतासे खैल उज्वल रहे हैं॰ दंत सज्जल पयोधरके कज्जल पहारहै ।।।।101।।

दोहा ।

भामीसी लागी तुगन, को तू कहत न मोहिं ।
अरे अभागी तुमनकी, दया न लागी मोहिं ।।।।102।।

कवित्त ।

लंकपुर जारन उजारन अशोकवन मारन हौं असुर कुमारनकी भीरको ।
कालीकवि निपट निवारन सियाको शोक पारपरतारहो जलनिधि नीरको।।
द्रोण गिरिधारन उधारन अहीशप्राण बाधक कारन हौं तनय समीरको ।
दान उधारणहौं चोर निशिचारणको वारणहो पहुर चुनिन्द रघुवीर को।।।103।।

दोहा ।

तूने हरलायो अधम, त्यों तूं रघुवरबाल ।
खवान जान आंखिनहरी, ज्यों प्रसूनकी माल।।§।04§

कवित्त ।

चारदश विदया दशकुण्डमैं न मातीं निज बोध मदमातीं एक एकैं रहीगूँदहै ।
कालीकविराज अनुशासन तुम्हारी आज पूरीपाक शासन गरेकी गरपूंदहै ।।
कौलपन सहित त्रिलोक जीतवेकी कल करित अकाशके अटापै गई कूँदहै ।
अनाचार सुनहै तुम्हारो चारआनन तब कैसे चार हाथन विचारौ कान मूँदहै।।§।05§

दोहा ।

बालीपर तारा गया, पर ताराके गेह ।
पददा राखतहै कहूँ, परदाराको नेह ।। §।06§
धरहु वेग धावहु सुभट, दावहु सकहि न जाय ।।
मृगशावककी पूँछ मैं पावक देहु लगाय ।।§।07§

कवित्त ।

पुच्छ पुर फेरत पताकनकौ गेर कटैलियाँ नोलियाँ नगिनकीं ।
कालीकवि नारिनकी नगर गुहारैं परी जहर पुहारैं फूतकारैं पन्नगिनकीं।।
वेग बढ़ लागी कोट कंचनकँगूरन सों जागीं जोत औरन करोर कनगिनकीं।।
फोर नभमंडल अखंडल,अटापै जाय दपटैं दराज लूह लपटैं अगिनकीं।।§।08§
फार कर वसन विदारत नतुंगनको मारकरडारे मनहारनके तार तार।।
कालीकवि वितर बिथार वर वारन के मुक्ता हजारनके जारन दये उजार।।
मार मद गलित कुमार सुकुमारिनकी पवनकुमारने लगाई वेसुमार मार ।।
भागीं पुरनरियाँ अँगरिया न देती पाँउ गारियाँ न देती चिनगारियाँ न
देती झार।।09§
तोने कीहूमरैं न तूठैं न कौन कौने गिरीं कूँ कहूँ पावतीं न गूँजें दीह दुरकी।

कालीकवि कूजन कहै कौं शीशफूलन की अलकैं धुरीलीं बाहु मूलनपै हुरकीं।।
मोरैंसी कुहारती धुँआकी धूम धूधुंर मैं धारैं अँसुवानकीं न्यारैं बार हुरकीं ।।
राई हरदवारैं जैन आई घर दुवारैं ते फिरैं परद्वारैं परद्वारैं लंकपुरकीं ।।।।10।
सागरको पंक है न अंक है कुरंगहूको नाहिनै कलंक बंकहूकीं मलिनाई हैं ।।
कालीकवि जाहिर कापद इंदु आनन पर तेरी पुष्प जारनकीं झारनकीं छाईहैं।।
मोतिनके हार तीं हजारन दिखातीं तौब तारनकीं अवलीं अकाश मैन छाईहैं।।
लंक चिलगैयाँ देख किरन जरैयाँ देख लैयाँ देख रैनकीं तरैयाँ भर आई है ।।।।11।

दोहा ।

निशिचर सकल संशककर, या विधि लंक जराय ।।
अति अपांक जलसिंधु मैं, कूदपरो कपिराय ।।।।12।

कवित्त ।

वारिधि मैं बोरकै हिलौरकै बुझाई पूँछ तीरे जल खोरकै बितायो श्रम शूलहै ।।
आयो पास जानकीके पायो चारु चूड़ामणि धायो वेग रामको दिखायो सुखमूल है।।
कालीकवि राघव निहार कह्यौ बार बार वेणी नागिनीको जो मणीक सगतलहै।।
काल कवि राघव निहार कह्यौ बार बार वेणी नागिनीको जो मणीकेसगतल है।।
फुरत फुलिंगसो सनेहके दियाको प्राणपालन पियाको कासियाको शीशफूलहै ।।।।13।

दोहा ।

विहँसत अनमोले वचन, बोले राम उदार ।
समाचार अरि नगरके, वर्णहु पवनकुमार ।।।।14।

हनुमान्–कवित्त ।

कोट कोट कोटनके कनक कँगूरनपै कल कलधौतनके कलश रसाला हैं ।।
कालीकवि तुंग दर महल बलंदन पै पवन तरंगिन पताकनकी माला हैं ।।
पुंज पारिजातनके जात न गिनाये जहाँ अगर सुगंधके मचत मचाला हैं ।।
चौक चाँदनी है चारु चंद्रक चुनी हैं चारु चन्द्रवदनी हैं चन्द्रिका हैं चन्द्रशाला हैं।।15।

दोहा ।

फूले जहँ परिखानके, कमल चहूँ दिशि घेर ।
घेर रहे जनु नारके, नारिन के मुखफेर ।।६।।१६

कवित्व ।

टूटेहार तारनतैं मुक्ताकलारनतैं गनविस्तारनतैं नग छुमकानके ।।
कालीकवि रचित सुरंग दगरानतैं वलय विभागनतैं विगलितपानके ।।
गति छुक क्षारनतैं तिलक लिलारनतैं स्वरन लितारन तैं पद रमितानके।।
उठत प्रभात लख रातके निशानै जहँ गमन दिशानै जात जानै वनितानके।।१।।१७।

दोहा ।

चुंबन आलिंगन सुरत, युवा युवा प्रणठान ।।
हार जीत फल एकपै, चाहत जीत सुजान ।।१।।१८।

कवित्व ।

सुमन सुगंध विन पवन न देखौ जहाँ भवन न देखौ जहाँ विन धनबागकौ ।
कालीकवि तालविन मुरज न देखौ जहाँ उरज न देखौ जहाँ बिन नखदागकौ।।
सूनो पीक लीकनते पलक न देखौ जहाँ अलक न देखौ बिन तिलक सुहागको।।
चन्दतै न देखौ छबि छीन जनाओ जहाँ इन्द्रतैं न देखौ कमकरम अभागको ।।१।।१९।

दोहा ।

होत न मंदिर मणिनके, परम प्रकाशनरात ।
केवल दिनकर किरण जहँ, कमल फुलावन जात।।१।।२०।

कवित्व ।

प्रिय परिरंभन ते ललक न और कछु कलक न और कछु परतियमानतैं ।।
कालीकवि उमर न और तरुणापनतैं तप न जहाँ है और मनमथ बानतैं।।

रानी विभीषणको सरवा तुम्हारे पाय परस तुम्हारे पाँय मारी परीभई।।27।।

लछमण-कवित्त ।

बुद्धि बलसागरके विशद सुधाको सार सद उपकार सुगरीवसुखदेनकी ।।
कालीकवि द्रोणगिरि धारण अपार भार वर उपकार चारु मर्दनसैनको।।
व्योमपथ धावनहै पावन पवनपूत मन उपार धार लावन सुखैनको ।।
कारणउदार अवदार रघुनायकको आसरदार सरदारकपि सैनको ।।27।।

सुग्रीव-कवित्त ।

विपति संपदाहैं कै हराहैं सिंधु संगर कीं गरुई गदाहैं कैर वधन विधान कीं।
कालीकवि दीननकी देनअभलाषा जे ति शाखाहिं सुहाई देव तरु सुबतानकीं।।
रतन निकाकीं ऊन उन्नत [illegible] कै शिखर शिलाहैं मेरु मंदर महानकीं।।
वज्रभुजाहै सुरतीन तिभुजाहैं राम कामकीं भुजाहैं कै भुजाहैं हनुमानकीं ।।29।।

जामवंत-कवित्त ।

अजर अमानी सैन पुंज कुलवानी देव दुर्दिन दिवानी [illegible] मेलैना ।।
कालीकवि भानी वीर [illegible] वज्र बल विग्यानी मेरु ऊपर उठैना।।
मेरे देखतेहीं दियो [illegible] उन्हानी बलि देखियो सुनेरै कहूँ साथन हलैना।।
अंजनी सलोनोहै तुम्हारो वीर छौनो अब रोको जाहि कौनो जो अन्होनी
होन हलैना ।।30।।

अंगद-कवित्त ।

करन अंगद रामचंद अरविंद पद रज मकरंदको मालिंद अवधूतहैं ।।
कालीकवि वंदनीय राजन अमंदवृंद बंदर बलंदको बुलंद पुरहूतहै ।।
बलजलसिंधु बालिबंधु रणसिंधुरको धर्मधुरंधरको धन मजबूत है।।
वीरनको वीर मीर अमर अमीरनको विपत विदीरन समीरन सपूत है।।31।।

स्वर्गपुरजीना है करीना राज संपत को भूषण नवीना भारती के कंठसूतको ।।
कालिकवि काव्यरस रंगत रगीना ताके मीनापै नगीना यह कवि करूतत को ।।
गोदकर करणसुधा है हरि भक्तन को बोध कर पंडित समूह पुरहूतको ।।
पुंज कविताको जाहि मंजुकविताको कुंज कलपलताको जो पताको पैनूपूतको ।।१३२।।

दोहा ।

उनइससे उनचासमें, सुकविनको सुखपंथ ।
प्रगट भयो हनुमंतको, सुपक्षपताका ग्रंथ ।।१३३।।
पंडित परकीरति विमुख, धन मद विकल नरेश ।।
सो कविता रसको रसिक धन्य पुरुष किहि देश ।।१३४।।
जे मारे कुकवीनके, ते म्हारे वश नाहिं ।।
हुचकारे कारे हिरण, क्यों पुचकारे जाहिं ।।१३५।।

इति श्रीमत्कालीदत्तकविनागरकृता हनु-
मत्पताकेयं पूर्णा ।।

कवि पं० कालीदत्त नागर कृत

गङ्गा गुण - मंजरी

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

अथ श्री गङ्गा गुण मंजरी लिख्यते

॥ दोहा ॥

हरन तीन हूँ ताप को करन दोष दुख भंग ।
कलि के कलुष नसावनी, विश्व पावनी गङ्ग ॥

कवित्त

मौतिन की माल सौ मराल सौ मुनी मन सौ,
मुकुर मनी सौ मालती के मंजु मुद सौ ।
काली कवि शरद सुधा सौ शारदा सौ शुद्ध,
शिव सौ शिवा सौ सूत संदल समुद सौ ॥
जाग जगती पै रहो जान्हवी तुम्हारौ जस,
अमल अबीर छीर फैन बुद - बुद सौ ।
कन्द सौ कलिन्दी की कली सौ कंज कंदल सौ,
कम्बु सौ कुमोदिन सौ कुन्द सौ कुमुद सौ ॥

कवित्त

बहरै अम्बर के ओर छुट अम्बर बाँ,

कम्बर लौं लटत लपेटत उड़ैं उलग ।

काली कवि विभ्रम गति शंभु नट नागर के,

आगर उजागर जे नाटक नवीले रंग।।

छहरैं छरीलीं छाम किरनैं कलानिधि की,

फहरैं करैं वे भौंर भहरैं भरी उमंग ।।

फहरैं फनीले नाग लहरैं जटा लौं घोर,

घहरैं घटा लौं तैहिं लहरै तिहारी गंग।।{2}

धारा धार छींटन के छाविन के लेत,

छोरन छराके लेत पवन फरारा के ।

काली कवि छवि छटा की छोर छमर मैं,

खिल खिलात खेलत समूह सुर दारा के ।।

शंकर जटान तैं छटान छू छपाकर की,

उचट चटान पै परैं पुंज पारा के ।

तारा से तिरकत रारा लै हजारा,

फुव्वारा बाँधि छूटत गंग धारा के ।।{3}

चपला की चैलीं सौं काम कीं सहेलीं सीं,

अति अलबेलीं हैं गतिन मराला सौं ।

चन्द्र सी चमेली सी चामी कर बेली सी,

निपट नवेलीं जे ज्यौं जोत जाला सीं ।।

काली कवि आला सी चपक रसाला सीं,

बीरन अन्हातीं गगतीरन बिसाला सीं।।

दैयन की बाला फिरैं फूलीं फल माला सीं,

गाला सीं गहब गुलाब गुल्लाला सीं ।।{4}

कवित्त

चारु चल चन्द्रक सौं चमक चुरी पै जाहिं,

दुर दुलरी पै जाहिं दमक दुआरीं जे ।

काली कवि कंकन के कनक कंगूरन पर,

मिल मुकतान होहिं रतन रवारीं जे ।।

बिपुल नितम्बन तैं सिमट समैंट पट,

निपट लरी लौं जाहि लंकन लफारी जे।

देव दुलहीन के अमोल कुच मंडल पर,

करहि कलोल लोल लहरैं तिहारीं जे ।।§5§

मुकता पुंज्जन तैं मुकत अभंग भई,

अवली मतंगत की भृंग भहिरैंनी है ।

काली कवि तुंगन तरंगन के संगत री,

मृग मद रंगन कुरंगन की सैनी है ।।

कोमल से करन मनीले मंजु कगन तैं,

तौलगै भुजगनहूँ पार कियो बैनी है।

जा लौं जल पात मैं दिखात जात गोरे गात,

हाथ दै उरोजन नहात मृगनैनी है ।।§6§

भौंहे भामिनी की कामकर की कमानैं भई,

तानै भई मधुर अलानै कोकलान के ।

काली कवि चालैं मंजु मानस मरालै भई,

तेरी गैंग लागत तरंग तन तान के ।।

केश हृषीकेश भये उरज महेश भये,

शेष भये सकल सुहार मुकतान के ।

कारे भये कन्द मुखचन्द उज्यारे भये,

तारे भये मुख के सितारे आसमान के ।।§7§

कवित्त

आँठन कौ राग आँठ माहतैं न छूटौ ओर,

बाह तैं न छूटौ दाग वैनी की विलग कौ ।

काली कवि जाकी जार जीवतै न छूटी गार,

ग्रीव तै न छूटौ हार नागरी के नग कौ ।।

केसर कौ रंग अंग तै न छूटौ गंग,

तारबौ तुम्हारौ मैं न जानौ कौन ढग कौ ।

उर कौ न आल छूटौ जावक न भाल छूटौ,

रत कौ न ख्याल छूटौ जाल छूटौ जग कौ ।।§8§

दाखन चढ़ाइ लागौ चाखन सुधा कौ स्वाद,

पांखन चढ़ाय भयौ आंखन अगानी कौ ।

काली कवि दीपन चढ़ाय दीप दीपन मैं,

दीपत कियौ ही जस देव रजधानी कौ ।।

कैसी देख बौरी भई पारकीं ठगौरी तोहि,

छौरी जन्हु मुनि की जग लौ सम अयानीकौ ।।

गंधन चढ़ाय लीन्हौ नन्दन बिहार बन,

चन्दन चढ़ाय कै अनन्द इन्द रानी कौ ।।§9§

काली मुक्त मालीं वेतमाली कुन्त लाली कर,

गालिन उसालीं पन्न गालिन के संग की ।।

काली कवि अश्रु जल बिन्दुन अदेखा भई,

रेखा चित्र लेखा जे कुरंग मद पंक की ।।

गंग जे तुम्हारे तीर बैस कवि योगी तरे,

ते अब सुहागी भये पाय बद्ध लंक की ।।

रैन दिन रंभा अंक अधरन पउतीं न,

सुधरन पावतीं न पाटीं परजंक कीं ।।§10§

कवित्त

गंग तुम तारो एक पातिक प्रभा कौ पुंज,

तारे पुन्य पुंज की न गाथीं कहीं जाती हैं ।

कालीकवि आन सुर लै चले विमान जाहि,

विलखे विभाकर की विभव बिलासीं है ।।

ठाढ़ी नेह बाढ़ी गर्ज गाढ़ी गेह देह लीन,

काढ़ी चित्र कैसीं जे उमेह उकलातीं हैं ।

पेखने कौ प्रेम पद पंकज परेखवे कौ,

देखने कौ देवन की ललना ललातीं हैं ।।१।।

जिनके द्रग दरस दिनेस चित चाहौ करे,

जिनके तर सकत न हेर हरि हर हैं ।

जिनके जग फिरत मयक मुख देखने कौ,

गिर हैं ते अंक में कलंक कौ न डर हैं ।।

रस रसना पै गयो गग तव नीर जाहि,

काली कवि ताहि सुख एते अनुसर हैं ।

दारा दुःख मानतीं जे इन्द्र के कीए कौ फल,

जान कै जिये कौ ते हिये कौ हार कर हैं ।।१।२।

पातक अमान करे कबहूं न दान तिहि,

पान करे किनका तिहारी रैन कान के ।

अमित अभग सुन गंग महरौनी अब,

बरन सकै को सुख सुषमा निधान के ।।

काली कवि ताहि निशि वासर झलावै करे,

साखा सुर भामिनी न भाई तीं सुजान के ।

हार डार डोरे करे अंकन हिडोरे करे,

डोरे करे अंचल झकोरे सुजान के ।।१।३।

कवित्त

आवत विलेख यदु वृकाश खगेशान पर,

निज पति वेष लेहु लख लाखौरी ।

काली कवि कोट पट पातक हरी कौ जिन,

अमर तरी की लहरी कौ नीर चाखौरी ।

प्रगट दिखात सब हर से हरी से कहूँ,

बदल परैगे तौ भरैगो कौन साखौरी ।।

सीख लै हमारी ये उमा री औ रमा री,

या पुरारी औ मुरारी कै पिचकारी डार राखौरी ।।4।।

बासर अभंग गङ्ग तरल तरङ्ग लख,

कणिका प्रकास बास गणिका तरण कौ ।

कीन्हौं रस भीनौ कवि काली तिन लीन्हौं,

तहाँ दिवस कुहूरत महूरत मरण कौ ।।

वैनतेय विहग बिहारी चक्रधारी सवै,

पतन निहारी सौरि सरबस हरण कौ ।।

कमला विचारी कौन जानै कैसे कौसौ,

आज हृदय न हो तो चिन्ह भृगु के चरण कौ ।।।15।

जैहैं लोक लोकन बिलोकन बिनोद बूहे,

झोकन हलोकन के सोकन सनाय हैं ।

ताइहैं त्रियाली हो त्रिकाली बैर साली कवि,

काली ये प्रवास ही क बासर गनाय हैं ।।

चलाकन
चाकुकोचलाकन कौं भूंख भाँख,

हाँक हाँक राहन मैं प्रभुता जनाय हैं ।

गङ्ग तट पाहन पै देख नाग नाहन कौं,

नाहन कमेरा तोहि बाहन बनाय हैं ।।।16।

कवित्त

पार तरवे कौ इकबार भर भार बैठे,

पाप मग टोहिन बटोहिन के झुड हैं ।

काली कवि भ्रमर भरौटतैं ग्वारिन की,

कगर करौटतैं गये ते गड़ बूड़ है ।।

सुरसरि तानै किये शंकर समानैं सब,

देवतादि मानै धबरानै रहे घूड़ हैं ।।

तानै परमारथ प्रहार के निसानै देख,

जात पहिचानै जे पुरानैं चन्द्र चूड़ हैं ।।§।7§

अरे मतिमन्द कलिकन्द के परौ तौ फन्द,

राखन दुवाय जन्म लाखन बहाउ तौ ।

काली कवि भाल लाल लोचन विशाल जाक,

पालन की गाल हाल कों तुहि गहाउ तौ ।।

पाउ तो कहाते कूबराज पै विराज आज,

गङ्गाजल मैं जो एक पल न नहाउ तौ ।

लेखर्धंश देख जब पूजन विशेश्वर तौ,

रे हर कहाँ ते चन्द्रशेखर कहाउ तौ ।।§।8§

देती हौ लगाय तुम जनम कलंक शिर,

अगिन दगाय भाग भवन अनैठतीं ।

काली कवि काल कूट घूँट की घुटी दै फेर,

गांठ तै गरीबन के अम्बर न ऐंठती।।

जाई जन्ह मुनि की प्रिया हौ पुण्यसागर की,

कुमति कहाहै जौन कान्ह कुल तैठतीं ।

र लग आवत छुआवत शरीर नैक,

मुहई लगावत मुड़ी पै चढ़ बैठतीं।।§।9§

कवित्त

मान सनमानन सै बैठहै सिंघानन मैं,

पाधन सैं पदवी पुरन्दर की ठेल है ।

हूहै देवतान की समान मै महानभाव,

आन अम्बुंजासन की आसन पछेल हैं ।।

काली कवि अैसे पद पायहै विशेष जोपै,

गंग तीर एक रेणुका कौं सुखमेल है ।

पापन कौं पेल है पहेल है सरापन कौं,

आनद सकेल है रमा की गोद खेल है ।।§20§

भ्रमत फिरैगो देख निर्झर दरीन बीच,

पथि कंकरीन बीच शिखर उतंग मैं ।

वन्य फल खैहैरे अधन्य मर जैहै कहूँ,

तैहैं कवि काली शीत आतप सअंग मैं ।।

समय न पैहै फेर तकत कहा हैं अब,

कूंद परत पद फलंगी मार गंग मैं ।

छांड गिर कन्दर वनिन्दर गुहान आन,

खेलत न बन्दकर पुरन्दर उछंग मैं ।।§21§

त्रिदशा त्रिंत्रिस कोट जय जय करत धुनि,

निगुणी निसुर शिर सुमन झरत हैं ।

मैंना मंजु घोषिका तिलोत्तमा सुकेसी आदि,

किंजन कुबेर किकरत्व सिधरत हैं ।।

काली कवि अैसे पद पावत सुगंग तब,

तपन सुजाके अर्ण शीकर परत हैं ।

पासनान मर्दत पुलोम जासु पासनान,

ठाढ़े पाकसासना सुलासना करत हैं ।।§22§

कवित्त

मुदित मनोज मणि मुकुर सिताब लीन्है,

अतर गुलाब आब अमर अमान लै ।

काली कवि तैसरी न गज्क गिजान सज,

फिरत सुरेशहू सुराहिन सुरान लै।।

गङ्‌ सुव दासन कौ कनक छरीसी खरी,

रहत पुरन्दरी परी हूँ पीकदान लै।

चौंरी लिये चन्द औ गुविन्द हू गिलौरी लियैं,

गौरी लिये महादेव गाँधी गजरान लै।।{23}

तन्त्री तुवरादि बादय सुरानन जेबी बधी,

शोभा नृत्य मण्डल की हूर हलकन तै ।

वृन्द वृन्दारका न घद्द सघद्द तन,

गान गन्धर्व सर्व लोभ ललकन तैं ।।

काली कवि सकल सुधर्मा इम सोभियत,

तदिप सभक्त हीं लगाई पलकन तै ।

उतर सिंहासन तैं गङ्‌ पथ गामी के,

पद की झराई रज इन्द्र अलकन तैं ।।{24}

कवित्त

कोउ चार पापी महा गङ्ग तट त्यागे प्राण,

बाकी ना बिलम्ब एक इन्द्र पद ले रही ।

एक भयो शम्भु एक आन अम्बुनाई भयो,

एक ब्रह्म आसन पर आनद हितै रहौ ।।

कालीकवि देख यह महिमा महान तेरी,

भूल भ्रम भौरौ इन्द्र शम्भु हर है रही ।

चोरसौ चपौसौ चुपकौसौ चिमकाई साध,

चौंक चक्यानौ चतुरानन चितै रहौ ।।§25§

धूलि तन धूसरित दुगुन दुकूल मूल,

सघन सकूल ही मैं अवन अरौ भयो ।

काली कवि संकुलित कृमिन अपार एक,

पार पै परौ तौ मार कब कौ तरौ भयो ।।

तासु गति जान चतुरानन उचारौ मुख,

चारतै विचारौं मन ब्रह्म को ढरौ भयो ।

जौलौं कहो जिष्णु तौलौं विष्णु सौ दिखानौ जौ लौं,

विष्णु कहौ चाहौ तौलौं हरसौं हरौ भयो ।।§26§

परौ एक पापी शव दुधर धरा की संधि,

जाके बन्द बन्द निन्द गंध बगरत हैं ।

काली कवि श्वैंच खान डारौ गंग तीर ताहि,

पाये दिव्य अंग जे अनंग निदरत है ।।

आये निज लोकन लिवाइवे कौ बाहन लै,

कर पद केवा गहि गहि झगरत है ।

धर धर भुजान आन देव समुझावैं तऊ,

हर हर विरंचि आज लर लर परत है ।।§27§

कवित्त

गङ्ग नीर तेरे जिन कीन्है जलपान ते तो,

पापिन के वृन्द इन्द्र आसन रचे फिरै ।

एकन तैं एक एक एकन तैं रार करैं,

लैबे कह राज जाँम जोरन जो फिरैं ।।

काली कवि ऐसे पति अमित अनेक सुन,

सुनकै सची के लोल लोचन ल्यौ फिरैं ।

सगरे विमानत मैं सिगरे सुरेश आज,

सगरे पुरन्दर के सगरे म्यो फिरैं ।। {28}

औसौ इक पातकी बड़ौ तो ब्रह्म घातकी,

न सेवा पितु मात की विवादन विरत हैं ।

कोपन कपोतौ छल छापन छपोतौ तीन,

तापन तपौ तौ रहौ पापन पिरत हैं ।।

काली कवि तानै गङ्ग तेरौ जलपान कियौ,

तातै पद एतै पाय देवन फिरत हैं ।।

ताहि इन्द्र राइत की साइत सुधाइवे कौं,

वपुरो विरँचि आज पकरौ फिरत है ।। {29}

धेनु द्विज घातकी सुवरम सुघातकी,

ता पातकी की कोऊ गति कैसे कै बरन है ।

काली कवि एहे रिषि जन्ह तन जाता तिहि,

तेरौ पय पान कियौ पातक हरन है ।।

ईस सीस दावौं उमा बीजनी डुलावै,

उर कन्त कमला कौ सहरावत करन है ।

चाँप चाँप सुगलान चाहतू भुजान गहि,

चतुर चतुरानन सुचापत चरन है ।। {30}

कवित्त

औगुन के ईस ईस पदवी सिधारे औ,

कलंक के कुबेर ते कुबेरता गहत है ।

दोषन के ब्रह्म ब्रह्मपद पै पधारैं आन,

पापिन के इन्द्र इन्द्र आसन लहत हैं।।

काली कवि ऐसे अति कौतुक अपार सब,

देखत बनत न बनत कहत हैं ।

छक छक अचम्भन मैं हरि हरि विरंच आदि,

तक तक तिहारे खेल जक जक रहत हैं ।। §31§

छूटी ब्रह्म भाजन तै जब अविलंब अम्ब,

सन कै धुकार धुनि अचल सचलते ।

कठिन कुलाहल हलाहल परौ तौ भूमि,

जीव जल थल के सब अखल बखलते ।।

काली कवि ताही समै जुल्म जटा हलाइ,

गङ्ग के प्रवाह भूत नाह जौ न झिलते ।

छौनी के छांह के न केवू नाग नाह के,

न कच्छप बराह के ढुढूँढे हाड़ मिलते ।। §32§

जा दिन तैं गङ्ग ब्रह्मलोक से सिधाई तू,

ता दिन तै तेरही त्रिलोक तेज तूखौ सौ ।

काल ते अभूतन कौ बली यमदूतन कौ,

सुनत सनाक रंग उड़ गयौ भभूखौ सौ ।।

काली कवि बाचहू बनाइकैं विचित्र चित्र,

गुप्तहू विचारे कौ दिखात रूख रूखौं सौ ।।

पूखौसौ सोचमैं विदूखौ सौ बिराजै सब,

दूखौसौ समाज जमराज मुख सूखौसौ ।।§33§

कवित्त

खान की कहे को बात पानहूँ न पान कियौ,

पान की न दावी बिरी दसन गलेजे मैं ।

काली कवि बैन बैन नैन मैं भरेहैं नीर,

रैन मैन चैन है न चैन सुख सेजे मैं ।।

श्रवण-सुनौहै गंग जब ते तुम्हारी नाम,

तब तैं पिराई मुख रंग रुख रेजे मैं ।

सकल समाज लोक तरन परी है अब

तरन परी है जमराज के करेजे मैं ।।§34§

बोलन न बोल है न डोलत न डोल है,

न खोलत न खोल है द्रुमान जल जल है ।

जोबन छयौहै रंग बदल रहौ है गल,

गदन गहौ है भयौ गातन सिथिल है ।।

काली कवि ज्यौंहीं गंग रावरी अवाई सुनी,

त्यौंहीं जमराजै आज नेकहूँ न कल है ।

सेद तलतल है तन होत हलहल है,

न चैन पल पल है चित अखल खल हैं ।।§35§

मेला मेल मेला के अलान की सुहेला झेल,

पैला पेल पुण्य की पताक फहरी हती ।

हार हीर हीरन पै देहि चीर चीरन पै,

गंगा तीर तीरन पै भीरन भरी हती।।

काली कवि पापिन के पातक नसावन कौं,

पावन की परम महूरत धरी हती ।

प्रबल प्रभाकर के लालहूँ बिचारे अरू,

कालहू बिचारे काल कल न परी हती ।।§36§

कवित्त

जा दिन तैं जमत गंग तरल तरंग आई,

ता दिन तैं शोक चित्रगुप्त हूँ विचारै मैं ।

सूनै डरे तखतन पर दफ्तर बिथूनै डरहैं,

बैठका बिहूनै डरे भौन बिनतारै मैं ।।

काली कवि पापिन सुरापिन के नाउ येक,

रोमहू न दूढै मिलै नर्कन के नारै मैं ।

रंक से विचारै जमदूत फिरै मारे डर,

अंक से बिआत जमराज के दुआरे मैं ।।{37}

सूत्रि

सूपनी निज लोक देख गंग महिमाई येख,

उर मैं विशेष लेख लेह की ववारी दै ।

गंगाधर जू पै गयौ गंग की फिरादै,

महादेव की सभा मैं लगौ बोलन गशारी है ।।

काली कवि कौन रे कहाकौ छल आयौ कहाँ,

साथ लैं भगौटा उठे रुद्रगण गारी है दै ।

ऐसौ जमराज कौ निरादर निहार हंसे,

देव सब तारी दै अदेव किकारी दै ।।{38}

आवत न भूलहू हमारे लोक कोऊ औ,

न कोऊ कहूँ पापी मम दूतन डरत है ।

ऐसे कहि करत बिलापन अनेक आप,

तौ दुख तुम्हारे ही निधारैं निवरत है ।।

काली कवि त्राहि त्राहि कर कर पुकारत है,

यूँ जमराज निज नाम उचरत हं ।

गङ्गा महरानी होत मरजी कहा है द्वार,

गरजी गरीब वह अरजी करत है ।।{39}

कवित्त

संग सुख सेजन मै मैन की मजेजन मैं,

कामानन क जनमै कौतिक किला गये ।

अम्बु अलि केलिन मैं नागरी नवेलिन मैं,

कुंज कलि केलिन मैं खेलन खिला गये ।।

काली कवि कासमीर कदम कलेलन मैं,

हेलन हिलाय फेर मेलन मिला गये ।

परम उमंगन मैं राखे पोष अंगन मैं,

गङ्ग•तरगन मैं पातक बिला गये ।।{40}

तब धौं हमे राखेते अंगन मैं पोष पोष,

अब्धौं निमोही नेह निबंक निते चले ।

सोये संग सेजन मैं साथही सजोये सुख,

ते हित बिलासी बन बन कैं किते चले ।।

काली कविहू हौ तुम गंग मैं सनाथ हमैं,

करकें अनाथ नाथ दूनो दुख दै चले ।

पापिन के रोय रोय पातक पुकारैं हाय,

होके हमारे हमे छोड़कें किते चले ।।{41}

आपुस मैं सोच सोच पापन से पाप कहैं,

वे दिन कहां हैं जब आनद भरे रहौ ।।

सुभग शरीरन पर साहिबी कीन्ह करीतीं अब,

गङ्ग• साहिबी मैं नितनित निदरे रहौ ।।

काली कवि तातैं जे कठोर दिन काटौ अब,

जहां तहां भले बुरे हालन डरे रहौ ।

भाई चित्रसारिन की बातन बिसारौ अब,

पामर बिचारिन की सारन परे रहौ ।।{42}

कवित्त

केहरि गिरासी सुन सूखत गयन्द जैसे,

सुन के पहलबा धुन चोर से चपत हैं ।

दीरघ दराज पछराज की अवाज सुना,

फिरत लवा से ठोर ठौरन छपत है ।।

काली कवि चौंक उठत कुरंग जैसे,

लौट लौट भागत न राहन रुपत हैं ।

हर हर दूरां तिहारी गँग धारा धुन,

थर थर सुनैते पाप थर थर कपत हैं ।।{43}

कहत हते तुमसौं हम डरत न काहू कौं,

हमसौं न कोऊ रहे सम्मत तजत हौ ।

सबकी अदीठ पीठ पाछै बदगोईं करीं,

आप अपनैही मुख लावर बजत हौ ।।

कालीकवि औरैं अरे पातक हनारे हौ,

सामुहे परेहौ तब साहस तजत हौ ।

लख लख गंग की धुरंधर धरानैजाल,

जैसे अकुलानै बिकलानै भजत हौ ।।{44}

मेरे संग तैने अति गरब गरूरीं करीं,

ते अब तिहारी बन बन के निकारौ गौ ।

आप अपघाती अरे सुन रे कुघाती,

अब तेरियै कजा की जे तिहारे गरे पारौगौं।।

काली कवि तीरथ चल भाग मत आये मग,

गजब गुनाही आज मीड मीड डारौ गौ ।

येरे अधमेरे दुखदायक घनेरे तोहि,

बकु•T की रेत मैं हु रेत मारौगौं ।।{45}

कवित्त

सुख न समात द्युति शशि सरमात उर,
मात कर देत पद पद्म प्रभात के ।
काली कवि किरन निशान जन मंडल में,
तन सुविलान जात जस अवदात के ।।
लहरी लहीन के सुचन्दन के चूर सम,
धवल कपूर सम परत पयाल के ।
मल मल जात सुख दल मल जात दुख,
मल मल जात सब कल मल गात के ।।(46)

पूछ तौ न कोऊ कहूं वेद औ पुरानन कौं,
देख ध्यान वानन कौ ध्यान दर जातौ री ।
होती विपरीत रीत अधिक अनीति नीति,
जहाँ तहाँ धर्म न अधर्म कर जातौ री ।।
काली कवि रह तौ जलोक मैं न ठौर कहूं,
पृथ्वी पै पाप कौ पराव पर जातौ री ।
जो पै जग बीच एक गङ्गा तू न होती तौ,
पापिन के थोक यमलोक भर जातौ री ।।(47)

लोभन लदे हैं फैल फंदन फदे हैं काम,
क्रोधन कदे हैं जे न देहैं पुण्य धारतीं ।
नागुन गरे मैं वेद भेद निदरे मैं मतैं,
दोषन दरे मैं नैक हिम्मत न हारतीं ।।
काली कवि ऐसे अप कीरति करैयन की,
ऊंच नीच ताई हूं न मन मैं विचारतीं ।
ताज है न और धरैं पापन के मौर जिनै,
नर्क हूं न ठौर तिन्है गङ्गा तुम तारतीं (48

कवित्त

जौहर के जामा कर कंकन कलंक ही के,

कजियत के कैटार कैट मैं सराहियत ते ।

क्रोध के कनौरा सिर मौरा धर्म छोड़ी के,

लोचन की पालकी मैं नाह नाहियत ते ।।

काली कवि कहत सुरेस के हमारे संग,

गंगा तुमैं मामले न ऐसे चाहियत ते ।

पाप पगरे मैं गुन गुंजन गरे मैं,

ते हमारे पगरे मैं झगरे मैं ब्याहियत ते ।।{49}

नगन विराजे आप तिलक कलंक सिर,

तिनके मगन जग पूजत पगन है ।

पंचम अधन्य जिहि अगम करायौ मौल,

सोई विश्व अन्तन मैं श्रजत जगन हैं ।।

काली कवि गंग तेरो प्रकट प्रभाकर सौ,

प्रथित प्रभाव जो त्रिकाल त्रिभुवन हैं ।

बिंदु जल पागीं तिहि पीठे गुवत लागी,

तुव जल अनुरागी बड़भागी मीन गन हैं।{50}

तेरे तीर जोगी कन्दमल फल भोगी होत,

विबुध सजोगी सौ सुधादि रस चाखैरी ।

शंभु की बिरंचि की भागीरथ की कीरति की,

सुली डरी जाहिर जहांन सब साखैरी ।

काली कवि तेरी निगमागम समागम हूँ,

सम्मत पुरान वेद ऐसो गुन भाखैरी ।।

कौन फल गंगाजल पान के करेतैं सुख,

रेत के परेतै ना परेत पद राखैरी ।।

कवित्त

झाँकत सी झूँठ मन मोखत सी मूढताई,
काँखत कुकर्म चरम चुगली चबात सी ।
रोवत से रोख रोष दसन किरोवत से,
सोवत से शोक पाप पगत पिरात सी ।।
काली कवि गँग पय पैठत हीं आज भाज,
बैठी दूर क्या की बरात पछितात सी ।
तापत सी ताप ताप तापत सी काँप रही,
हाँपत सी आपत अघात अकुलात सी ।। {52}

आँगन तैं आरता कुआरता किवारन तैं,
देहरी तैं दारद दुरादर दुबार तैं ।
कैतवता कोसतै मलीनताई मंजल तैं,
गुरकी है मत्सरता मारग मझार तैं ।।
काली कवि बाधित विहाल सी विरोध ताई,
अदली विदाई लैं पुकार सुन धारतै ।
विषय बयार तैं करार तै कृतघ्नताई,
उरता उतार तैं परानै पाप पारतै ।। {53}

मन की सुधा सी सुरतारक की तारकता,
चंद्रताई चँद्रका की चारु चमकार सी ।
मारतंड ताकी मार फलता पसूकर सी,
अरुणा अधीनताई झाऊ के झगार सी ।।
काई सी लेत छुड़काई देह आई लगी,
काली कवि कामताक ताई किय वारसी ।
छार जैसी छयता सुरारता मुरार जैसी,
पारि जैसी पारसता शिवता सिवहर सी ।। {54}

कवित्त

देवौ परिक्रमा कौ उमा के गरै बांधौ गयौ,

प्रभुता कौ देखौ लक्ष्मी के गरैं अरगयो ।

रिद्धि देवो सिद्धि देवो परमप्रसिद्धि देवो,

बुद्धि देवो वेस के गनेस गरैं गिर गयो ।।

काली कवि विदया दान देवो शारदा के गरै,

पालवौ हरी के गरैं अवस अभिर गयौ ।

दारवौ जगेस गरै मारवौ महेश गरै,

गङ्गा जग तारवौं तिहारे गरैं पर गयौं ।।{55}

विधि के कमंडल निवास कियौ जादिन तै,

तादिन तै होगयौं विरंचिविश्व कारी है ।

काली कवि भक्त मुक्त ईशा सीस धारी तोहि,

जगती मैं जगती सी कीरति तिहारी है ।।

चरन सरोज तै प्रवाह कियौ तातै कहूं,

सीस लौं न पूजौ पग पुजत मुरारी है ।

ऐसे जस जगत अनेक हौं कहाँ लौं कहौं,

जहाँ देखौ तहां गंग महिमा तिहारी {56}

गाई गंग तेरी जा महान महिमाई जान,

गातन बसाई तोहि तीनहुँ त्रिदस है ।

जाहिर जहान जा तिहारे नीर निरमल नै,

भागीरथ हू करी कीरत सरस है ।।

काली कवि तानै कियौ अमरपुरी कौ राज,

जानै कियौ तेरौ पय पावन परस है ।

सबकौं सुहानौ बर वेदन बखानौ यह,

किहि नैन जानौ गंग रावरौ सुजस है ।।{57}

कवित्त

कीजे कछु कुंजन की गुलम लता कौ तरु,
मुखित लिवैया जलप्रुत समीर कौ ।
काली कवि कृशित शरीर मुनि कीजै अति,
निकट बसैया वन परण कुटीर कौ ।।
कीजै चक्र वाक कै बलाक वर वारिज कै,
मरद सिवार गुल गदक गंभीर कौ ।
अधिक अधीर नीर नित कौ पिवैया कै,
कीजै मोहि निज पाहन प्रतीर कौ ।।{58}

{{ दोहा }}

यह गङ्गा गुण मंजरी, काम कल्प कौ कन्द ।
कवि कुल मन मधुकरन कौं, भरी मोद मकरन्द ।।

श्री काली दत्त कवि नागर कृत गङ्गा गुण मंजरीयं
इति ।

॥ श्री: ॥

छवि रत्नम्

रसिक यंत्रालय, कानपुर

संवत् 1941

-----जय माँ----

छवि - रत्नम्

{महाकवि पं० कालीदत्त नागर कृत}

{1} छकत जहाँ गोपीन के, भ्रमर विलोचन गुंज ।
मिलसत रहे मुकुंद की, हसन कुंद की कुंज ।।

{2} {वेणी-लक्षण}-

पावस रैन अमन्दिनी, मसि गलिन्दिनी माल ।
रवि नन्दिनी फनिंदनी, वेणी वरन विशाल ।।

{3} {उदाहरण}-

डरहु न कंज मुखी रही, मैं वेणी कब खोल ।
चम्प कलीन सुनै कहूँ, भोरी भ्रमर अडोल ।।

{4} छूटे केश-वर्णन-

नीतम तम से मोर से, भौर चोर से देस ।
मेघ माल जंबाल से, घन तमाल से केस ।।

{5} उदाहरण-

तो कच घन अंधियार मैं, भूलहिं कबहुँ अबूझ ।
नैनक दिसे परै न मग, सूरज हूँ कँह सूझ ।।

§6§ भाल-लक्षणम्-

रूप सरोवर की तटी, हाटक पटी विशाल ।
पर जंक सौं सुहाग की, अध मयंक सो भाल ।।

§7§ उदाहरण-

हौं ही सुधि घावत हुतै, तू न चले बलि बाल ।
है हे विरहिन [illegible]ससी, देख अध ससी भाल ।।

§8§ भ्रू-लक्षणम् -

नौकीली करवाल लौं, अधिक बंकीली हौंहि ।
छीलीं काम कमान सो, मनहुँ भरीलीं भौंहिं ।।

§9§ उदाहरण-

भौंहन ते भागत लई, रोदैं रोक कमान ।
सकुच समानी म्यान मैं, [illegible]रग सिरोही मान ।।

§10§ पलक-लक्षण-

पला रूप धन की तुला, प्रेम लता के पत्र ।
जे लोचन क्षितिपाल के, छजत छबीलि छ[illegible] ।।

§11§ उदाहरण-

पलकैहू न सुहात कछु, पलकैहू नहिं चैन ।
तेरी पलकैंहू लखै , पलकैहू लागैन ।।

§12§ बरुनी-लक्षण-

मोह निशा गरू धूम सी, मंत्र मोहनी मांझ ।
बरुनी जाल कलंक को, काल कुहू की सांझ ।।

§13§ उदाहरण-

रतिकन के उर अजिर में, करहिं कलान अंसख ।
तरुनी के पल्नी न ये, दृग खंजन के पंख ।।

§14§ नेत्र लक्षण -

चंचल मीन नवीन से, खजनीन से औन ।
कहियत अलि से कमल से, करसायल से नैन ।।

§

§15§ उदाहरण-

मन रंजन अंजन दियो, दृगन ठिठोन आज ।
खंजन कंज कुरंग की दीठि चलावन आज ।।

§16§ नासिका-लक्षण-

रूप राज कुल तिलक सी, तिल प्रसून की तौल ।
कीर किशोरी सी कहौ, सुकवि नासिका नौल ।।

§17§ उदाहरण-

निरखि नासिका नारि की, हात मनहुँ कर मींज ।
जानत हीरा की कनी, सुक अनार के बीज ।।

§18§ बेसर-वर्णन-

बदन सदन ते अनत कहूँ, जाय न हिये विचार ।
जनु ग छवि बंदुआ करी, नक नथ बेड़ी डार ।।

§19§ श्रवण-लक्षण-

श्री विलास के सुमन से, वय अयौन रस भौन
शब्द सदन के दीप से, हुरन सीप से श्रौन ।।

§20§ उदाहरण–

सारी अरकन झलक लखि, ललक रही मनरंक ।
अरून तरुनि के करन के, बसी करन ताटंक ।।

§21§
कपोल–लक्षण–

मखमल से मखतूल से, गुल गुलाब से गोल ।
दल मल कोमल कमल से, कहियत अमल कपोल ।।

§22§ उदाहरण–

नहिं मिलिंद अरविंद महं, भ्रमर बूंद ठहराय ।
यह कपोल रपटत इहां, द्रग पुतरिन के पांय ।।

§23§ तिल–वर्णन–

कै कपोल अनमोल तिलक, कै अलि कमल समेत ।
कै सुवर्ण कै पर्न मणि, नील वर्ण छवि देत ।।

§24§ अधर – वर्णन–

बिम्बाफल के अम्ब से, दल से अधर विशाल
कहियत बाल प्रबाल से, ललित लाल से लाल ।।

§25§ उदाहरण–

बाल कहा खोली अहं, अधर अमोली ज्योति ।
पीले परत प्रबाल री, लाल लालरी होति ।।

§26§ दशन–लक्षण–

शारद कुमुद से कुंद से, हीरन कैसे कोष ।
विकसे विशद अनार से, बरनहु दशन उदोष ।।

§27§ उदाहरण-

कुंद-कुंद लखि दसान द्युति, कुमुद कुमुद अवदात ।
मिल बैठत हू सूत में, हीर हार ह्वै जात ।।

§28§ स्मित-लक्षण-

प्रेम फंद सी चांदनी, चैत चंद सी गान ।
सुधा फंद सी कंद सी, मंद मधुर मुसकान ।।

§29§ उदाहरण-

आज लड़ैती लाल के ढिग बैठी मुसकात ।
जटक दुपरिया में रही, छिटक जुन्हैया रात ।।

§30§ वाणी-लक्षण-

कोकिल सी कलवीन, भरीमोद रस रंग ।
वाचा सुधा समुद्र की, कहियत सुमुल तरंग ।।

§31§ उदाहरण-

नव नागर मिठ बोलनी, बोली तनिक सुनाय ।
देत सुधा की कान में, शशिमी सी ढरकाय ।।

§32§ चिबुंक - लक्षण-

चिबुंक चारु मन की डिबी, शोभ सदन की सींव ।
निरखहु नेह निकेत की, निपट नवेली नींव ।।

§33§ उदाहरण-

वे न अवाहुर उर दबै, ना यमुना दह चाल ।
तलफत गोरी के परे, ठोड़ी गुड़ी क गुपाल ।।

—————— कवित्त ——————

§34§ गोदन विंद लक्षण-

तपन तनय तन तम तमी, मसि मणि नील समान ।
रस सिंगार अल सी कुसुम, अलि कलि बिंद बखान ।।

§35§ उदाहरण-

यो सर सावन चिबुक लग, गोदन विंद विनोद ।
लखत मनहुँ बैठी निशा चंद पिया के गोद ।।

§36§ सम्पूर्ण मुख-लक्षण-

मंजु मदन के मुकुट सौ, वरणहु बदन विचार ।
प्रफुलित नव अरविंद सौ, शारद चंद सो चार ।।

§37§ उदाहरण-

निष्कलंक जग होन हित, तो मुख भयो मयंक ।
कस्तूरी मिस देत क्यों, ऐरी ताहि कलंक ।।

§38§ कंठ-लक्षण-

पारावत के कंठ सो, कंबु सरिस कलवेष सुदेश
सुरन सुराही सो सदा शोभित सहित त्रिरेख ।।

§39§ उदाहरण-

यह जिय आवत देखि तन, कर गहि राखहु थाम ।
पीक लीक निगुरी परत, परस पातरे वाम ।।

§40§ कंठमाल वर्णन-

नवल मालती जाल के, छुव विशाल तट सूल ।
होत हाल के काल के, बाल माल के फूल ।।

कवित्त

§41§ भुज-मूल वर्णन-

सरतुल फल ते, भांभु ते, हेम पिंड सम तूल ।
भांई उतारे ते कहौं , प्रग भुजान के मूल ।।

§42§ उदाहरण-

गोल सुडोल सुहावनें, गोरे थोरे थूल ।
किहिं के चित न चेरे करैं, जे तेरे भुज मूल ।।

§43§ बाहु-लक्षण-

सौतन पन्नग नाह ते, बरनहुँ बाहु विशाल ।
ताका शोभा शालि के विस वल्लरी मृणाल ।।

§44§ उदाहरण-

भये न तो भुज ते मनहुँ, इन कायलिन मृणाल ।
ताप परे न मरे तऊ, उरझे कटंक जाल ।।

§45§ मणि बंध-वर्णन-

मदन दुहंगी, चौकसी, रति अरगनी अमोल ।
मृदुल मलाई सी कहीं, नवल कलाई गोल ।।

§46§ उदाहरण-

शोभा हित भूषण न यह, बन्धन दियो लगाय ।
लहपी को पहुंची बिना पहुंचा छुरक न जाय ।।

कवित्त

§47§ करतल-लक्षण-

पारजात के पात से, सुधर धरे जनु धोय
नवल कमल दल अमल से, करतल कोमल होय ।।

§48§ उदाहरण-

धोखे ही कहूँ छु गई, करन कंज दल कोर ।
रो वह चम्पक वरण के गढ़ियन परे दरोर ।।

§49§ अंगुली-लक्षण-

अरुण तरणि की किरण सी, चंपकली सो चार ।
सुरन सुराली सी कहैं, अंगुरी छवि कर तार ।।

§50§ उदाहरण-

नखवर सहित अंगुरीन की, यो लागी छवि छौन ।
मनहु ओस बुंदिया परी, चम्पक लिन की टौन ।।

§51§ कुच - लक्षण

कलभ कुंभ गिरि कलश कुच, श्री फल शंभु मंजीर ।
घट कंदुक मठ दुंदुभी, द्युति दाड़िम जंबीर ।।

§52§ उदाहरण-

कलभ कुंभ लिय कुच भये, अंकुश के भय भाग ।
भाग लिखी न मिटी तऊ, सहन परे नख दाग ।।

§53§ उदर लक्षण-

पोनी पैसो पान सो, अमल मुकल सो लील ।
थल सो पिय मन पथिक सो, उरवहु उदर अमोल।।

कवित्त

{54} उदाहरण–

मंजु कला खतूल हैं, मखमल कितिक मुलाम ।
उदर देख लागो कहन, मुख माखन को नाम ।।

{55} त्रिवेणी-लक्षण–

श्रेणी मदन महीप के, मंदिर की उनहार ।
मृग सुत ने नीको कहो, त्रिवली त्रिवेणी धार ।।

{56} उदाहरण –

प्रिय मन मुनि सेवत सदा, जाहि सुलभ गति जोई ।
ता मृग नैनी की त्रिवली, क्यों नत्रिवेणी होई ।।

{57} नाभि-लक्षण–

बापी सी सोहत बनीं, मुख राजीक नवीन ।
सुधा सरोवर सी सदा , कहियत नाभि नवीन ।।

{58} उदाहरण–

भ्रमत फिरे कुच गिरिन पै व्याकुल तृषित शरीर ।
नाभि सरोवर में मिलों, नैनन को मृग नीर ।।

{59} रोम राजी लक्षण–

रस सिंगार की बेल सी, जमुन लहर सी श्याम ।
मदन जाल सी बाल की, रोमावली ललाम ।।

{60} उदाहरण–

यों छवि छाजत बाल की, रोमावली विशाल
मदन बधिक मानहु रचो, मन मृग बंधन जाल ।।

कवित्त

§61§ कटि लक्षण-

केहर सी कर भारती, करभ कलानिधि रेख ।
कच कंचन कचती कहौं, कटि तट निपट अदेख ।।

§62§ उदाहरण-

जाय न छिपकी के लगत, लग रावरे कलंक ।
लफत लबोदर लौं नई, लरम लचीली लंक ।।

§63§ पार्श्व-लक्षण-

गाले से मखतूल के, दल मखमली हमेश ।
गाने से कलकेर के, पारस परग सुदेश ।।

§64§ उदाहरण-

पाले हूँ मैं लोयगी, नहिं गाले की चाह
परहै पिहलू पास मैं, जब गुपाल की बांह ।।

§65§ पृष्ट-लक्षण-

पट्टुली सी पुखराज सी, तैवह सुकचि सुडौल ।
पीठ सुभग हाटक पटी, कद कदली दल नौल ।।

§66§ उदाहरण-

थकी मनहु रत रंग की, कदली दल पर कोय ।
छुटी रत लूटी रह, नाग पघूटी सोय ।।

§67§ नितंब-लक्षण-

चामीकर के कुंभ से पुल से विपुल अलम्ब ।
तारक मद नद तुम्ब से, निरखहु नवल नितंब ।।

{68} उदाहरण-

तवहीं आवत तो न इत, कुच निहार सुकुमार ।
धरत गिनत ते पाय अब, नव नितम्ब के भार ।।

{69} जंघा-लक्षण-

कंचन तरु ते करभ ते, कलभ सुंड साम ।
कहियत रंभा खंभ ते, जंघा जुगल अलोम ।।

{70} उदाहरण -

सुनत मालती के मनहुँ, जघन सघन की बात ।
करी करत कुंडली, कदली, हूँ कपि जात ।।

{71} मुखा-लक्षण-

दायक रत बिलदान के, सुभग सुभायक पान ।
ओजक ओज मनोज के, कहियत मुद्र मुरवान ।।

{72} उदाहरण-

जब जानी गुर बान की, छबि न बखानी पाय ।
विनय करत कायल भई, पायल हू परि पाँय ।।

{73} गुल्फ-लक्षण-

थल से मन मधुकरन के, अति अमोल सुख टोल ।
गफ गहगहे गुलाब,से, गुल्फ गुलाबी गोल ।।

{74} उदाहरण-

फीके परत सिताब लखि, गोल गुल्फ की आब ।
सखि बहु भाँति प्रभात के, महकत गात गुलाब ।।

{75} ऐड़ी-लक्षण-

लखियत लाल प्रबाल सी, हंस पाल के ढंग ।
पालित पञ्च नरंग सी, ऐड़ी ललित सुरंग ।।

{76} उदाहरण-

लाल मालती मंजु की, कुंज गलिन में आय ।
नारि नई गे गुण भरी, ईगुर सो ढरकाय ।।

{77} चरण-लक्षण-

दल से अमल अशोक के, किसलय कल्प कुमार ।
अरुण बदन अरविन्द से, चरण चारु सुकुमार ।।

{78} उदाहरण-

जो हम होते विधि कहूँ, रचते अपने हाथ ।
तो वालि तेरे चरण से, तरू प्रबाल में पात ।।

{79} चरण-अंगुली-लक्षण-

पद्म कली से पेखियत, पद्म राग के रूप ।
पद्म पांखुरी सी कहौं, अंगुरी अधिक अनूप ।।

{80} उदाहरण-

होत अरुण अँगुरिन पर, नूपुर को झंकार ।
मानहु कंज कलीन पर, अली करै गुंजार ।।

{81} चरण-नख-लक्षण-

बीर बहोटी से अरुण जावक रंग अनूप ।
अति विशाल नख बाल के, लाल चुनी के रूप ।।

§82§ उदाहरण-

जावक तुमहि लगाय के, नरवन अरुणता हेतु ।
ये चंदन के लेप तें, चंदहि करयो सेत ।।

§83§ गति-लक्षण-

कल हंसन के वंस सी, राजहंस सी हाल ।
कहियत समद गयन्द सी, मंद मनोहर चाल ।।

§84§ उदाहरण-

वासर निवारन करन, वन वारन के वंस ।
मुक्ता फल धारण करत, सो गति धारण रंग ।।

§85§ देह द्युति-लक्षण-

कंज कोस गोरोचना, कैतिक केसार अंग ।
चामीकर चंपक लता, वरनहु बनिता अंग ।।

§86§ उदाहरण-

जान परत कज सी कछु, केसर लागी काय ।
ज्यों श्रम कर कुग दीजिए, त्यों श्रम उपजत जाय ।।

§87§ सर्वांग मूर्ति-लक्षण-

दीप शिखा चम्पक लता, स्वर्ण सलाका सार ।
रति रम्भा रामा रमा, सौदामा उनहार ।।

§88§ उदाहरण-

आज छकी छबि रूप के, लखहु छबीले लाल ।
छातन पर छमकत फिरत, कनक छरी सी बाल ।।

{४१} कवि काली छबि रत्न मैं, निज मति के अनुरूप ।
बरणा कहै बनितान के, नख सिख अंग स्वरूप ।।

----------0----------

नोट :- यह पुस्तक सन् 1894 में महाकवि काली के शिष्य उरई निवासी पं0 गंगाप्रसाद उपाध्याय द्वारा रसिक यंत्र लय मनोहरलाल मिश्र के प्रेस{कानपुर} में प्रकाशित हुई थी ।

परिशिष्ट - 3

सन्दर्भित ग्रन्थ सूची

(1) संस्कृत ग्रन्थ.

(2) हिन्दी ग्रन्थ.

(3) अंग्रेजी ग्रन्थ.

(4) पत्र पत्रिकायें.

संस्कृत ग्रन्थ

§1§ उत्तर रामचरित : भवभूति

§2§ काव्यालंकार : भामह

§3§ काव्यादर्श : दण्डी

§4§ काव्य प्रकाश : मम्मट

§5§ काव्यालंकार : रुद्रट

§6§ कादम्बरी : बाणभट्ट

§7§ कुमार संभव : कालिदास

§8§ गंगा लहरी : आचार्य जगन्नाथ

§9§ नाट्य शास्त्र : आचार्य भरत

§10§ नैषध चरित :

§11§ पदम पुराण : वेद व्यास

§12§ ब्रहम सूत्र : शंकराचार्य

§13§ ब्रहम विन्दु उपनिषद :

§14§ ब्रहम वैवर्त पुराण : वेद व्यास

§15§ वाल्मीकि रामायण : महर्षि वाल्मीकि

(16) मालविकाग्निमित्रम् : कालिदास

(17) महाभाष्य : पतंजलि

(18) मद्भागवत पुराण : वेद व्यास

(19) रघुवंश : कालिदास

(20) साहित्य दर्पण : आचार्य विश्वनाथ

(21) हलायुध कोश :

(22) हनुमन्नाटक :

हिन्दी ग्रन्थ

(1) अभिनव पालि पाठावली : सम्पादक-डॉ० राजकिशोर सिंह

(2) अपर्णा महाकाव्य : युगकवि रामस्वरूप खरे

(3) अर्चना : युगकवि रामस्वरूप खरे

(4) आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ० वार्ष्णेय

(5) आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ० श्री कृष्णलाल

(6) इतिहास प्रवेश : जयचन्द विद्यालंकार

{7} ऐतिहासिक भौतिकवाद : डा० केलने

{8} काव्य के रूप : गुलाबराय

{9} काव्य शास्त्र : डा० भगीरथ मिश्र

{10} काव्य रूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास : डा० शकुन्तला दुबे

{11} कांग्रेस का इतिहास. : डा० पट्टाभि सीतारमैया

{12} काव्य के उदात्त तत्व : डा० नगेन्द्र

{13} गोदान : प्रेमचन्द्र

{14} गंगा लहरी : पद्माकर

{15} गंगावतरण : जगन्नाथ दास रत्नाकर

{16} गंगा वाक्यावली : विद्यापति

{17} गंगा गुण मंजरी : कालीदत्त नागर

{18} घनानन्द और काव्य धारा : डा० मनोहर गौड़

{19} चन्देल और उनका राजत्व-काल : केशवचन्द्र मिश्र

{20} छन्द प्रभाकर : जगन्नाथ प्रसाद

{21} छविरत्नम : कालीदत्त नागर

{22} छान्द युग उपनिषद : ऋषि सनत्कुमार

(23) जय हनुमान : श्याम नारायण पाण्डेय

(24) जालौन जनपद के वर्तमान कवि : श्रीमती स्नेहलता श्रीवास्तव

(25) तत्व वैशारदी : वाचस्पति मिश्र

(26) धम्मपद : भगवान बुद्ध

(27) नायिका भेद : डॉ० प्रभुदयाल मीतल

(28) पदमावत : मलिक मुहम्मद जायसी

(29) पल्लव : सुमित्रानन्दन पन्त

(30) परिमल : सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला"

(31) पूजा के फूल : युगकवि राम स्वरूप खरे

(32) बिहारी सतसई : महाकवि बिहारी लाल

(33) बुन्देली लोक साहित्य : डॉ० रामस्वरूप श्रीवास्तव "स्नेही"

(34) बुन्देलखण्ड का इतिहास : गोरेलाल तिवारी

(35) बुन्देली भाषा का शास्त्रीय अध्ययन : डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल

(36) बुन्देली काव्य परम्परा : डॉ० बलभद्र तिवारी

(37) बुन्देली लोक काव्य : डॉ० बलभद्र तिवारी

(38) भारत भूमि और उसके निवासी

{39} भाषा विज्ञान : डॉ0 राम स्वरूप खरे

{40} भारत का भाषा सर्वेक्षण : डॉ0 ग्रियर्सन

{41} भारतीय नारी प्रतिरूपों का ऐतिहासिक सर्वेक्षण : डॉ0 रामस्वरूप खरे

{42} भारतीय काव्य शास्त्र : डॉ0 रामानन्द शर्मा

{43} भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास : सत्यकेतु विद्यालंकार

{44} मध्ययुगीन भारत :

{45} माध्यमिक कारिका : नागार्जुन

{46} मिश्रबन्धु विनोद : मिश्र बन्धु

{47} महाकाव्य का स्वरूप विकास : डॉ0 शंभूनाथ सिंह

{48} राष्ट्रीयता और समाजवाद: आचार्य नरेन्द्र देव

{49} रत्नाकर और उनका काव्य: उषा जायसवाल

{50} रामचरित मानस : गोस्वामी तुलसीदास

{51} ऋतु राजीव : कालीदत्त नागर

{52} रीतिकालीन काव्य की भूमिका तथा देव और उनकी कविता : डॉ0 नगेन्द्र

{53} विद्यापति पदावली : विद्यापति

{54} विनय पत्रिका : गोस्वामी तुलसीदास

{55} वाङ्मय विमर्श : आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

{56} शुद्ध कविता की खोज : रामधारीसिंह दिनकर

{57} संस्कृति के चार अध्याय : रामधारीसिंह सिं दिनकर

{58} संस्कृति का दार्शनिक विवेचन : डॉ0 देवराज

{59} साकेत में काव्य संस्कृति और दर्शन : डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना

{60} संस्कृत आलोचना : बलदेव उपाध्याय

{61} साहित्य शास्त्र का पारिभाषिक शब्द कोश : राजेन्द्र तिवारी

{62} साहित्यिक निबन्ध : डॉ0 शान्ति स्वरूप गुप्त

{63} साहित्यिक निबन्ध : प्रो0 विजयेन्द्र स्नातक

{64} हनुमत्पताका : कालीदत्त नागर

{65} हिन्दी भाषा का इतिहास : डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा

{66} हिन्दी भाषा का परिचयात्मक ज्ञान : डॉ0 रामस्वरूप खरे

⁅67⁆ हिन्दी साहित्य : सम्पा0, डॉ0 धीरेन्द्र एवं डॉ0 ब्रजेश्वर वर्मा

⁅68⁆ हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य : डॉ0 गोविन्दराम शर्मा

⁅69⁆ हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास : डॉ0 भागीरथ मिश्र

⁅70⁆ हिन्दी साहित्यकार पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव : डॉ0 सरनाम सिंह शर्मा

⁅71⁆ हिन्दी काव्य शैलियों का वर्गीकरण : डॉ0 हरदेव बाहरी

⁅72⁆ हिन्दी साहित्य कोश : सम्पा0 डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा

⁅73⁆ हिन्दी विश्वकोश : सम्पा0 नगेन्द्र नाथ वसु

⁅74⁆ हिन्दी के मध्यकालीन खण्डकाव्य : डॉ0 सियाराम तिवारी

⁅75⁆ हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ : डॉ0 जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल

⁅76⁆ छत्र प्रकाश : सम्पा0 श्यामसुन्दर दास

⁅77⁆ श्रृंखला की कड़ियाँ : महादेवी वर्मा

आँग्ल भाषीय ग्रन्थ

1. एनसाइक्लोपीडिया आफ ब्रिटानिका.

2. आर्केलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया.

3. एपिग्राफिका इण्डिया.

4. दि सब्लीमेंट, लाँजाइनस.

5. दि मेकिंग आफ लिटरेचर, स्काट जेम्स.

6. दि प्लेस आँफ दि थ्योरी आँफ सिविलाइजेशन, इन दि सोशियोलाजी आफ कल्चर, डान मार्टिण्डेल.

7. इण्डियन एन्टीक्वेरी.

8. इण्डिया एण्ड दि मारसिंग आफ एम्पायर, सर जार्ज डनवर्ट शील.

9. इण्डिया टुडे एण्ड टुमारो, रजनी पामदत्त.

10. फोक कल्चर एण्ड ओरल ट्रेडीशन, एस०एन०श्रीवास्तव.

11. मैन इन दि मार्डन एज, कार्ल यास्पर्स.

12. पोजीशन आँफ वीमैन इन हिन्दू सिविलाइजेशन अल्टेकर.

13. पोलटिक्स, अरिस्टोटल.

पत्र – पत्रिकायें

§1§	जागरण,	कानपुर, झाँसी.
§2§	नवनीत,	बम्बई
§3§	राष्ट्रभाषा सन्देश,	प्रयाग
§4§	विश्व भारती,	नई दिल्ली.
§5§	साहित्यकहिन्दुस्तान,	नई दिल्ली.
§6§	साहित्य परिचय,	नई दिल्ली.
§7§	सुकवि,	कानपुर,
§8§	स्वतन्त्र भारत,	लखनऊ
§9§	दैनिक मध्यदेश,	भोपाल.